CC-0. Agamnigam Digital Pre

553-B

डॉ॰ हरिमोहन

हिन्दी व्याकरण का पारिभाषिक कोश

अभिनव प्रकाशन, आगरा - 282002

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी-व्याकरण का पारिभाषिक कोश

[A GLOSSARY OF HINDI GRAMMAR]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी व्याकरण का पारिभाषिक कोश

डॉ० हरिमोहन, डी० लिट्०

हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा-विभाग,
गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर—गढ़वाल (उ० प्र०)

प्रकाशक

अभिनव प्रकाशन, आगरा-282002

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

● प्रकाशक
सुरेश चन्द्र गुप्ता
अभिनव प्रकाशन
14/256 मण्डी सईद खाँ
आगरा–282002

@ डॉ० हरिमोहन

5531-B

प्रथम संस्करण : जनवरी 1983, 1100 प्रतियाँ
मूल्य : चालीस रुपये मात्र

मुद्रक :
राकेश कम्पोजिंग हाउस;
नौबस्ता लोहामण्डी, आगरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूज्य पिता जी
श्री मुरलीधर जोशी जी
के चरणों में
सादर ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वक्तव्य

अनिवार्यतः प्रत्येक विज्ञान की अपनी एक तकनीकी शब्दावली होती है और विशेष पारिभाषिक शब्द-भण्डार भी। हिन्दी का व्याकरण-शास्त्र भी विज्ञान की कोटि का है। हिन्दी-व्याकरण की नामिकी, पारिभाषिकी तथा व्याकरणिक कोटियों के विभाजन, उप-विभाजन आदि पर कार्य करने की बहुत आवश्यकता है। इस कोश को तैयार करने के मूल में यही विचार-प्रेरणा रही है।

भाषा-शास्त्र और भाषा-विज्ञान के पारिभाषिक शब्द-कोश उपलब्ध हैं (राजेन्द्र द्विवेदी और डॉ० भोलानाथ तिवारी के कोश द्रष्टव्य हैं) लेकिन ये कोश हिन्दी-व्याकरण के पारिभाषिक कोश की अभिपूर्ति नहीं करते। निश्चय किया गया कि ऐसा पारिभाषिक कोश तैयार किया जाए, जिसमें हिन्दी-व्याकरण के पारिभाषिक शब्दों का संचयन, स्पष्टीकरण, भेद-उपभेद और नियम आदि दिये जायें। लगभग चार वर्षों के परिश्रम का यह परिणाम 'हिन्दी-व्याकरण का पारिभाषिक कोश' के रूप में पाठकों के हाथ में है।

इस कोश को तैयार करने में जिन विद्वानों की कृतियों का सहयोग लिया गया है, मैं उन सबका कृतज्ञ हूँ। विशेषतः पं० कामताप्रसाद गुरु, आचार्य किशोरीदास वाजपेयी और डॉ० बद्रीनाथ कपूर के व्याकरण ग्रन्थ; डॉ० अनन्त चौधरी, डॉ० कान्तिचन्द्र मिश्र तथा डॉ० केहरसिंह चौहान के व्याकरण-इतिहास विषयक शोध प्रबन्ध; महामहोपाध्याय काशीनाथ वासुदेव अभ्यंकर, श्री शान्ति प्रकाश जैन के संस्कृत-व्याकरण शब्दावली विषयक ग्रंथ, श्री राजेन्द्र द्विवेदी और डॉ० भोलानाथ तिवारी जी के भाषा-विज्ञान कोश मेरे इस कार्य के सम्बल रहे हैं।

हिन्दी-व्याकरण का यह परिभाषात्मक कोश हिन्दी में अपनी तरह का प्रथम प्रयास है, इसलिए इसमें प्रथम प्रयास जैसी दुर्बलताएँ, न्यूनताएँ और विसगतियाँ होंगी ही, जिसके लिए बहुत कुछ मेरी, कुछ प्रकाशक की सीमाएँ जिम्मेदार हैं। कोश तो कोई सम्पूर्ण नहीं होता। इस ज्ञान-यज्ञ में पाठकों की भी इतनी आहुति चाहिए कि वे मेरी त्रुटियों, कमियों, भूलों आदि की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट कर दें। मैं इसके लिए उनका आभार स्वीकार करूँगा।

अन्त में, इस कार्य के लिए मुझे मेरे जिन मित्रों से प्रेरणा, उत्साह, सहयोग और स्नेह मिला है, उनको धन्यवाद देना नहीं भूल सकता, लेकिन यहाँ उनके नाम दे देना उनके प्रति अन्याय होगा!

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी-व्याकरण के पारिभाषिक कोश को जल्दी छपवाने में स्वर्गीय लाला सत्यनारायण बंसल, प्रकाशक को नहीं भुलाया जा सकता, जिन्होंने इतने कम समय में इसे तैयार करा दिया, वह इस कोश को देखने से पूर्व ही संसार से चले गये, मैं उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

13-14 नवम्बर, 1982 —हरिमोहन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अ

अ—यह देव-नागरी वर्ण-माला का पहला अक्षर और पहला स्वर है। संस्कृत व्याकरण और भाषा-विज्ञान की दृष्टि से यह तीन प्रकार का होता है—(1) ह्रस्व (2) दीर्घ और (3) प्लुत, जिसके अठारह अवान्तर भेद हैं। उच्चारण की दृष्टि से यह अर्द्ध-विवृत, मिश्र स्वर है। भट्टोजि दीक्षित आदि संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण-स्थान कण्ठ, आभ्यान्तर प्रयत्न विवृत, अनुदात्त और स्वरित है। इसके उच्चारण में जीभ न बिलकुल पीछे रहती है, न बिलकुल आगे, उसका मध्य भाग थोड़ा-सा ऊपर उठता है। इसलिए डॉ० धीरेन्द्र वर्मा इसे 'अर्द्ध विवृत मध्य स्वर' मानते हैं। इसके उच्चारण में होंठ थोड़े से खुलते हैं।

व्यंजनों का उच्चारण करते समय उनके अन्त में इसका उच्चारण स्वतः ही हो जाता है। जब किसी व्यंजन का उच्चारण इसके बिना होता है, तो वह हलन्त कहलाता है और नहीं तो स-स्वर होता है।

इस ह्रस्व 'अ' के उच्चारण में एक मात्रा जितना समय लगता है। अव्यय के रूप में यह मुख्यतः पाँच अर्थ देता है—(1) प्रतिकूल या विपरीत, (2) रहित, विहीन या शून्य, (3) सामान्य आकार, रूप या स्थिति से भिन्न, (4) निषेध या वारण, (5) दूषित या बुरा। शब्दों से पहले लगकर इसका रूप अंग्रेजी 'अन्' की तरह हो जाता है। हिन्दी में यही 'अन्' 'अन' हो जाता। (अनंग, अनपढ़ आदि)।

अङ्ग—जिन शब्दों में प्रत्यय जोड़े जाते हैं, उन्हें (अथवा प्रत्ययुक्त शब्द के प्रत्यय रहित भाग को) 'अङ्ग' या 'प्रकृति' (Original or Crude form of a word) कहते हैं।

अंतःस्थ (Semi Vowel)—अंतःस्थ का अर्थ है—बीच का, अर्थात् स्वरों और व्यंजनों के बीच की ध्वनियाँ अंतःस्थ ध्वनियाँ कहलाती हैं। स्पर्श व्यंजनों का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उच्चारण करते समय जिह्वा का अग्र भाग किसी न किसी मुखांग को स्पर्श करता हैं और स्वरों का उच्चारण करते समय उनसे दूर रहता है। परन्तु य् और व् का उच्चारण करते समय जिह्वा का अग्रभाग मुखावयव को न तो छूता ही है और न उनसे दूर ही रहता है, इसलिए इन ध्वनियों को अंतःस्थ कहते हैं। अंतःस्थ को 'अंतःस्थ चतुष्क' भी कहते हैं क्योंकि संस्कृत वैयाकरणों के मत से य्, र्, ल्, व् (यण्) ये चार अंतःस्थ ध्वनियाँ हैं। परन्तु आधुनिक वैयाकरण इनमें से य्, व् को अर्द्धस्वर, र् को उत्क्षिप्त और ल् को पार्श्विक नाम से पुकारते हैं।

अंतःस्थ ध्वनियों के उच्चारण में, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के मतानुसार, मुख-विवर संकरा तो कर दिया जाता है, परन्तु इतना नहीं कि स्पर्श या संघर्षी ध्वनियाँ निकलें और न इतना कम कि वे ध्वनियाँ स्वर का रूप धारण कर लें। अंतःस्थ को ईषत् विवृत भी कहते हैं। (दे० आभ्यन्तर प्रयत्न।)

अन्तरित भूतकाल (Remote past tense)—जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की दूरता का बोध हो उसे अन्तरित भूतकाल कहते हैं। इसे 'दूरभूत काल' भी कहते हैं। (दे० काल) यह पाँच प्रकार का होता है :—

1. साधारण दूर (अन्तरित) भूतकाल (Common remote past tense)—जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की दूरता का तो बोध हो, पर उसकी समाप्ति-असमाप्ति का बोध न हो; जैसे—मैंने पत्र 'लिखा था'।

2. समाप्ति सूचक दूर (अन्तरित) भूतकाल (Remote past perfect tense)—जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की दूरता और समाप्ति दोनों सूचित हों; जैसे—मैं पत्र 'लिख चुका था'।

3. असमाप्ति सूचक दूरभूत काल (Remote past imperfect tense)—जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की दूरता और असमाप्ति सूचित हो, जैसे—'मैं पत्र 'लिख रहा था।' या 'मैं पत्र लिखता रहा था।'

4. नित्य-असमाप्ति सूचक दूर (अन्तरित) भूतकाल (Perpetual past imperfect tense)—जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की दूरता और असमाप्ति सूचित हो, जैसे—मैं पत्र 'लिखता था'। या मैं पत्र 'लिखता रहता था'।

5. सान्त-असमाप्ति सूचक दूर (अन्तरित) भूतकाल (Finished past imperfect tense)—जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की दूरता और असमाप्ति पूर्वक पूर्णता सूचित हो ; जैसे—मैं पत्र—'लिखता रह चुका था'। या मैं पत्र 'लिखता रहा करता था'।

अकर्मक क्रिया (Intransitive Verb)—जिस क्रिया का कोई कर्म सूचक शब्द वाक्य में नहीं होता, अर्थात् जिस क्रिया के द्वारा प्रकट किये हुए कार्य का फल कर्त्ता ही पर पड़े, कर्त्ता को छोड़ अन्य कहीं न जावे उसे अकर्मक क्रिया कहते हैं। (दे० क्रिया) अकर्मक क्रिया के तीन भेद हैं—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1. **पूर्ण अकर्मक क्रिया** (Intransitive verb of complete predi cation)—(जो अकर्मक क्रिया अपनी पूर्णता के लिये किसी अन्य शब्द को न चाहें, जैसे—आना, जाना, खेलना, कूदना आदि)।

2. **अपूर्ण अकर्मक क्रिया** (Copulative or intransitive verb of incomplete predication)—(जो अकर्मक क्रिया अपनी पूर्णता के लिये किसी अन्य शब्द (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण या क्रिया विशेषण को भी चाहे जैसे—होना, रखना, बनना, दीखना इत्यादि। वह राजा है। वह मैं हूँ। वह अच्छा है।

3. **सजातीय अकर्मक क्रिया** (Congnative verb)—जिस क्रिया के साथ उसी क्रियाजन्य भाववाचक संज्ञा, कर्म के समान प्रयुक्त हो। जैसे—लड़का अच्छी चाल चला। लड़की अच्छा गीत गा रही है। आदि।

अकर्मक धातु (Intransitive root)—जिस धातु से बने क्रियापद का फल कर्त्ता तक ही परिमित रहता हो, उसे अकर्मक धातु कहते हैं।

अक्षर (Letter or syllable)—शब्द के उतने अंश या मूल ध्वनि का नाम 'अक्षर' है, जिसका फिर विभाजन न हो सके; अर्थात् वर्ण या वर्णों की अविच्छित उच्चरित इकाई को 'अक्षर' कहते हैं। ऋक् प्राति शाख्य के अनुसार व्यंजन सहित या अनुस्वारसहित या शुद्ध वर्ण को अक्षर कहते हैं (सव्यंजनः सानुस्वारः शुद्धोवापि स्वरोऽक्षरम्)। कुछ भाषाशास्त्री अँग्रेजी 'सिलेबिल' के लिये 'अक्षर' शब्द का प्रयोग करते हैं और अँग्रेजी 'लेटर' शब्द के लिये, 'वर्ण' का। (दे० वर्ण)

अक्षर बलाघात (Steress)—उच्चारण के समय शब्द के किसी 'अक्षर' पर अन्य वर्णों या अक्षरों की अपेक्षा श्वास का अधिक दबाव पड़ने की स्थिति को अक्षर बलाघात कहते हैं। (दे० बलाघात)

अक्षर लिपि (Writing; a mode of writing or form of letters in writing)—अक्षरों के चिह्नों या बनावट या लिखावट को अक्षर लिपि या लिपि कहते हैं। इसके अन्य नाम है—अक्षर न्यास/अक्षर विन्यास/अक्षर संस्थान/अक्षर लेख/अक्षरौटी/वर्णलिपि/वर्णन्यास।

अक्षर विचार (Orthography)—व्याकरण के जिस विभाग में अक्षरों के आकार, उच्चारण और मिलाने आदि का वर्णन किया जाता है, उसे 'अक्षर विचार' कहते हैं। (दे० व्याकरण)

अक्षरावली (Alphabet)—(दे० वर्णमाला)।

अक्षरावस्थिति (Vowel position)—स्वरों के उच्चारण में जीभ की विशेष स्थितियों के उपयोग को अक्षरावस्थिति या स्वरावस्थिति कहते हैं। स्वरों के उच्चारण में कोई बाधा नहीं पड़ती, न रगड़ ही होती है। अतः उनका वर्गीकरण जीभ की इन स्थितियों के आधार पर ही किया जाता है। पहले जीभ को तीन भागों में बाँटा जाता है—अग्र, मध्य और पश्च। जीभ के इन तीन भागों के प्रयोग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के आधार पर स्वरों के तीन भेद हो जाते हैं—क्रमशः अग्र, मध्य और पश्च स्वर। (दे० यथा०) दूसरी बात यह देखी जाती है कि जीभ के ये भाग कितने उठते हैं; जब जीभ अधिक-से-अधिक ऊपर उठती है (पर इतनी नहीं कि श्वास के निकलने में रगड़ हो), तो मुख-विवर बहुत संकरा या संवृत हो जाता है। जीभ के इससे कुछ कम उठने पर अर्द्ध-संवृत और जीभ के कुछ कम उठने से मुख विवर अर्द्ध विवृत तथा कम से कम उठने पर वह विवृत रहता है। तीसरी बात यह देखी जाती है कि ओठों की स्थिति कैसी है, उनके गोल रहने पर वृत्ताकार अन्यथा अवृत्ताकार स्वर-ध्वनियाँ निकलती हैं। चौथी बात यह कि मांसपेशियों की दृढ़ता-शिथिलता के आधार पर ये दृढ़ स्वर और शिथिल स्वर सुन पड़ते हैं। (दे० स्वर)

अग्रस्वर (Front vowel)—जिन स्वरों के उच्चारण में जीभ का अग्रभाग ऊपर उठता है, उन्हें अग्रस्वर कहते है; इ, ई, ऋ, ए तथा ने स्वर अग्रस्वर हैं।

अघोष (Unvoiced)—यह एक 'बाह्य प्रयत्न है। वर्गों के प्रथम और द्वितीय वर्णों और श, ष, स का बाह्य प्रयत्न अघोष होता है। ध्वनियंत्र तक आने तक श्वास विकारहीन और भेद रहित रहता है। ध्वनि-यंत्र में पहुँच कर या तो स्वर-तंत्रियों के शिथिल रहने से श्वास बिना रुकावट के निकल जाती है या उसे रगड़ करनी पड़ती है। पहली (बिना रुकावट या बिना रगड़ की) स्थिति को अघोष कहते हैं। स्वरों का फुसफुसाहट वाला रूप भी अघोष होता है। लैरिंगोस्कोप की सहायता से या गले पर हथेली रख कर इन वर्णों का घोष वर्णों से भेद स्पष्टतः समझा जा सकता है। (दे० बाह्य प्रयत्न)

अघोष व्यंजन (Surds or hard Consonants)—(दे० व्यंजन वर्ण)।

अचरम प्रत्यय (A Suffix)—जिन प्रत्ययों के पीछे अन्य कोई प्रत्यय आने न आने का नियम नहीं, उन्हें 'अचरम प्रत्यय' कहते हैं। विभक्तियों के अतिरिक्त शेष प्रत्यय, 'अचरम प्रत्यय' हैं। (दे० प्रत्यय)

अच् सन्धि—स्वर सन्धि (Conjunction of vowels) को ही अच् सन्धि कहते हैं। इसमें स्वर के साथ स्वर का मेल होता है। (दे० सन्धि)

अतीत काल—भूत काल (Past tense) को ही अतीत काल कहते हैं। (दे० काल-भूतकाल)।

अधिकरण कारक (Locative Case)—यह कारक का एक भेद है। संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से कर्त्ता द्वारा की गई क्रिया के कार्य का आधार प्रकट हो उसे 'अधिकरण कारक' कहते हैं। इसके चिह्न 'में' या 'पर' हैं। जैसे—घर में, तुम पर, पृथ्वी पर। (दे० कारक)।

अधिकार (Governance or Government)—वाक्य में जिस सम्बन्ध के कारण किसी एक शब्द के प्रयोग से दूसरे संज्ञा-वाचक या सर्वनामवाचक शब्द किसी विशेष कारक में आते हैं, उसे 'अधिकार' कहते हैं। जैसे—सुमित बन्दर से डरता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है, सुमित बन्दर को रोटी देता है, सुमित बन्दर को मारता है, इत्यादि। यहाँ अलग-अलग क्रियाओं के कारण 'बन्दर' शब्द अलग-अलग कारकों में आता है।

अधिकारार्थ (Ist. Potential mood)—क्रिया का वह रूप जिससे कर्त्ता की शक्ति, योग्यता या अधिकार सूचित हो। इसे 'शक्त्यार्थ, भी कहते हैं। उदाहरण —राम पत्र लिख सकता है। मैं वहाँ जा सकता हूँ।

प्राय: किसी के मूल रूप में 'सकना'—क्रिया के रूप को जोड़ देने पर अधिकारार्थ क्रिया रूप बनते हैं। (दे० अर्थ या रीति Mood)

अध्याहार (Filling or supplying the ellipses)—किसी संक्षिप्त वाक्य को (अथवा संकुचित वाक्य को भी) पूर्ण करने के लिये छूटे हुए शब्दों के लगाने या खोजने को 'अध्याहार' कहते हैं।

(संक्षिप्त वाक्य और संकुचित वाक्य के लिये दे० वाक्य)

अध्याहृत शब्द (Omitted words or ellipses)—संक्षिप्त वाक्य या संकुचित वाक्य की पूर्ति के लिये खोज कर लगाये गये शब्द 'अध्याहृत शब्द' कहलाते हैं।

अनुनासिक स्वर (Non-nasals)—जहाँ स्वरों का उच्चारण नासिका की सहायता के बिना किया है वहाँ सर्वत्र सभी स्वर अनुनासिक होते हैं। इन्हें निरनुनासिक भी कहते हैं। (दे० स्वर)।

अनिश्चय वाचक सर्वनाम (Indefinite pronoun)—जिन सर्वनामों से किसी विशेष वस्तु का निश्चय न हो। (जैसे—कोई, कुछ) (दे० सर्वनाम)।

अनिश्चित परिमाणवाचक विशेषण (Adjective of indefinite quantity)—परिमाणवाचक विशेषण का एक भेद। जो परिमाणवाचक विशेषण किसी निश्चित परिमाण का बोध न करावें। (दे० विशेषण परिमाणवाचक विशेषण)।

अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण (Adjective of indefinite number)—संख्यावाचक विशेषण का एक भेद। जिस संख्यावाचक विशेषण से किसी निश्चित संख्या का बोध न हो। (दे० विशेषण संख्यावाचक विशेषण)

अनुकरण धातु (Imitative verbs)—जो धातुएँ किसी वस्तु की ध्वनि के अनुकरण पर बनें उन्हें अनुकरण धातु कहते हैं। जैसे—बड़बड़ाना, खटखटाना, काउँ-काउँ करना (दे० धातु)।

अनुकरण सूचक यौगिक शब्द (Imitative derivatives)—जो शब्द किसी पदार्थ की यथार्थ या कल्पित ध्वनि को लेकर बनते हैं उन्हें अनुकरण सूचक यौगिक शब्द कहते है; जैसे—खटाखट, चूँ-चूँ, छमाछम, गटगट इत्यादि। (दे० शब्द-यौगिक शब्द)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनुदात्त (Gravely accented vowel)—जब कोई स्वरवर्ण मुख के तालु आदि स्थान के नीचे-भाग-द्वारा धीमे स्वर से बोला जाये तो उसे 'अनुदात्त' या 'अनुदात्त प्रयत्नोच्चरितस्वर' कहते हैं।

अनुदात्त प्रयत्न (Grave effort)—जिस बाह्य प्रयत्न से अनुदात्त स्वर बोला जाये, उसे, 'अनुदात्त प्रयत्न' करते हैं।

अनुनासिक (Nasals)—मुख सहित नासिका से उच्चरित होने वाले वर्ण 'अनुनासिक' कहलाते हैं। मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः—पाणिनि सूत्र 1/1/8 (दे० ध्वनि)।

अनुनासिक स्वर (Nasal vowel)—स्वर वर्ण का उच्चारण करते समय यदि कुछ श्वास नासिका से भी निकाला जाये, तो ऐसे स्वर को अनुनासिक स्वर कहते हैं। किसी स्वर का ऐसा उच्चारण प्रकट करने के लिये उसके उपर चन्द्रबिन्दु चिह्न (ँ) लगा दिया जाता है। जैसे—आँगन, उँगली, बँगला, हँस इत्यादि। ऐसा स्वर जब किसी शब्द के अन्त में हो तो चन्द्रबिन्दु के स्थान पर केवल बिन्दु अर्थात् अनुस्वार ही लगाया जा सकता है, जैसे—मैं कहां, क्यों आदि। आजकल छपाई की सुविधा के लिये चन्द्रबिन्दु चिह्न की जगह केवल बिन्दु प्रयुक्त होने लगा है।

अनुबद्ध क्रिया विशेषण—यह प्रयोगाधार क्रिया विशेषण का एक प्रकार है। जिन क्रिया विशेषणों का प्रयोग अर्थ अवधारण के लिये किसी भी शब्द भेद के साथ हो सकता है, वे 'अनुबद्ध क्रिया विशेषण' कहलाते हैं। जैसे—यह तो तुम ने धोखा ही किया। उसके वहाँ जाने भर की देर है। इन वाक्यों में 'तो', 'भर' अनुबद्ध क्रिया विशेषण हैं। (दे० अव्यय—क्रिया विशेषण—प्रयोगाधार क्रिया विशेषण)

अनुबद्ध सम्बन्ध सूचक अव्यय—सम्बन्ध-सूचक अव्यय का एक भेद। जो संज्ञा या सर्वनाम के आगे या उनके विकृत रूप के आगे बिना 'के', 'की' आदि विभक्ति के हो आते हैं, जैसे—दिल्ली तक, वहाँ तक, यहाँ तक, राम सहित, ध्यान पूर्वक आदि। (दे० अव्यय सम्बन्ध सूचक अव्यय)।

अनुस्वार (Nasal mark or point)—किसी अक्षर के ऊपर 'अं' स्वर का चिह्न रूप बिन्दु (ं) लगाया जाता है, उसे 'अनुस्वार' कहते हैं। यह 'योगवाह' (दे० यथास्थान—'योगवाह') का एक रूप है; क्योंकि इसका उच्चारण उसके पूर्व किसी व्यक्त या अव्यक्त स्वर को जोड़ने से होता है।

अन्य पुरुष (Third person)—इसे तृतीय पुरुष भी कहते हैं। वक्ता और श्रोता के अतिरिक्त अन्य पद बोधक सर्वनाम अन्य पुरुष कहलाता है। (दे० पुरुष)

अन्याश्रितार्थ (Conditional or subjunctive mood)—इसे संकेतार्थ या हेतुहेत्वार्थ भी कहते हैं। क्रिया के जिस रूप से एक कार्य का होना दूसरे कार्य के होने पर निर्भर हो। जैसे—यदि वह यहाँ आता तो—(विशेष दे० अर्थ)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अन्वय (Agreement)—किसी वाक्य के अन्तर्गत दो शब्दों में लिंग, वचन, पुरुष, कारक या काल की जो परस्पर समानता रहती है, उसे 'अन्वय' कहते हैं।

अन्वित शब्द (Words agreed)—किसी वाक्य में जिन शब्दों में 'लिंग, वचन, पुरुष, कारक या काल की समानता रहती है, वे परस्पर उसी समानता की अपेक्षा 'अन्वित शब्द' कहलाते हैं।

अपवाद (An exception)—नियम-बाह्य या विशेष नियम वाले शब्द आदि को 'अपवाद' कहते हैं। जबकि नियमानुकूल या साधारण नियमबद्ध शब्द आदि को 'उत्सर्ग' कहते हैं।

अपत्य बोधक शब्द (Patronymics)—जो यौगिक शब्द अपने मूल शब्द के अर्थ से उसकी सन्तान या सम्प्रदायी या अनुयायी आदि अर्थ के सूचक हों वे अपत्य बोधक शब्द कहलाते हैं। जैसे—वासुदेव (वसुदेव का पुत्र), पाडण्व (पाण्डु के पुत्र), यादव (यदु की सन्तान), बौद्ध (बुध सम्प्रदाय के लोग आदि)।

अपादान कारक—कारक का एक भेद (दे० कारक)।

अपूर्ण अकर्मक क्रिया (Copulative)—अकर्मक क्रिया का एक भेद। (दे० क्रिया अकर्मक क्रिया)

अपूर्ण वर्तमान क्रियार्थक विशेषण (Present imperfect participles)—क्रियार्थक विशेषण का एक भेद। (दे० विशेषण क्रियार्थक विशेषण)

अपूर्णता सूचक त्रिकाल व्यापक वर्तमान काल (Permanent present continuous tense)—वर्तमान काल का एक भेद। वर्तकानकालिक क्रिया के जिस रूप से क्रिया के कार्य की अपूर्णता बोधक त्रिकाल व्यापकता सूचित हो, जैसे—वह नित्य रात के 11 बजे तक 'पढ़ता रहता है'। (दे० काल—वर्तमानकाल)।

अपूर्ण सूचक गणनाबोधक निश्चयवाचक विशेषण (Cardinals denoting fractional numbers)—निश्चित संख्यावाचक विशेषण के गणनाबोधक प्रकार का एक भेद। (दे० विशेषण गणना बोधक विशेषण)

अप्रधान कर्म (Indirect object)—इसे 'अनुक्त कर्म' अथवा इसे 'गौण कर्म' भी कहते है। कर्म का एक भेद। (दे० 'कर्म')

अयादि सन्धि—स्वर सन्धि का एक प्रकार। ए, ऐ, ओ, औ के साथ अगले किसी भिन्न स्वर के मेल से उनके स्थान में क्रम से अय्, आय्, अव, आव् हो जाने को 'अयादि सन्धि' कहते हैं, जैसे—ने+अन—नयन, ने+अक—नायक। (दे सन्धि—स्वर सन्धि)

अयोगवाह—स्वरों और व्यंजनों के बीच के वर्णों—अनुस्वार, विसर्ग, उपध्मानीय और जिह्वामूलीय को 'अयोगवाह' कहते हैं। (विशेष दे० इनको यथास्थान)

अर्थ (Mood)—इसे रीति, क्रियार्थ या क्रिया रीति भी कहते हैं। क्रिया के जिस रूप से विधान करने की रीति का बोध होता है, उसे अर्थ कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रिटिश विश्वकोश के अनुसार सामान्य रूप से कुछ बोध कराने वाले किसी पदार्थ या क्रिया के विषय में यह कहा जा सकता है, कि इसमें कुछ अर्थ है।

कात्यायन के अनुसार और पतंजलि के अनुसार भी, समस्त शब्द स्व-स्व अर्थ-बोधन के लिए होते हैं, जिस अर्थ-बोध के लिए जिस शब्द का प्रयोग होता है, वही उस शब्द का अर्थ है। पंतजलि के टीकाकार कैयट और नागेश भट्ट के अनुसार शब्द जिस प्रवृत्ति निमित्त से (अर्थात् जिस वाच्य अर्थ के बोधन के लिये) प्रयोग को प्राप्त होते हैं, वही प्रवृत्ति निमित्त रूप अर्थ (वाच्य अर्थ) उन शब्दों का अर्थ है। भर्तृहरि के अनुसार जिस शब्द के उच्चारण से जिस अर्थ की प्रतीति होती है, वह उसका अर्थ है। कुमारिल भट्ट के अनुसार जो अर्थ जिस शब्द का अनुगमन करता है, वही उसका अर्थ है। हुस्सेर्ल और गैसेर के अनुसार शब्द की स्वभावाकूल अभिव्यक्ति ही अर्थ है। ब्रिटिश विश्वकोश अर्थ को ही भावों और विचारों का सर्वस्व मानता है।

पंतजलि के अनुसार अर्थ मुख्यतः चार प्रकार का होता है—(1) जातिवाचक (गौ आदि), (2) गुणवाचक (शुक्ल, पीत आदि) (3) क्रियावाचक (आना, जाना आदि), और (4) यथेच्छा शब्दों का वाचक (अर्थात् व्यक्ति विशिष्ट-द्वारा रखे गये नामों का बोधक)

भर्तृहरि के टीकाकार पुण्यराज ने अर्थ 18 प्रकार के और बताये हैं, जिनका विवेचन डॉ० कपिलदेव द्विवेदी ने भी किया है। (1) अर्थ वस्तु मात्र है, बाह्य अर्थ प्रतिपादन का विषय नहीं है, (2) अभिधेय—प्रतिपाद्य होने पर बाह्य अर्थ अभिधेय है। (3) अभिधेय दो प्रकार का होता है—शास्त्रीय और लौकिक। वेद-शास्त्रादि द्वारा प्रतिपाद्य अर्थ शास्त्रीय है। (4) लौकिक अर्थ अखण्ड होता है। (5) विशिष्टावग्रह संप्रत्यय हेतु—'कंस को मारता है' में भूतकाल की क्रिया का वर्तमानवत् काल्पनिक व्यवहार इसका उदाहरण है। (6) वास्तविक—उक्त 5 के विपरीत अर्थ, जो लोक व्यवहार में वैसा ही विद्यमान है। (7) मुख्य अभिधा-द्वारा बोधित अर्थ। (8) परिकल्पित रूप विपर्यास लक्ष्यार्थ, या व्यंजित अर्थ। (9) अव्यपदेश्य—जाति या द्रव्य आदि का वर्णन योग्य अर्थ। (10) अव्यपदेश्य—जिसका उक्त रूप में तात्विक वर्णन नहीं हो सकता। (11) सत्वभावापन्न—बाह्य अर्थ का बोध कराने वाला दृश्य रूप अर्थ। (12) असत्वभूत-उक्त के विपरीत, असत् वस्तु का बोध कराने वाला अर्थ। (13) स्थिर लक्षण—स्थिर रूप से अर्थ बोध कराने वाला। (14) विवक्ष प्राप्ति संविधान—उक्त के विपरीत जहाँ अर्थ विवक्षा पर निर्भर रहता है। (15) अभिधीयमान—प्रस्तुत रूप से वर्णित। 16) प्रतीयमान—प्रस्तुत अर्थ के अतिरिक्त व्यंजना या ध्वनि से प्रतीत होने वाला अर्थ। (17) अभिसहित वाच्य-अर्थ जैसे—गौ शब्द से जाति या व्यक्ति रूप में ज्ञात होने वाला अर्थ। (18) नान्तरीयक—अविनाभाव से रहने वाला अर्थ, जैसे गौ शब्द से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जो शुक्ल, नील, पीत आदि रंगों का भी बोध होता है, वह गौ शब्द में अविनाभाव से रहता है। इसी से उसे नान्तरीयक अर्थ कहते हैं।

अर्थ के प्रमुख भेद कुछ वैयाकरणों ने इस प्रकार बताये हैं—

1. **निश्चयार्थ** (Indicative mood)—क्रिया के जिस रूप से किसी विधान का निश्चय सूचित हो।

2. **सम्भावनार्थ** (Optative mood)—क्रिया के जिस रूप से किसी विधान की सम्भावना (अनुमान, इच्छा आदि के सम्बन्ध में) सूचित हो।

3. **सन्देहार्थ** (Doubtful mood)—क्रिया के जिस रूप से किसी विधान में सन्देह या संदिग्धता सूचित हो।

4. **आज्ञार्थ** (Imperative mood)—क्रिया के जिस रूप से किसी विधान के लिये आज्ञा, उपदेश, प्रार्थना या निषेध आदि सूचित हो।

(अ) **प्रत्यक्ष विधि** (Present imperative) जैसे—(तू पत्र लिख)—पत्र लिख, पत्र लिखता रह, पत्र लिख ले।

(ब) **परोक्ष विधि** (Future imperative) जैसे—पत्र लिखयो, पत्र लिखा करियो, पत्र लिखते रहना। आज्ञार्थ क्रिया का प्रयोग केवल मध्यम पुरुष (दे० यथा० पुरुष) के व्यक्त या अव्यक्त सर्वनाम के साथ ही किया जाता है, उत्तम पुरुष या अन्य पुरुष के साथ नहीं।

5. **संकीतार्थ या हेतुहेत्वार्थ या अन्याश्रितार्थ** (Conditional or subjunctive mood)—क्रिया के जिस रूप से एक कार्य का होना दूसरे कार्य के होने पर निर्भर हो। जैसे—यदि वह पत्र लिखता है तो·····, यदि वह यहाँ आता तो····· आदि।

6. **अधिकारार्थ या शक्त्यार्थ** (Ist. potential mood)—क्रिया के जिस रूप से कर्त्ता की शक्ति, योग्यता या अधिकार सूचित हो। जैसे—रमेश पत्र लिख सकता है। वह यहाँ आ सकता है।

7. **कर्तव्यार्थ** (2nd potential mood)—क्रिया के जिस रूप से कर्तव्य सूचित हो। जैसे—रमेश को पत्र लिखना चाहिए। उसे आना चाहिए।

अर्थाधार क्रिया-विशेषण—क्रिया विशेषण का एक भेद। (दे० अव्यय—क्रिया विशेषण अव्यय)।

अर्द्ध चन्द्र (Half moon mark)—(ॅ) ऐसे चिह्न को 'अर्द्धचन्द्र' कहते हैं, यह चिह्न कुछ अँग्रेजी शब्दों से किसी-किसी स्वर का ठीक उच्चारण दिखाने के लिये, हिन्दी स्वर के ऊपर लगाया जाता है, जैसे—College—कॉलेज। Ball—बॉल, इसी तरह डॉक्टर, लॉर्ड आदि।

कुछ विद्वान हिन्दी में इस चिह्न को अनावश्यक मानते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्द्धचन्द्र बिन्दु (Point half moon mark)—इसे चन्द्रबिन्दु, अर्द्धचन्द्राकार या अर्द्धानुनासिक चिह्न भी कहते हैं। यह चिह्न किसी अक्षर के ऊपर अनुनासिक स्वरोच्चारण के चिह्न रूप में प्रयुक्त होता है। जैसे—आँगन, आँख, हँसना आदि। (दे० अनुनासिक स्वर)

अर्द्धचन्द्रांकित स्वर (Half moon marked vowel)—हिन्दी में लिखे गये अँग्रेजी शब्द के जिस स्वर पर अर्द्धचन्द्र (ॅ) चिह्न लगाया जाता है, उसे अर्द्धचन्द्रांकित स्वर कहते हैं। जैसे—कॉलेज, (क+ऑ.....) में 'ऑ'।

अर्द्ध-विवृत (Half open)—उच्चारण के समय जिन वर्णों के उच्चारण में मुख-द्वारा विवृत स्वरों की अपेक्षा कम (आधा) खुलता है, उन्हें विवृत कहते हैं। अ, ऐ और अर्द्ध विवृत स्वर हैं।

अर्द्ध-संवृत (Half closed)—जिनके उच्चारण में मुख-द्वार संवृत स्वरों की अपेक्षा अधिक खुलता है—उन्हें अर्द्ध सवृत कहते हैं। ऐ, ओ अर्द्ध संवृत हैं।

अर्द्ध-स्वर (Semi vowel)—हिन्दी की य और हलंत अक्षर के बाद शब्द के मध्य में आने वाली व् ध्वनियाँ इस कोटि में आती हैं। इनके उच्चारण में मुख-द्वार संकीर्ण तो करते हैं, किन्तु इतना नहीं कि रगड़ (संघर्ष) हो। इन्हें अर्द्ध स्वर या व्यंजन और स्वर के बीच की ध्वनियाँ माना जाता है। वैसे इनकी गणना व्यंजनों में होती है। (दे० ध्वनि, व्यंजन)।

अल्पप्राण (Non aspirate or un aspirated)—एक बाह्य प्रयत्न। जिन व्यंजन वर्णों के उच्चारण के समय श्वास मुख मे अल्प मात्रा में निकले, उन्हें अल्पप्राण कहते हैं। वर्गों के प्रथम, तृतीय, और पंचम वर्ण तक तथा य, र, ल और व अल्पप्राण हैं। (दे० वर्णमाला) इनकी संख्या है—19 व्यंजन तथा सभी स्वर।

लैरिंगोस्कोप यन्त्र की सहायता से अल्पप्राण और महाप्राण का भेद ज्ञात कर सकते हैं। अल्पप्राण में ह ध्वनि नहीं होती।

अल्पविराम (Comma)—एक विरामचिह्न, (दे० विरामचिह्न)।

अवर्ण—अ और आ इन दो अक्षरों को अवर्ण कहते हैं।

अविकारी कृदन्त (Indeclinable of invariable verbal derivatives)—इसे कृदन्त अव्यय भी कहते हैं। यह कृदन्त का एक भेद है। वे कृदन्त जिनमें रूपान्तर नही होता। अविकारी कृदन्त हैं।

(1) पूर्वकालिक कृदन्त, (2) तात्कालिक कृदन्त, (3) अपूर्ण क्रियाघातक कृदन्त, (4) पूर्ण क्रियाद्योतक कृदन्त। (दे० कृदन्त)।

अविकारी शब्द (Indeclinable words)—जिन शब्दों रूप में कोई विकार या परिवर्तन नहीं होता। कुछ को छोड़ कर प्राय: सभी अव्यय अविकारी शब्द हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अविकारी समास पद (Indeclinable componnd)—रचना की दृष्टि से समास-पदों के दो भेद हैं—अविकारी और विकारी। अविकारी ऐसे समास पद हैं, जिनमें विकार नहीं होता, जैसे—रसोई+घर—रसोई-घर, काम+चलाऊ—कामचलाऊ। (दे० समास-पद)

अव्यय (Indeclinables)—जिन शब्दों का रूप सदैव एक-सा बना रहे, अर्थात् जिनके रूप में लिंग, वचन और कारक के कारण किसी प्रकार का परिवर्तन न हो, उन्हें अव्यय कहते हैं। अव्यय के दस भेद हैं—

1. **क्रिया विशेषण अव्यय** (Adverbs)—जो अव्यय किसी क्रिया के कार्य की कुछ विशेषता सूचित करें। इसके तीन उपभेद हैं—

1·1 **प्रयोगाधार क्रिया विशेषण—**

1·1-1 साधारण क्रिया विशेषण—
जिनका प्रयोग किसी वाक्य में स्वतन्त्र हो, जैसे—'अरे ! तुम यहाँ कैसे ?' में 'अरे।' साधारण क्रिया विशेषण है।

1·1-2 संयोजक क्रिया विशेषण—
जिसका सम्बन्ध किसी उपवाक्य के साथ रहे। जैसे—जहाँ आज तुम हो वहाँ कल वह था। मैं 'जहाँ' 'वहाँ' संयोजक क्रिया विशेषण हैं।

1·1-3 अनुबद्ध क्रिया विशेषण—
जिनका प्रयोग अर्थ अवधारणा के लिये किसी भी शब्द-भेद के साथ हो सकता हो, जैसे—मैं तो उसे जानता तक नहीं। उसके आने भर की देर है।' में—'तो' और 'भर', अनुबद्ध क्रिया विशेषण हैं।

1·2 **रूपाधार क्रिया विशेषण—**

1·2-1 मूल क्रिया विशेषण—
जो क्रिया विशेषण किसी अन्य शब्द से न बने हों, जैसे—फिर, ठीक, दूर, नहीं इत्यादि।

1·2-2 यौगिक क्रिया विशेषण—
जो क्रिया विशेषण अन्य शब्दों में प्रत्यय या कोई अन्य शब्द जोड़ने से बने हों, जैसे—क्रमशः, दिनभर, कार्यवश, प्रेमपूर्वक, इसलिये, इतने में, यहाँ तक आदि।

1·2-3 संयुक्त क्रिया विशेषण—
जो संज्ञा आदि की द्विरुक्ति से या दो भिन्न-भिन्न संज्ञा आदि के मेल से बने हों, जैसे—घर-घर, एकाएक, जब-कभी. धीरे-धीरे आदि।

1·2-4 स्थानीय क्रिया विशेषण—
जो कोई शब्द, भेद बिना किसी रूपांतर के वाक्य के किसी विशेष स्थान में पड़कर 'क्रिया विशेषण' का काम दें। जैसे—तुम मेरी सहायता पत्थर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करोगे। लीजिये महाराज में चला।—में 'पत्थर', 'यह' स्थानीय क्रिया विशेषण हैं।

1·3 **अर्थाधार क्रिया विशेषण—**

1·3-1 स्थानवाचक क्रिया विशेषण—

जो क्रिया विशेषण स्थान सूचक अर्थ प्रकट करें, ये दो तरह के हैं—

1·3-1-1 स्थिति बोधक—यहाँ, वहाँ, कहाँ, आगे, पीछे, ऊपर, नीचे आदि।

1·3-1-2 दिशाबोधक—इधर, उधर, दाँये, बाँये आदि।

1·3-2 कालवाचक—

जो क्रिया विशेषण समय-सूचक अर्थ प्रकट करें। ये तीन तरह के हैं—

1·3-2-1 समय बोधक—आज, कल, अब, जब, तब, अभी फिर आदि।

1·3-2-2 अवधिबोधक— आजकल, नित्य, सदा, दिनभर, लगातार आदि।

1·3-2-3 पौनःपुन्यबोधक— बार-बार, बहुधा, प्रतिदिन, कई बार इत्यादि।

1·3-3 परमाणवाचक—

जो क्रिया विशेषण परिमाण-द्योतक अर्थ प्रकट करें। ये पाँच प्रकार के हैं—

1·3-3-1 अधिकता बोधक—अति, बहुत, अत्यन्त, आदि।

1·3-3-2 न्यूनता बोधक—कुछ, किंचित, लगभग, जरा इत्यादि।

1 3-3-3 पर्याप्तिबोधक— बस, यथेष्ट, ठीक, पर्याप्त आदि।

1·3-3-4 तुलनाबोधक—अधिक, कम, बढ़कर, और भी आदि।

1·3-3-5 श्रेणीबोधक—यथाक्रम, तिलतिल, शनैः-शनैः आदि।

1·3-4 रीतिवाचक—

जो क्रिया विशेषण रीतिबोधक अर्थ प्रकट करे। ये छह प्रकार के हैं—

1·3-4-1 अकारार्थक—ऐसे, वैसे, जैसे, तैसे, कैसे, यथा, यों ही, ध्यानपूर्वक, मानो इत्यादि।

1·3-4-2 निश्चयार्थक—अवश्य, सचमुच, निःसन्देह, बेशक आदि।

1·3-4-3 अनिश्चयार्थ—कदाचित, शायद, यथासंभव आदि।

1·3-4-4 कारणकार्यर्थक—किसलिए, क्यों, इसलिये, यों इत्यादि।

1·3-4-5 विधिनिषेधार्थ—हाँ, जी हाँ, ठीक, सच, नही, मत, कदापि नहीं आदि।

1·3-4-6 अवधारणार्थक—तो, ही, मात्र, भर, तक इत्यादि।

2. सम्बन्ध-सूचक अव्यय (Prepositions)

जिनके द्वारा किसी संज्ञा या सर्वनाम का सम्बन्ध वाक्य के किसी अन्य शब्द के साथ जाना जाये। इनके दो भेद हैं—

2 1 सम्बद्ध सम्बन्ध सूचक—जो संज्ञाओं या सर्वनामों की किसी विभक्ति (के, की, रा, री, ने, से) के आगे आते हैं, जैसे—राम के साथ, उसकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओर, मुख से आगे इत्यादि में साथ, और, आगे सम्बद्ध सम्बन्ध सूचक अव्यय हैं।

2·2 अनुबद्ध सम्बन्ध सूचक—जो संज्ञा या सर्वनाम के आगे या उनके विकृत रूप के आगे, बिना 'के', 'की' आदि विभक्ति के ही आते हैं, जैसे—राम सहित, यहाँ तक, गुण रहित, इत्यादि में सहित, तक, रहित, 'अनुबद्ध सम्बन्ध सूचक अव्यय हैं।

3. समुच्चय बोधक अव्यय (Conjunctions)

जो अव्यय एक ही प्रकार के दो या अधिक शब्दों, पदों, वाक्य-खण्डों या वाक्यों को मिलायें। इनके दो भेद हैं—

3·1 समानाधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय—दो या अधिक मुख्य वाक्यों को मिलाते हैं। ये चार प्रकार के हैं—

3·1-1 संयोजक समानाधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय—और, व, तथा, एवं इत्यादि।

3·1-2 विभाजक समानाधिकरण समुच्चय बोधक—या, अथवा, चाहे, न कि, नहीं तो, कि, या तो, किंवा इत्यादि।

3·1-3 विरोधदर्शक समानाधिकरण समुच्चयबोधक अव्यय—किन्तु, परन्तु, लेकिन, पर, वरन्, बल्कि, इत्यादि।

3·1-4 परिणामदर्शक समाधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय—अतः, अतएव, इसलिए, परिणामतः, इससे इत्यादि।

3·2 व्याकरण समुच्चय बोधक अव्यय। जो एक मुख्य वाक्य के साथ एक या अधिक आश्रित वाक्यों को मिलाते हैं। इनके पाँच प्रकार हैं—

3·2-1 कारण वाचक व्याधिकरण समुच्चयबोधक अव्यय—क्योंकि, इसलिये, कारण कि इत्यादि।

3·2-2 उद्देश्य वाचक व्याधिकरण समुच्चयबोधक अव्यय—ताकि, जिससे कि, जिसमें कि, इसलिये कि इत्यादि।

3·2-3 संकेतवाचक व्याधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय—यदि तो, जो-तो, यद्यपि-तथापि, इत्यादि।

3·2-4 स्वरूपवाचक व्याधिकरण समुच्चयबोधक अव्यय—अर्थात्, मानो, कि, यानी इत्यादि।

3·2-5 पूर्तिसूचक व्याधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय—कि आदि।

4. विस्मयादिबोधक अव्यय या इंगितबोधक अव्यय

जिनसे बोलने वाले के मन का आकस्मिक भाव प्रकट हो। ये दस प्रकार के हैं—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

4·1 आश्चर्यसूचक—वाह, ओ हो, ऐं, अरे, क्या आदि ।
4·2 हर्षसूचक—अहा, आहा, वाहवा, खूब इत्यादि ।
4·3 शोकसूचक—शोक, अतिशोक, त्राहि-त्राहि, इत्यादि ।
4·4 पीड़ा सूचक—आह, हाय मैयारे, बापरे, दैयारे आदि ।
4·5 ग्लानिसूचक—छि, छिछि, दूर, हट इत्यादि ।
4·6 अनुमोदन सूचक—धन्य धन्य, बहुत ठीक, शाबाश इत्यादि ।
4·7 तिरस्कार सूचक—धिक, चुप, थूथू, राम-राम, शर्म, इत्यादि ।
4·8 स्वीकारता सूचक—हाँ, जी हाँ, अच्छा इत्यादि ।
4·9 सम्बोधनार्थक—रे, अरे, ओ, अजी, हे, हो इत्यादि ।
4·10 वाक्यरूप—दूर हो, डूब मर इत्यादि ।

5. **विभक्ति नामक अव्यय** (Inflectional terminations)

कारकों के चिह्न 'विभक्तिनामक अव्यय' हैं । ने, को, द्वारा, से, के लिए, से, का, की, के, रा, री, रे, ना, नी, ने आदि ।

6. **उपसर्ग नामक अव्यय** (Prefixes)

जो अव्यय कुछ अन्य शब्दों के आदि में जोड़े जाते हैं और जिनके जुड़ जाने से उन शब्दों के अर्थ मे कुछ परिवर्तन होकर कुछ विशेषता आ जाती है । जैसे—अपमान, अभिमान, सम्मान, अनुमान, इन शब्दों मे 'मान' शब्द के आरम्भ में अप, अभि, सम्, अनु—यह उपसर्ग जोड़े जाने से प्रत्येक शब्द के अर्थ में परिवर्तन आ गया है ।

निम्नलिखित 22 उपसर्ग संस्कृत भाषा के हैं जो हिन्दी भाषा में प्रयुक्त होने वाले संस्कृत शब्दों के आदि में जोड़े जाते हैं—अ (अन्, अन), अति, अधि, अनु, अप, अभि, अव, आ, अत्, उप, कु, दुस, (दुः, दुर) निस् (निः, निर्), नी, (नि), परा, परि, प्र प्रति, वि, सम् (सं), स (सह), सु ।

7. **प्रत्यय नामक अव्यय** (Affixes)

जो अव्यय कुछ अन्य शब्दों के अन्त में जोड़े जाते हैं और जिनके जोड़ने से उनके अर्थ में विशेषता आ जाती है । जैसे—पवित्रता, दयावान, शुद्धता—में ता, वान, ता—प्रत्यय हैं ।

8. **कृदन्त अव्यय** (Verbal derivation)

जो शब्द किसी क्रिया के मूल रूप में किसी प्रत्यय के जोड़ने से बनते हैं । जैसे—लिखाई, पकवान, आदि ।

9. **विकारी अव्यय** (Declinable indeclinables)

जिन किसी-किसी आकारन्त अव्ययों में लिंग, वचन के कारण रूपान्तर भी होता है, वे विकारी अव्यय हैं । शेष सब अव्यय 'अविकारी हैं । जैसे—सरीखा, ऐसा कैसा, इतना, जितना आदि ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

10. **विकृत अव्यय** (Declined)

विकारी अव्यय के विकृत रूप को 'विकृत अव्यय' कहते हैं । जैसे—सरीखे, ऐसे, वैसे, इतनी, इतनों, जितने आदि ।

अव्ययजन्य भाववाचक संज्ञा (Adstract noun made by indclinables) —किसी अव्यय से बनी भाववाचक संज्ञा को अव्ययजन्य भाववाचक संज्ञा कहते हैं । जैसे—नित्यत्व, देरी आदि । (दे० संज्ञा भाववाचक संज्ञा)

अवृत्ताकार स्वर (Unrounded vowels)—जिन स्वरों के उच्चारण में होंठ गोल नहीं होते, उ, अ, ओ, औ को छोड़ कर अन्य स्वर अवृत्ताकार हैं ।

अशुद्ध वाक्य (Wrong sentense)—जो वाक्य व्याकरण के नियमों अथवा भाषा की सहज प्रकृति के विरुद्ध हो, उसे अशुद्ध वाक्य कहते हैं । जैसे—लड़की गाता है । (साथ ही दे० असाधु, साधु, शुद्ध वाक्य) ।

असमान स्वर (Unlike vowels or different vowels)—इसी को असवर्ण स्वर, असवर्णीस्वर, विजातीय स्वर कहते हैं । जिन स्वरों के स्थान और प्रयत्न समान नहीं हैं । जैसे—अ इ; अ उ, इउ इत्यादि असवर्ण हैं । ए ऐ, ओ औ भी असमान/असवर्ण स्वर हैं, क्योंकि ये अन्य असवर्ण स्वरों से ही बने है ।

असाधु वाक्य (Wrong sentense)—रचना-सम्बन्धी दोष अथवा अर्थ-सम्बन्धी संशय, अस्पष्टता होने पर वाक्य असाधु माना जाता है । जैसे—

रचना सम्बन्धी दोष—उसकी कुछ समझ में नहीं आया ।

अर्थ सम्बन्धी दोष—आपके पास पढ़ने का आदेश देने के लिये अपना रेडियो हो सकता है ।

अर्थ सम्बन्धी दोष—वह पति के प्रति पीड़ा ग्रस्त हो उठी ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आ

आ—यह देवनागरी वर्णमाला के स्वरों में दूसरा स्वर है, जो अ का दीर्घ रूप है। इसका उच्चारण—स्थान कण्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत तथा वाह्य प्रयत्न उदात्त, अनुदात्त और स्वरित है । यह दीर्घ आ उदात्त, अनुदात्त, और स्वरित वे अनुनासिक तथा अनुनासिक होने से छह प्रकार का होता है। आधुनिक भाषा शास्त्रियों के मत से यह विवृत पश्चस्वर है। संस्कृत में इसका प्रयोग अव्यय के रूप मे भी होता है और चार अर्थ देता है—

1. तक या पर्यन्त
2. आदि से अन्त तक या सर्वत्र व्याप्त
3. कुछ या थोड़ा
4. किसी अवधि या सीमा के आगे पीछे या बाहर भी ।

यह उपसर्ग भी है ।

आ कर शब्द—पूर्व भाषिक परम्परा से प्राप्त शब्दों को; आ कर कहते हैं। (दे० शब्द) जैसे—राजा, कमल, ग्राम जादि ।

आ कर शब्दों के दो भेद हैं—

1. तत्सम
2. तद्भव (दे० यथास्थान)

आकस्मिक शब्द—ऐसे शब्द जिनके उद्गम का स्रोत अज्ञात हो, आकस्मिक शब्द कहलाते हैं। जैसे आग, लटटू, भीड़, चूड़ी आदि ।

आकार सूचक गुण वाचक विशेषण—गुणवाचक विशेषण का एक भेद। (दे० विशेषण, गुण वाचक)

आख्यात—संस्कृत भाषा में शब्दों के दो मुख्य विभाग किये गये हैं—'नाम' (दे० यथास्थान) और 'आख्यात।' हिन्दी ने संस्कृत के 'आख्यात' (धातु) को तद्भव रूप में अपनाया है। (विशेष दे० शब्द, नाम, आख्यात)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आगत शब्द (Loan words)—अन्य भाषाओं से प्राप्त शब्दों को 'आगत' शब्द कहते हैं। जैसे—कोट, टिकिट, किस्मत, स्टेशन आदि। आगत शब्दों के भी दो भेद होते हैं—

1. तत्सम 2. तद्भव

आगत शब्द यदि विदेशी भाषाओं से लिए गये हों तो उन्हें विदेशी और यदि क्षेत्रीय भाषाओं से लिए गये हों तो उन्हें क्षेत्रीय कहते हैं।

जैसे—कोट, टिकिट, स्टेशन आदि विदेशी आगत शब्द हैं, जबकि डोसा, इडली, पिल्ला, गल्प आदि क्षेत्रीय आगत शब्द हैं।

आघात (Accent)—किसी शब्द के उच्चारण में उसके किसी अक्षर पर अधिक बल देने की क्रिया को 'आघात' कहते हैं।

जैसे—'अर्थात्' शब्द में 'था' के 'अ' स्वर पर स्वराघात है। 'आघात' को 'स्वराघात' भी कहते हैं। (दे० बलाघात)

आज्ञार्थ (Imperative Mood)—क्रिया के जिस रूप से किसी विधान के लिए आज्ञा, उपदेश, प्रार्थना या निषेध सूचित हो। (दे० अर्थ)

आज्ञा सूचक वाक्य (Imperative Sentense)—उस वाक्य को आज्ञा सूचक वाक्य कहते हैं जिसमें किसी को किसी काम में प्रवृत्त करने के लिए आदेश या निर्देश किया गया हो; जैसे—आप वहाँ जाइए, आप वहाँ चले जाना आदि। (दे० वाक्य)

आभ्यंतर प्रयत्न (Internal Effort)—वर्णों के उच्चारण की रीति को प्रयत्न कहते हैं। ध्वनि उत्पन्न होने से पहते वागिन्द्रिय की क्रिया को आभ्यंतर प्रयत्न और ध्वनि के अन्त की क्रिया को बाह्य प्रयत्न कहते हैं।

आभ्यंतर प्रयत्न के अनुसार वर्णों के मुख्य चार भेद हैं—

1. **विवृत**—इनके उच्चारण में वागिन्द्रिय खुली रहती है। स्वरों का प्रयत्न विवृत कहलाता है।

2. **स्पृष्ट**—इनके उच्चारण में वागिन्द्रिय का द्वार बन्द रहता है। 'क' से लेकर म तक 25 व्यंजनों को स्पृष्ट वर्ण कहते हैं।

3. **ईषत् विवृत**—इनके उच्चारण में वागिन्द्रिय कुछ खुली रहती है इस भेद में—य, र, ल, व हैं। इनको अन्तस्थ वर्ण भी कहते हैं। क्योंकि इनका उच्चारण स्वर और व्यंजनों का मध्यवर्त्ती है। (दे० अन्तवर्त्ती)

4. **ईषत् स्पृष्ट**—इनका उच्चारण वागिद्रिन्य के कुछ बन्द रहने से होता है :—श, ष, स, ह। इन वर्णों के उच्चारण में एक प्रकार का घर्षण होता है, इसलिए इन्हें ऊष्म वर्ण भी कहते हैं। (दे० ऊष्म)

आवृत्ति बोधक निश्चित संख्यावाचक विशेषण (Multiplicative definite numeral adjective)—संख्यावाचक विशेषण का एक भेद।

(दे० विशेषण, संख्यावाचक)

आसन्न भूतकाल (Present Perfect tense, Contiguous Past tense)—जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की निकटता का बोध हो, उसे आसन्न भूतकाल कहते हैं। इसके चार प्रकार हैं। (दे० काल, भूतकाल)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इ

इ—यह देवनागरी वर्णमाला का तीसरा अक्षर और तीसरा स्वर है। संस्कृत-वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण-स्थान तालु, आभ्यंतर प्रयत्न विवृत तथा बाह्य प्रयत्न उदात्त और स्वरित हैं। यह उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के अनुनासिक तथा अननुनासिक होने से छः प्रकार की होती है। इसका दीर्घरूप 'ई' होता है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार यह संवृत्त अग्रस्वर है। अव्यय के रूप में इसका अर्थ 'हो' है। सर्वनाम=यह।

इ-वर्ण—इ, ई स्वर—वर्णों को इ—वर्ण कहते हैं। (दे० वर्ण)

इच्छा सूचक वाक्य (Optetive Sentense)—ऐसा वाक्य जिससे इच्छा या अभिलाषा व्यक्त हो। जैसे—ईश्वर तुम्हें सदैव सुखी रखे आदि। (दे० वाक्य)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ई

ई—यह देवनागरी वर्णमाला का चौथा अक्षर और चौथा स्वर है। जो 'इ' का दीर्घरूप है। संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण स्थान तालु है, आभ्यन्तर प्रत्यन विवृत्त तथा बाह्य प्रयत्न उदात्त, अनुदात्त और स्वरित है। यह उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के अनुनासिक और अननुनासिक होने से छह प्रकार का होता है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार यह संवृत दीर्घ अग्र स्वर है और इसके उच्चारण में जीभ का अगला भाग इतना ऊपर उठ जाता है कि कठोर तालु के बहुत निकट पहुँच जाता है। प्रत्यय के रूप में इससे कई काम लिए जाते हैं, यथा—

1. पुलिंग से स्त्री लिंग बनाने में,
2. संज्ञाओं से विशेषण बनाने में,
3. संज्ञाओं से उनके कर्त्ता रूप बनाने में,
4. विशेषणों से भाव वाचक संज्ञा बनाने में,
5. कुछ क्रियाओं से उनकी भाव-वाचक संज्ञाएँ बनाने में।

सर्वनाम=यह
अव्यय =ही

ईषत् विवृत्त वर्ण (Petters of Slightly Open Effort)—जिन वर्णों के उच्चारण के आभ्यन्तर प्रयत्न में वाक् इन्द्रिय के अंग कुछ विस्तृत या खुले हुए रहते हैं, ऐसे चार ऊष्म वर्ण 'ईषत् विवृत्त वर्ण' हैं। (दि० आभ्यन्तर प्रयत्न)

ईषत् संवृत्त वर्ण/ईषत् स्पृष्ट वर्ण (Petters of Slightly Touching effort)—जिन वर्णों के उच्चारण के आभ्यन्तर प्रयत्न में वाक्इन्द्रिय के अंग कुछ संकुचित या छिपे हुए रहते हैं, वे चार अंतस्थ वर्ण ईषत् संवृत या ईषत् स्पृष्ट वर्ण हैं। (दे० आभ्यन्तर प्रयत्न)

ईषद्विवृत्त—कुछ वैयाकरणों के अनुसार श, ष, स और ह का आभ्यन्तर प्रयत्न ईषद्विवृत है। कुछ विद्वान् स्वरों के साथ इनका भी आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत्त ही मानते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उ

उ—यह नागरी वर्णमाला का पाँचवाँ स्वर है जो ह्रस्व है। यह ह्रस्व, ओष्ठ्य, घोष तथा संवृत्त स्वर है। संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण स्थान ओष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत्त तथा बाह्य प्रयत्न उदात्त, अनुदात्त और स्वरित हैं। यह उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के अनुनासिक और अनुनासिक होने से छह प्रकार का होता है। डा० धीरेन्द्र वर्मा के मत से यह संवृत्त ह्रस्व पश्चस्वर है। बाबू श्यामसुन्दर दास के मत से इसके उच्चारण में जिह्वामध्य अर्थात् जिह्वा का पिछला भाग कण्ठ की ओर काफी ऊँचा उठा रहता है। पूर्व हिन्दी में कुछ शब्दों के अन्त में लगकर यह 'भी' का अर्थ भी देता है, जैसे—तरनिउ।

उत्तम पुरुष (First Person)—वक्ताबोधक सर्वनाम तू, आप और इनके रूपान्तर उत्तम पुरुष कहलाते हैं। (दे० पुरुष)

उत्क्षिप्त (Flapped)—ड़० और ढ़ व्यंजनों का उच्चारण करते समय जिह्वा झटके से ऊपर जाती है, इसलिये इन्हें 'उत्क्षिप्त व्यंजन कहते हैं। उत्क्षिप्त का अर्थ है—ऊपर फेंका हुआ। चटर्जी और कादरी आधुनिक र् को भी उत्क्षिप्त (अँग्रेजी फ्लेप्ड) मानते हैं, लुंठित नहीं।

उत्क्षिप्त ध्वनियों का उच्चारण डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार जीभ की नोंक को उलट कर नीचे के हिस्से से कठोर तालु को झटके के साथ कुछ दूर तक छू कर किया जाता है।

उत्सर्ग—नियमानुकूल या साधारण नियमबद्ध शब्द आदि को उत्सर्ग कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उदात्त (Accutely Accented Vowel)—जब कोई स्वरवर्ण मुख के तालु आदि स्थान के ऊपरी भाग द्वारा ऊँचे स्वर से बोला जाये, तो उसे 'उदात्त' या 'उदात्त प्रयत्नोच्चरित स्वर' कहते हैं ।

उदात्त स्वरों का एक बाह्य प्रयत्न है । तालु आदि स्थानों में ऊर्ध्व भाग में निष्पन्न होने वाला स्वर उदात्त होता है ! पाणिनिसूत्र ('उच्चैरुदात्त' 1/2/29)

उदात्त प्रयत्न—(Accute Effort)—जिस बाह्य प्रयत्न से उदात्त स्वर बोला जाय, उसे उदात्त प्रयत्न कहते हैं ।

उद्देश्य (Subject)—वाक्य के दो आवश्यक घटक होते हैं—(1) उद्देश्य, (2) विधेय । मूल क्रियापद जिस व्यक्ति, वस्तु आदि के सम्बन्ध में विधान करते हैं, उसके सूचक संज्ञा या संज्ञातुल्यपद को उद्देश्य कहते हैं। संज्ञातुल्य पद से अभिप्रायः ।

(अ) सर्वनाम पदों से होता है, जो उनके स्थान पर प्रयुक्त होते हैं, और

(ब) ऐसे संज्ञा विशेषण पदों से होता है जो संज्ञावत् प्रयुक्त होते हैं ।

मानक हिन्दी कोश में श्री रामचन्द्र वर्मा ने उद्देश्य की परिभाषा इस प्रकार दी है, "वह जिसके विचार से या जिसे ध्यान में रखकर कुछ कहा या किया जाय ।"

वस्तुतः वाक्य में जिसके विषय में कुछ विधान किया जाय अर्थात् कुछ कहा जाय, उसे सूचित करने वाले शब्द या शब्दों को उद्देश्य कहते हैं । जैसे—मैं आया । वह छोटा-सा बालक अपना पाठ याद कर रहा है । में 'मैं', 'वह छोटा-सा बालक' उद्देश्य है ।

उद्देश्य के सम्बन्ध में ध्यान देने की बात है—

1. **साधारण या मूल उद्देश्य** (Simple or pure Subject)—विशेषणों को छोड़कर उद्देश्य के मूलभाग को 'मूल उद्देश्य' या 'साधारण उद्देश्य' कहते हैं । जैसे—ऊपर के वाक्य में 'बालक' ।
2. **उद्देश्य वर्धक या उद्देश्य का विस्तार** (Attributive adjuncts to Subject or enlargement of Subject)—मूल उद्देश्य के विशेषण या विशेषणों को तथा विभक्ति सहित सम्बन्धकारक को (यदि कोई हो), उद्देश्य वर्द्धक' या 'उद्देश्य का विस्तार' कहते हैं । जैसे—ऊपर के उसी वाक्य में 'वह छोटा सा' ।
3. उद्देश्य यदि संज्ञापद हो तो उसके लिंग, वचन और पुरुष तथा विधेय के लिंग, वचन और पुरुष में समानता होगी ।
4. उद्देश्य यदि पुरुषवाचक सर्वनाम हो तो उसके लिंग, वचन और पुरुष में समानता होगी ।
5. उद्देश्य यदि एक वचन स्त्री लिंग संज्ञापद हो तो मूल क्रियापद के 'आ' का ई हो जाता है, जैसे—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(ह्+ऐ)=है, (थ+आ)=था (ह+ओ+ग्+आ)=होगा
↓ ↓
ई =थी ई =होगी

स्त्री है/थी/होगी।

6. उत्तम पुरुष 'मैं' के अतिरिक्त कोई अन्य एक वचन सर्वनाम पद उद्देश्य होने पर क्रियापद अपने सामान्य रूप में प्रयुक्त होता है।

7. सर्वनाम उद्देश्य का लिंग उस संज्ञापद के लिंग के अनुरूप होगा जिसका स्थान वह ग्रहण करता है।

8. 'मैं' सर्वनाम उद्देश्य होने पर मूल क्रिया पदों के 'ऐ' तथा 'ओ' स्वरों का 'ऊँ' हो जाता है। जैसे—

ह्+ऐ—है थ्+आ—था ह्+ओ+ग्+आ=होगा
↓ ↓ ↓
ऊँ—हूँ था— ऊँ =हूँगा

9. उद्देश्य यदि पुलिंग बहुवचन संज्ञापद हो तो मूल क्रियापद के 'आ' स्वर का 'ऐ' हो जाता है एवं ऐ और ओ स्वर अनुनासिक हो जाते हैं, जैसे—

ह्+ऐ=है, थ्+आ=था ह्+ओ+ग्+आ= होगा
↓ ↓ ↓
ऐ=हैं, ए=थे ओं— =होंगे

10. उद्देश्य यदि स्त्री लिंग बहुवचन संज्ञापद हो तो स्त्री लिंग एकवचन उद्देश्य के साथ प्रयुक्त क्रिया रूपों के स्वर अनुनासिक हो जाते हैं।

(विशेष दे० क्रियापद)

उद्देश्य पूर्ति (Subiect Complement)—अपूर्ण अकर्मक क्रिया-पूर्ति को उद्देश्य पूर्ति कहते हैं। उद्देश्य प्रायः कर्त्ताकारक के रूप में रखा जाता है, इसीलिये उद्देश्य पूर्ति को 'कर्त्ता पूर्ति' भी कहते हैं। (दे० पूर्ति)

उपध्मानीय वर्ण (Dento-Labial Letters)—≍ यह एक वर्ण उपध्मानीय है। इसका उच्चारण भी वेद मन्त्रों में या प्राकृत भाषा में दो प्रकार से किया जाता है, जो अर्द्ध विसर्गयुक्त प और फ के उच्चारण के बहुत कुछ समान है, और उर्दू भाषा के फ़ अक्षर के उच्चारण से बहुत समानता रखता है। इसीलिये इसके दोनों प्रकार के उच्चारण को प्रकट करने के लिये इसके आगे यथा आवश्यक प और फ अक्षर लिख दिये जाते हैं। यथा ≍ प और ≍ फ।

उपपद—रचना भेद, अर्थभेद तथा प्रयोग भेद की दृष्टि से जब शब्दों एवं सहायक शब्दों पर विचार किया जाता है, तब उन्हें पद और उपपद कहते हैं।

उपवाक्य (Clause)—जब एक बड़ा वाक्य दो या अधिक साधारण वाक्यों से किसी व्यक्त या अव्यक्त रूप समुच्चय बोधक अव्यय द्वारा जुड़कर बना हो तो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उन साधारण वाक्यों में से प्रत्येक को अपवाक्य कहते हैं। उपवाक्य के दो प्रमुख भेद हैं—

1. **समानाधिकरण उपवाक्य** (Co-ordinate Clause)—समानाधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय या अव्ययों से जुड़े हुए दो या अधिक उपवाक्यों को, जो एक दूसरे पर आश्रित नहीं होते, 'समानाधिकरण उपवाक्य' कहते हैं।

   इन्हें ही निराश्रय या स्वतन्त्र उपवाक्य कहते हैं।

2. **आश्रित उपवाक्य** (Sub-ordinate Clause)—व्याधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय या अव्ययों से जुड़े हुए दो या अधिक उपवाक्यों में से जो उपवाक्य मुख्य उपवाक्य के आश्रित हों, उन्हें 'आश्रित उपवाक्य', कहते हैं। आश्रित उपवाक्य के तीन भेद हैं—

2-1. **संज्ञा उपवाक्य** (Noun Clause)—जो आश्रित उपवाक्य अपने मुख्य उपवाक्य की किसी संज्ञा का कार्य करें, अर्थात् जो मुख्य उपवाक्य की क्रियां का उद्देश्य या कर्म अथवा पूरक आदि का काम दे। जैसे—उसने मुझसे कहा कि मैं आगरा जाता हूं। इस वाक्य में दूसरा उपवाक्य मुख्य उपवाक्य की सकर्मक क्रिया ('कहा') के कर्म ('आगरा जाने की बात') के बदले आया है।

2-2. **उपवाक्य विशेषण** (Adjective Clause)—जो आश्रित उपवाक्य मुख्य उपवाक्य की किसी संज्ञा की विशेषता प्रकट करे। जैसे—वह लड़का अवश्य दण्ड पाता है जो चोरी करता है। यहाँ दूसरा उपवाक्य मुख्य उपवाक्य की एक संज्ञा ('लड़का') की विशेषता प्रकट करता है और 'चोरी करने वाला' के बदले आया है।

2-3. **क्रिया विशेषण उपवाक्य** (Adverbial Clause)—जो आश्रित उपवाक्य मुख्य उपवाक्य की क्रिया की कुछ विशेषता दिखाये। जैसे—जब सूर्य उदय हुआ कम खिल गये। यहाँ पहला उपवाक्य दूसरे मुख्य उपवाक्य की क्रिया ('खिल गये') का कालवाचक क्रियाविशेषण है जो 'सूर्य उदय होने के समय' के बदले आया है। (विशेष—मुख्य उपवाक्य के लिए यथास्थान देखिए)

उपसर्ग (Prefixes)—जो शब्दांश किसी शब्द के पहले जोड़े जाने से अपना अर्थ प्रकट करते हैं, उन्हें 'उपसर्ग' कहने हैं। जैसे—अपयश में 'अप' उपसर्ग को अलग अवयव स्वीकार किया जाता है।

उपसर्ग की एक और परिभाषा दी जा सकती है—'क्रिया से पहले लगाये जाने वाले परिगणित निपात उपसर्ग कहे जाते हैं।' डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार उपसर्ग उस अक्षर या अक्षर समूह को कहते हैं, जो शब्द-रचना के लिये शब्द के पहले लगाया जाता है। उपसर्ग से धातु का अर्थ बदल जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तत्सम उपसर्ग कुल 22 हैं : प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दूर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, सु, उत्, अभि, प्रति, परि, उप ।

पाणिनि इनको गतिसंज्ञक भी बताते हैं ।

कामताप्रसाद गुरु द्वारा हिन्दी के कुछ तद्भव उपसर्ग इस प्रकार गिनाये गये हैं—

1. अ या अन; (निषेधात्मक); अजान, अनमोल, अनचाहा ।
2. अध (आधा); अधपका, अधबूढ़ा ।
3. उन (एककम); उन्तीस, उनसठ ।
4. औ (हीन), औगुन ।
5. दु (बुरा); दुकाल, दुबला ।
6. दु (दो); दुधारा, दुमुहा ।
7. नि (रहित); निडर, निकम्मा ।
8. बिन (अभाव); बिना ब्याहा ।
9. भर (पूरा); भरसक, भरपेट ।

कुछ अरबी-फारसी तथा अँग्रेजी के उपसर्ग हिन्दी के प्रचलित उपसर्ग बन गये हैं, यथा—

1. कम (थोड़ा); कमजोर, कमदाम ।
2. खुश (अच्छा); खुशदिल, खुशकिस्मत ।
3. गैर (भिन्न); गैरहाजिर ।
4. दर (में); दरअसल ।
5. ना (अभाव); नापसंद, नालायक ।
6. ब (अनुसार); बदस्तूर, बदौलत ।
7. बद (बुरा); बदमाश, बदनाम ।
8. बिला (बिना); बिलाकसूर, बिलाशक ।
9. बे (बिना); बेकार, बेईमान ।
10. ला (बिना), लाचार, लावारिस, इसी तरह हर (प्रत्येक), हम (साथ), इत्यादि । इसी तरह अँग्रेजी के उपसर्ग हैं—

1. सब (छोटा); सब रजिस्ट्रार ।
2. डिप्टी (छोटा), डिप्टी कलक्टर ।
3. हेड (मुख्य); हेडमास्टर, हेड क्लर्क ।

उपसर्ग नामक अव्यय (Prefixes)—जो अव्यय कुछ अन्य शब्दों के आदि में जोड़े जाते हैं और जिनके जुड़ने से उन शब्दों के अर्थ में कुछ परिवर्तन होकर कुछ विशेषता आ जाती है । जैसे—अभिमान, अपमान, सम्मान आदि । (दे० अव्यय)

उभय विध क्रिया (Verbs Both Transitive and Intransitive According to the Context)—जो क्रिया प्रयोगानुसार कहीं अकर्मक हो और कहीं सकर्मक । (दे० क्रिया)

उ वर्ण—उ, ऊ को उ वर्ण कहते हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऊ

ऊ—यह देवनागरी वर्णमाला का छठा स्वर-वर्ण है। संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण स्थान ओष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत्त तथा बाह्य प्रयत्न अनुदात्त और स्वरित है। यह उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित के अनुनासिक और निरनुनासिक होने से छः प्रकार का होता है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार यह संवृत्त दीर्घ पश्च स्वर है।

इसके उच्चारण में जीभ का पिछला भाग उठकर कोमल तालु के बहुत निकट पहुँच जाता है। अव्यय के रूप में यह (i) भी, का अर्थ देता है। जैसे—तेऊ, ऐऊ, (ii) 'वाला' का अर्थ देता है—खाऊ, बेचू आदि। सर्वनाम=वह।

ऊष्म (Hissing or Sibilant)—ऊष्म का अर्थ है—गरम। संघर्षी व्यंजनों को ऊष्म कहते हैं, क्योंकि इनके उच्चारण में श्वास संघर्षण करते हुए निकलता है, फलस्वरूप श्वास कुछ गरम हो जाता है।

श्, ष्, स् और ह् व्यंजन ऊष्म या संवर्षी व्यंजन हैं।

ऊष्म चतुष्क—ऊष्म व्यंजन ही का दूसरा नाम 'ऊष्म चतुष्क' है, क्योंकि ये चार हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऋ

ऋ—यह देवनागरी वर्णमाला का सातवाँ स्वर-वर्ण है। जिसका उच्चारण मूर्द्धा से होता है। संस्कृत में इसके ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत तीनों प्रकार के उच्चारण होते हैं, पर हिन्दी में इसका प्रस्तुत ह्रस्व रूप ही चलता है; शेष रूप नहीं चलते।

आजकल हिन्दी में इसका उच्चारण 'रि' के समान ही होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ए

ए—यह देवनागरी वर्णमाला का आठवाँ स्वर-वर्ण है। संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण स्थान कण्ठ तालु, आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत्त तथा बाह्य प्रयत्न उदात्त, अनुदात्त और स्वरित हैं। यह उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के अनुनासिक होने से छः प्रकार का होता है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के मत से यह अर्द्ध संवृत्त दीर्घ अग्रस्वर है और इसका उच्चारण स्थान प्रधान स्वर ए से कुछ नीचा है। इसके उच्चारण में होंठ प्रधान स्वर ई की अपेक्षा कुछ अधिक खुलते हैं। वस्तुतः यह अर्द्ध संवृत्त, दीर्घ, कंठ्य-तालव्य स्वर है। 'ऐ' इसका दीर्घ रूप है। सर्वनाम=यह

एकाच् (Mono Syllable)—वाक्यों के चार प्रमुख भेदों में से एक। इन्हें अयोगात्मक वाक्य भी कहते हैं। (दे० वाक्य विचार—अयोगात्मक)

एकाक्षर—एकाच् को एकाक्षर भी कहते हैं। (दे० एकाच्)

एक कर्मक क्रिया (Transitive Verb of one Subject)—जिस सकर्मक क्रिया का कर्म केवल एक ही हो। जैसे—पढ़ना, उसने किताब पढ़ी।

एक वचन (Singular Number)—शब्द के जिस रूप से उसके एकत्व का बोध हो। जैसे—पुस्तक, लड़का, गाय। (दे० वचन—एक वचन) दूसरे शब्दों में जब संज्ञा पद एक इकाई का सूचक हो, तो उसे एक वचन, कहते हैं। जैसे—लड़का जा रहा है। (लड़का—एक वचन)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऐ

ऐ—यह देवनागरीवर्णमाला का नवाँ स्वर-वर्ण है। संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण—स्थान कण्ठ तालु, आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत्त तथा बाह्य प्रयत्न उदात्त, अनुदात्त और स्वरित हैं। यह अनुदात्त और स्वरित के अनुनासिक तथा अननुनासिक होने से छः प्रकार की होती है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के मत से यह संयुक्त स्वर हिन्दी में शीघ्रता से बोलने में 'ए' मूल ह्रस्व स्वर हो जाता है। वस्तुतः भाषा-विज्ञान और व्याकरण की दृष्टि से यह अर्द्ध संवृत्त दीर्घ पश्चस्वर है।

अव्यय में रूप में इसका अर्थ सम्बोधन 'हे' के रूप में मिलता है।

अवधी में यह शब्दों के अन्त में लगकर 'को' विभक्ति का अर्थ देता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओ

ओ—यह देवनागरी वर्णमाला का दसवाँ स्वर-वर्ण है। संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण-स्थान कंठोष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत्त तथा बाह्य प्रयत्न उदात्त, अनुदात्त और स्वरित है, जो अनुनासिक और अननुनासिक होने से छः प्रकार का होता है। आधुनिक भाषा-शास्त्रियों के मत से यह अर्द्ध विवृत्त दीर्घ पश्चस्वर है। संस्कृत में यह संयुक्त स्वर था। (अ+उ या आ+उ) (पाणिनि सूत्र आद् गुण : 6/1/87)। संस्कृत के इस नियम के अनुसार अब भी हिन्दी में कुछ लोग इसे संयुक्त-स्वर या संध्यक्षर मानते हैं इसके उच्चारण में होंठ स्पष्ट रूप में गोल हो जाते हैं। पूर्वी हिन्दी में यह—'वह' का वाचक है ; (ओकर=उसका)।

ओष्ठ्य (Labials)—स्पर्श ध्वनियों का पाँचवाँ विभाजन। इनके उच्चारण में जीभ से बिलकुल सहायता नहीं ली जाती। दोनों होठों को छुआ कर और श्वास को रोक कर निकालते हुए इनका उच्चारण होता है। संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार 'उ', प वर्ग, उपध्मानीय ध्वनियाँ (दे० यथास्थान) इस कोटि में आती हैं।

इस तरह होठों से बोले जाने वाले सात अक्षर ओष्ठ्य वर्ण कहलाते हैं। वे हैं—उ, ऊ, प्, फ्, ब्, भ्, म।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

औ

औ—यह देवनागरी वर्णमाला का ग्यारहवाँ स्वर-वर्ण है।

इसका उच्चारण-स्थान और प्रयत्न 'ओ' के समान है।

विशेष—दे० 'ओ'। यह अ+ओ के संयोग से बना है।

अवधी, ब्रज आदि बोलियों में संज्ञाओं, विशेषणों आदि के अन्त में प्रयत्न के रूप में लगकर यह 'भी' का अर्थ देता है। जैसे—ऊखौ=ईख भी)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क

क—यह हिन्दी वर्णमाला का पहला व्यंजन है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण-स्थान कण्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट और बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, विचार, श्वास. और अघोष है। आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, अघोष, स्पर्श व्यंजन है और इसका उच्चारण जिह्वा के पिछले भाग को कोमल तालु से छुआ कर लिया जाता है। प्राचीन भारतीय आर्य भाषा-काल में इसका उच्चारण 'क्' के निकट था—अतः इसे कठ्य माना जाता था। आजकल इसका उच्चारण-स्थान कुछ आगे हट गया है। (डा० धीरेन्द्र वर्मा)। बाबू श्याम सुन्दरदास ऋक्—प्रातिशाख्य से उद्धरण देकर (ऋकार-लकारावथ षष्ठ ऊष्मा जिह्वामूलीया, प्रथमश्च वर्गः) बताते हैं कि पहले क वर्ग जिह्वामूलीय माना जाता था, पीछे कंठ्य हो गया। 'कंठ्य का अर्थ वे 'कोमल तालव्य', मानते हैं।

क्—यह अरवी-फारसी की ध्वनि है। अरबी-फारसी के तत्सम शब्दों में इसका प्रयोग किया जाता है। लिखने-बोलने में आजकल प्रायः इसे बिना नीचे बिन्दी लगाये (नुक्ता रहित) ही प्रयोग किया जाता है। वस्तुतः यह विदेशी ध्वनि है। यह अल्पप्राण, अघोष, जिह्वामूलीय स्पर्श व्यंजन है। जैसे—क़ाबिल, क़ातिब।

कंठ्य (Guttural)—स्पर्श ध्वनियों का पहला विभाजन। इनके उच्चारण में ध्वनियन्त्र से आने वाले घोष या अघोष श्वास को कंठ के पास रोककर झटके के साथ मुक्त किया जाता है। आधुनिक विद्वान इन ध्वनियों को कंठ्य स्पर्श न मानकर 'कोमल तालव्य स्पर्श' मानते हैं। इसका कारण यह है कि वस्तुतः इनके उच्चारण में जीभ के पिछले भाग से कोमल तालु का स्पर्श किया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अ, क वर्ग, ह और विसर्ग इस कोटि में आते हैं। इस तरह अ, आ, क, ख, ग, घ, ङ, ह और : (विसर्ग) ये नौ अक्षर कंठ्य वर्ण (Gutturals or Throat Letters) हैं।

कंठ तालव्य (Plato Gutturals)—कंठ और तालु से बोले जाने वाले दो अक्षर ए ऐ हैं, ये कंठ तालव्य कहलाते हैं।

कंठोष्ठ्य (Libio-Gutturals)—कंठ और ओठों से बोले जाने वाले अक्षर 'ओ' और 'औ' कंठोष्ठ्य कहलाते हैं।

करण—क्रिया के निष्पादन में जो नाम पद सबसे अधिक साधक होता है, उसे करण कहते हैं।

करण कारक (Instrumental Case)—संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उसकी वाच्यवस्तु का कर्त्ता द्वारा की गई क्रिया के कार्य का साधन होना सूचित हो, उसे 'करण' कारक कहते हैं। इसके चिह्न 'से', के द्वारा' और 'रे द्वारा' हैं।

कर्तरि प्रयोग (Subjective Application)—जहाँ क्रिया का रूपान्तर कर्त्ता के पुरुष, लिंग और वचन के अनुसार हो। (दे० प्रयोग)

कर्तव्यार्थ (2nd Potential Mood)—क्रिया के जिस रूप से कर्त्ता का कर्त्तव्य सूचित हो। (दे० अर्थ कर्त्तव्यार्थ)।

कर्म (Object Done upon)—समर्मक क्रिया से सूचित होने वाले कार्य का फल कर्त्ता से निकल कर जिस धातु पर पड़े उसे कर्म कहते हैं। अथवा क्रिया का फल कर्त्ता से भिन्न जिस संज्ञापद या संज्ञातुल्य पद पर पड़ता है, उसे कर्म कहते हैं। इसमें 'को' विभक्ति-परसर्ग आता है।

प्रेम पुस्तक को पढ़ता है।

यहाँ पढ़ने की क्रिया 'प्रेम' करता है। अतः 'प्रेम' कर्त्ता हुआ। पढ़ने की क्रिया का फल पुस्तक पर पड़ता है—वही तो पढ़ी जाती है। अतः 'पुस्तक' कर्म है।

सामान्यतः कर्त्ता और क्रियापद के बीच ही कर्म को रखते हैं, किन्तु यदि कर्म पर जोर देना हो तो उसे कर्त्ता के पहले रखते हैं, क्रियापद पर जोर देना हो तो उसे कर्म के पहले रखते हैं और कर्त्ता पर जोर देना हो तो उसे क्रिया पद के बाद रखते हैं; जैसे—प्रेम पुस्तक को पढ़ता है। **पुस्तक को** प्रेम पढ़ता है। प्रेम **पढ़ता है** पुस्तक को। पुस्तक को पढ़ता है **प्रेम**।

कर्म के बाद उस समय या तो कोई विभक्ति परसर्ग नहीं आता अथवा 'अ' विभक्ति-प्रत्यय आता है, जब वह किसी पदार्थ, साधारण जीव, भाव आदि का सूचक हो। (कर्म के बाद 'अ' विभक्ति प्रत्यय का भी लोप हो जाता है, जैसे—प्रेम पुस्तक पढ़ता है।)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बल; निश्चय आदि की विवक्षा सूचित करने के लिये अ, विभक्ति-प्रत्यय के स्थान पर प्रायः जीव तथा पदार्थ सूचक संज्ञापदों के बाद 'को' विभक्ति परसर्ग वरीय समझा जाता है, जैसे—

(क) राम घोडा खरीदेगा।

(ख) राम घोड़े को खरीदेगा।

यहाँ (ग) वाक्य से आशय है कि राम घोड़ा अवश्य खरीदेगा।

अनेक क्रियापदों द्वारा सूचित क्रिया का फल कर्त्ता से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति, वस्तु आदि पर नहीं पड़ता, जैसे—

राम दौड़ता है।

लड़का खेलता है।

कर्म के चार भेद हैं—

1. मुख्य कर्म, 2. गौण कर्म, 3. सजातीय कर्म, 4. पूरक।

(1) **मुख्य कर्म या प्रधान कर्म** (Direct Object)—द्विकर्मक क्रिया प्रायः पदार्थवाचक कर्म मुख्य कर्म होता है। (दे० द्विकर्मक क्रिया)

(2) **गौण कर्म या अप्रधान कर्म** (Indirect Object)—द्विकर्मक क्रिया का प्रायः प्राणिवाचक कर्म गौण कर्म होता है।

(3) **सजातीय कर्म** (Cognate Object)—सजातीय अकर्मक क्रिया के कर्म को, जो उसी क्रिया का कोई रूपान्तर होता है, 'सजातीय कर्म' कहते हैं। जैसे—उसने अच्छी चाल चली, उसने अच्छा गाना गाया। इनमें चाल, गाना सजातीय कर्म हैं। (दे० सजातीय अकर्मक क्रिया)

(4) **पूरक** (Completion or Object of a Transitive Verb)—सकर्मक क्रिया के कार्य की पूर्ति जिस कर्म या कर्मों द्वारा होती है, उस कर्म या कर्मों को 'पूरक' कहते हैं।

कर्मपूर्ति (Objective Complement)—अपूर्ण सकर्मक क्रिया की पूर्ति को 'कर्मपूर्ति' कहते हैं। (दे० पूर्ति-कर्मपूर्ति)

कर्त्ता (Subject/Doer)—क्रिया के व्यापार या कार्य को करने वाला 'कर्त्ता' कहलाता है। जिस शब्द से किसी क्रिया के व्यापार को करने वाले का बोध हो, उसे व्याकरण की परिभाषा में 'कर्त्ता' कहते हैं। इसी को 'कर्तृपद' भी कहते हैं। (वि० दे० कारक-कर्त्ताकारक) कर्त्ता क्रिया में स्वतः प्रवृत्त होता है या क्रिया करने या न करने में स्वतन्त्र होता है।

कर्त्ता के दो भेद हैं—

(1) **प्रेरक कर्त्ता** (Causative Doer)—प्रेरणार्थक क्रिया का कार्य कराने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वाले को प्रेरक कर्त्ता कहते हैं। अर्थात् प्रेरणार्थक क्रिया के दो कर्त्ताओं में से जो कर्त्ता क्रिया के व्यापार की प्रेरणा करने का बोधक हो।

(दे० क्रिया-प्रेरणार्थक क्रिया)

(2) **प्रेरित कर्त्ता** (Instrumental Doer)—प्रेरणार्थक क्रिया का कार्य जिससे कराया जाये, उसे प्रेरित कर्त्ता कहते हैं। अर्थात् प्रेरणार्थक क्रिया के दो कर्त्ताओं में से जो क्रिया का वास्तविक कर्त्ता है, उसे प्रेरित कर्त्ता कहते हैं।

जैसे—वह राम से आम मँगाता है।

इस वाक्य में 'वह' प्रेरक कर्त्ता है, 'राम' प्रेरित कर्त्ता है।

कर्त्ता कारक (Nominative Case)—संज्ञा या सर्वनाम की जिस अवस्था या जिस रूप से उस वस्तु का बोध हो, जिसके द्वारा किसी क्रिया के कार्य का करना या होना पाया जाय, अथवा जिसके विषय में क्रिया द्वारा कुछ कहा जाय या विधान किया जाय; उसे कर्त्ताकारक कहते हैं।

कर्तृवाच्य (Active Voice)—क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि वाक्य का उद्देश्य (दे० उद्देश्य) क्रिया का कर्त्ता है, उस क्रिया-रूप को कर्तृवाच्य कहते हैं। (दे० वाच्य-कर्तृवाच्य)

कर्मवाच्य (Passive Voice)—क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि वाक्य का उद्देश्य, जो कर्त्ताकारक में रखा जाता है, वह यथार्थ में क्रिया का कर्म है, उसे कर्मवाच्य क्रिया कहते हैं। (दे० वाच्य-कर्मवाच्य)

कर्मकारक (Accusative Case)—संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उस वस्तु का बोध हो जिस पर क्रिया के कार्य का फल पड़ता है, उसे कर्मकारक कहते हैं।

कर्मणि प्रयोग (Objective Application)—जहाँ क्रिया का रूपान्तर कर्म के पुरुष, लिंग और वचन के अनुसार हो। जैसे—सीता ने किताब ली।

(दे० प्रयोग—कर्मणि प्रयोग)

कर्तृ बोधक शब्द (Words Denoting Doer or Agent)—जो यौगिक शब्द किसी कार्य के कर्त्ता के सूचक हों, उन्हें कर्तृ बोधक शब्द कहते हैं। जैसे—भिक्षुक (भीख माँगने वाला) पुजारी आदि। (दे० शब्द भेद—कर्तृ बोधक शब्द)

कर्तृ सूचक क्रियार्थक विशेषण (Verbal Adjective Denoting Doer or Agent)—क्रियार्थक विशेषण का एक भेद। (दे० विशेषण—क्रियार्थक विशेषण)

कला बोधक संज्ञा (Nouns of Science or Art)—जो भाव वाचक संज्ञा किसी विद्या या कला का नाम हो। जैसे—वैद्यक, गणित, ज्योतिष आदि।

(दे० संज्ञा-कला बोधक संज्ञा)

क वर्ग व्यंजन—क् आदि पाँच व्यंजनों के समूह को 'क वर्ग' कहते हैं। ये हैं—क्, ख्, ग्, घ्, ङ्।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कारक (Case)—धातु से बना क्रिया-पद जिन संज्ञा पदों के सम्बन्ध में विधान करता है, उनमें सात प्रकार की स्थितियों की कल्पना की गयी है, वे स्थितियाँ हैं—1. कर्त्ता, 2. कर्म, 3. करण, 4. सम्प्रदान, 5. अपादन, 6. सम्बन्ध, 7. अधिकरण। इन्हें 'कारक' कहते हैं।

इस प्रकार संज्ञा या सर्वनाम की अवस्था विशेष को 'कारक' कहते हैं अर्थात् संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उसका सम्बन्ध वाक्य के किसी अन्य शब्द से जाना जाता है, उसे 'कारक' कहते हैं।

कारकत्व सूचित करने के लिए सामान्यतया विभक्ति-परसर्गों तथा विभक्ति-प्रत्ययों का प्रयोग होता है।

सामान्यतः कारक सात हैं—

(1) **कर्त्ता कारक** (Nominative Case)—संज्ञा या सर्वनाम की जिस अवस्था या जिस रूप से उस वस्तु का बोध हो, जिसके द्वारा किसी क्रिया के कार्य का करना या होना पाया जाय अथवा जिसके विषय में क्रिया द्वारा कुछ कहा जाय, उसे कर्त्ता कारक कहते हैं। चिह्न—ने, को, से।

(2) **कर्म कारक** (Accusative Case)—संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उस वस्तु का बोध हो, जिस पर क्रिया के कार्य का फल पड़ता है, उसे कर्म कारक कहते हैं। चिह्न—से, को।

(3) **करण कारक** (Instrumental Case)—संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से वाक्य वस्तु का कर्त्ता द्वारा की गई क्रिया के कार्य का साधन होना सूचित हो उसे करण कारक कहते हैं। चिह्न – से।

(4) **सम्प्रदान कारक** (Dative Case)—जिसे कुछ दिया जाय उसके सूचक नामपद को सम्प्रदान कारक कहते हैं। चिह्न—को, के लिए।

(5) **अपादान** (Ablative Case)—संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप द्वारा उसकी वाक्य वस्तु से किसी अन्य वस्तु का अलग होना प्रकट हो, उसे 'अपादान कारक' कहते हैं। चिह्न—से।

(6) **सम्बन्ध कारक** (Genitive or Passive Case)—जिससे रिश्तानाता या स्वामित्व भाव सूचित करना हो उसे सम्बन्ध कारक कहते हैं।

संस्कृत भाषा में सम्बन्ध को कारक नहीं माना जाता। हिन्दी में भी सम्बन्ध को कारक नहीं माना जाता था, किन्तु आचार्य किशोरी दास बाजपेयी जी ने 'के' को सम्बन्ध कारक की विभक्ति सिद्ध किया है। चिह्न—के, का, की, रा, री, रे।

(7) **अधिकरण कारक** (Locative Case)—संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से कर्त्ता द्वारा की गई क्रिया के कार्य का आधार प्रकट हो, उसे 'अधिकरण कारक' कहते हैं। चिह्न—में, पर।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस के अतिरिक्त एक और कारक है—सम्बोधन कारक ।

काल (Tense)—क्रिया के जिन रूपों से उसके कार्य के समय का तथा उसकी पूर्ण या अपूर्ण अवस्था का बोध होता है, उन्हें क्रिया का 'काल' कहते हैं। अतः काल क्रिया का रूपान्तर है, जिससे क्रिया के व्यापार का समय तथा उसकी पूर्ण और अपूर्ण अवस्था का बोध होता है ।

काल के भेद—उपभेद इस प्रकार हैं—

(1) **भूत काल या अतीत काल** (Past Tense)—क्रिया के जिस रूप से बीते हुए काल का बोध होता है, उसे भूत काल या अतीत काल कहते हैं ।

1·1 **सामान्य भूत काल** (Past Indefinite Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की निकटता या दूरता का बोध न हो ।

1·1-1 **साधारण सामान्य भूत काल** (General Past Indefinite Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की न तो निकटता-दूरता का बोध हो और न उसकी समाप्ति, असमाप्ति का ही बोध हो । जैसे—मैंने पत्र 'लिखा' ।

1·1-2 **समाप्ति सूचक सामान्य भूत काल** (Complete Past Indefiinite Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की निकटता दूरता का तो बोध न हो पर उसकी समाप्ति सूचित होती हो । जैसे—मैं पत्र लिख 'चुका' ।

1·1-3 **असमाप्ति सूचक सामान्य भूत काल** (Incomplete Past Indefinite Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की निकटता दूरता का तो बोध न हो पर उसकी असमाप्ति सूचित होती हो । जैसे—मैं देर तक पत्र 'लिखता रहा ।'

1·1-4 **सान्त-असमाप्ति सूचक सामान्य भूत काल** (Finished Incomplete Past Indefinite Tense)

जिस भूत काल से कार्य की निकटता दूरता का तो बोध न होने पर उसकी असमाप्ति का अन्त होना सूचित होता हो । जैसे—मैं बारम्बार पत्र लिखता रह चुका ।

1·2 **आसन्न भूत काल** (Present Perfect Tense or Contiguous Past Tanse)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की निकटता का बोध हो ।

1·2-1 **साधारण आसन्न भूतकाल** (General Contiguons past or Ist Present Perfect Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की निकटता का बोध तो हो पर उसकी समाप्ति असमाप्ति का बोध न हो । जैसे—मैंने पत्र लिखा है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1·2-2 **समाप्ति सूचक आसन्न भूतकाल** (Perfect Contiguous Past or 2nd Present Perfect Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की निकटता और समाप्ति दोनों सूचित हों। जैसे—मैं पत्र लिख चुका हूँ।

1·2-3 **असमाप्ति सूचक आसन्न भूत काल** (Imperfect or Ist Present Perfect Continuous Tense)

जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की निकटता और असमाप्ति सूचित हो। जैसे—मैं कई दिन तक पत्र लिखता रहा हूँ।

1·2-4 **सान्त असमाप्ति सूचक आसन्न भूत काल** (Finished Imperfect Contiguous Past or 2nd Present Perfect Continuous Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की निकटता और उसकी असमाप्ति का अन्त सूचित हो। जैसे—मैं बारम्बार पत्र 'लिखता रह चुका हूँ।'

1·3 **दूरभूत काल या अन्तरित भूत काल** (Remote Past Tense)

जिस भूतकाल से क्रिया के कार्य की दूरता का बोध हो।

1·3-1 **साधारण दूरभूत काल** (Common Remote Past Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की दूरता का तो बोध हो, पर उसकी समाप्ति असामाप्ति का बोध न हो। जैसे—मैंने पत्र 'लिखा था।'

1·3-2 **समाप्ति सूचक दूरभूत काल** (Remote Past Perfect Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की दूरता और समाप्ति दोनों सूचित हों। जैसे—मैं पत्र लिख चुका था।

1·3-3 **असमाप्ति सूचक दूर भूत काल** (Remote Past Imperfect Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की दूरता और असमाप्ति सूचित हो। जैसे—'मैं पत्र लिख रहा था।'

1·3-4 **नित्य-असमाप्ति सूचक दूर भूत काल** (Perpetual Past Imperfect Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की दूरता और नित्य-असमाप्ति सूचित हो। जैसे—मैं पत्र 'लिखता था।' मैं सदैव पत्र 'लिखता रहता था।'

1·3-5 **सान्त-असमाप्ति सूचक दूर भूत काल** (Finished Past Imperfect Tense)

जिस भूत काल से क्रिया के कार्य की दूरता और असमाप्ति पूर्वक पूर्णता सूचित हो। जैसे—मैं पत्र 'लिखता रह चुका था।'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(2) **वर्तमान काल** (Present Tense)—क्रिया के जिस रूप से वर्तमान काल का बोध होता है, उसे 'वर्तमान काल' कहते हैं।

2·1 **सामान्य वर्तमान काल** (Present Indefinite Tense)

वर्तमान काल के जिस रूप से क्रिया के कार्य की समाप्ति-असमाप्ति आदि का बोध न हो। जैसे—मैं पत्र 'लिखता हूँ।'

2·2 **तात्कालिक अपूर्ण वर्तमान काल** (Present Imperfect Tense)

वर्तमान काल के जिस रूप से क्रिया के कार्य की असमाप्ति सूचित हो। जैसे—'मैं पत्र लिख रहा हूँ।'

2·3 **सामान्य त्रिकाल व्यापक या स्वभाव सूचक वर्तमान काल** (Permanent Present Perfect Tense)

वर्तमान काल के जिस रूप से क्रिया के कार्य की त्रिकाल व्यापकता या उसके कर्त्ता का स्वभाव सूचित हो। जैसे—मैं अपराह्न तीन बजे पत्र 'लिखा करता हूँ।'

2·4 **पूर्णता सूचक त्रिकाल व्यापक वर्तमान काल** (Permanent Present Perfect Tense)

वर्तमान कालिक क्रिया के जिस रूप से क्रिया के कार्य की पूर्णता बोधक त्रिकाल व्यापकता सूचित हो। जैसे—मैं नित्य शाम चार बजे तक पत्र लिख चुकता हूँ।

2·5 **अपूर्णता सूचक त्रिकाल व्यापक वर्तमान काल** (Permanent Present Progressive or Continuous Tense)

वर्तमानकालिक क्रिया के जिस रूप से क्रिया के कार्य की अपूर्णता बोधक त्रिकाल व्यापकता सूचित हो। जैसे—'मैं नित्य रात के 11 बजे तक पढ़ता रहता हूँ।'

(3) **भविष्यत् काल या अनागत काल** (Future Tense)—क्रिया के जिस रूप से आगे आने वाले काल का बोध होता है, उसे भविष्यत् काल या अनागत काल कहते हैं।

3·1 **सामान्य भविष्यत् काल** (Future Indefinite Tense)—भविष्य कालिक क्रिया के जिस रूप से क्रिया के कार्य की समाप्ति-असमाप्ति आदि का बोध न हो। जैसे—मैं पत्र लिखूँगा।

3·2 **पूर्णता सूचक भविष्यत् काल** (Future Perfect Tense)

भविष्यकालिक क्रिया के जिस रूप से क्रिया के कार्य की भविष्य काल में समाप्ति सूचित हो। जैसे— मैं पत्र लिख चुकूँगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3·3 **सामान्य अपूर्णता सूचक भविष्यत् काल** (Future Imperfect Tense)
भविष्यकालिक क्रिया के जिस रूप से क्रिया के कार्य की भविष्य काल में असमाप्ति सूचित हो। जैसे—मैं पत्र लिखता रहूँगा।

3·4 **नित्य अपूर्णता सूचक भविष्यत् काल** (Future Perpetual Tense)
भविष्यकालिक क्रिया के जिस रूप से क्रिया के कार्य की भविष्य काल में नित्य (अमर्यादित काल तक) असमाप्ति सूचित हो। जैसे—मैं पत्र 'लिखता रहा करूँगा।'

3·5 **सान्त अपूर्णता सूचक भविष्यत् काल** (Future Perfect Continuous Tense)
भविष्यकालिक क्रिया के जिस रूप से क्रिया का कार्य लगातार होकर उसकी समाप्ति हो जाना सूचित हो। जैसे—मैं पत्र 'लिखता रहा चुकूँगा।'
(क्रिया के इस रूप का प्रयोग बहुत कम होता है)

(4) **द्वियौगिक काल** (Aorist Tense)—क्रिया के जिस रूप से वर्तमान और भविष्य दोनों कालों का बोध हो।

4·1 **सामान्य द्वियौगिक काल** (Indefinite Aorist Tense)
क्रिया के जिस रूप से वर्तमान अथवा भविष्य काल में क्रिया के कार्य की समाप्ति-असमाप्ति का बोध न हो। जैसे—मैं पत्र लिखूँ।

4·2 **पूर्णता सूचक द्वियौगिक काल** (Perfect Aorist Tense)
क्रिया के जिस रूप से वर्तमान या भविष्य काल में क्रिया के कार्य की समाप्ति सूचित हो। जैसे—मैं पत्र लिख चुकूँ।

4·3 **सामान्य अपूर्णता सूचक द्वियौगिक काल** (Imperfect Aorist Tense)
क्रिया के जिस रूप से वर्तमान या भविष्यकाल में क्रिया के कार्य की असमाप्ति सूचित हो। जैसे—'मैं पत्र लिखता रहूँ।'

4·4 **नित्य अपूर्णता सूचक द्वियौगिक काल** (Perpetual Aorist Tense)
क्रिया के जिस रूप से वर्तमान या भविष्य काल में क्रिया के कार्य की नित्य (अमर्यादित काल तक) असमाप्ति सूचित हो। जैसे—मैं पत्र 'लिखता' रहा करूँ।

4·5 **सान्त अपूर्णता सूचक द्वियौगिक काल** (Perfect Continuous Aorist Tense)
क्रिया के जिस रूप से वर्तमान या भविष्य काल में क्रिया का कार्य लगातार होकर उसकी समाप्ति सूचित हो। जैसे—मैं पत्र 'लिखता रह चुकूँ।'

नोट—1. क्रिया के इस रूप का भी बहुत कम प्रयोग होता है।
2. क्रिया के मूल रूप या धातु में वाच्य, काल, अर्थ या रीति, पुरुष, लिंग और वचन के कारण रूपान्तर होता है।

इसका वर्गीकरण को इस चार्ट से समझा जा सकता है—

काल

1. भूत काल	2. वर्तमान काल	3. भविष्यत् काल	4. द्वियौगिक काल
1·1 सामान्यत भूत	2·1 सामान्य	3·1 सामान्य भविष्यत्	4·1 सामान्य द्वियौगिक
1·1-1 साधारण	2·2 तात्कालिक अपूर्ण	3·2 पूर्णता सूचक	4·2 पूर्णता सूचक द्वियौगिक
1·1-2 समाप्ति सूचक	2·3 सामान्य त्रिकाल व्यापक	3·3 सामान्य अपूर्णता सूचक	4·3 सामान्य अपूर्णता सूचक द्वियौगिक
1·1-3 असमाप्ति सूचक	2·4 पूर्णता सूचक त्रिकाल व्यापक	3·4 नित्य अपूर्णता सूचक	4·4 नित्य अपूर्णता सूचक द्वियौगिक
1·1-4 सान्त	2·5 अपूर्णता सूचक त्रिकाल व्यापक	3·5 सान्त अपूर्णता सूचक	4·5 सान्त अपूर्णता सूचक
1·2 आसन्न भूत (उपर्युक्त 4 उपभेद)			
1·3 दूर भूत (उपर्युक्त 4 उपभेद)			

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काल रचना (Conjugation)

क्रिया के वाच्य, अर्थ, काल, पुरुष लिंग और वचन के कारण होने वाले सब रूपों का संग्रह करना 'काल रचना' कहलाती है। काल रचना के लिये प्रयुक्त काल—

(1) **धातु जन्य काल**—जो काल धातु में या उसके मूल रूप में सहकारी क्रिया होना, रहना, सकना, चुकना, या चाहिए के रूप अथवा प्रत्ययों के लगाने से बनें।

(2) **वर्तमान कालिक कृदन्त जन्य काल**—जो काल वर्तमान कालिक कृदन्तों में सहकारी क्रिया—'होना' या 'रहना' आदि के रूप या प्रत्यय लगाने से बनें।

(3) **भूत कालिक कृदन्त जन्य काल**—जो काल भूत कालिक कृदन्तों में सहकारी क्रिया—'होना' या 'रहना' आदि के रूप लगाने से बनें।

(4) **साधारण काल**—जो काल केवल प्रत्ययों के लगाने से बनें।

(5) **संयुक्त काल**—या संयुक्त क्रिया जन्य काल-जो काल सहकारी क्रिया—'होना', 'रहना', 'चुकना' आदि के लगाने से बनें।

कालवाचक क्रिया विशेषण (Adverb of Time)

अर्थाधार क्रिया विशेषण का एक भेद। जो क्रिया विशेषण समय-सूचक अर्थ प्रकट करें। (दे० अव्यय-क्रिया विशेषण-अर्थाधार क्रिया विशेषण)

काल सूचक गुणवाचक विशेषण (Adjective of Quality Denoting Time)

गुण वाचक विशेषण का एक भेद। (दे० विशेषण—गुणवाचक विशेषण)

कृत् प्रत्यय (Verbal Affixes)—क्रिया के मूल रूप (धातु) के आगे जो प्रत्यय जोड़े जाते हैं, उन्हें 'कृत् प्रत्यय' कहते हैं। (दे० प्रत्यय—कृत् प्रत्यय)

कृदन्त (Verbal Derivations)—(अ) जो शब्द किसी क्रिया के मूल रूप (धातु) में किसी प्रत्यय (कृत् प्रत्यय) के जोड़ने से बनते हैं, उन्हें 'कृदन्त' कहते हैं। ये दो प्रकार के हैं—

(1) **कृदन्त नाम** (Verbal Noun or Gerund)—जो कृदन्त 'क्रिया वाचक संज्ञा, या क्रिया जन्य भाववाचक संज्ञा का काम दें।

(दे० क्रिया-जन्य भाव वाचक संज्ञा)

(2) **कृदन्त विशेषण** (Verbal Adjectives)—जो कृदन्त क्रियार्थक विशेषण का काम दें। (दे० क्रियार्थक विशेषण)

(ब) क्रिया के जिन रूपों का प्रयोग अन्य शब्द-भेदों के समान होता है, उन्हें 'कृदन्त' कहते हैं। इसके दो प्रमुख भेद हैं—

(1) **विकारी कृदन्त** (Declinable or Veriable Verbal Derivatives)—वे कृदन्त जिनमें रूपान्तर होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1·1 **क्रियार्थक संज्ञा** (Verbal Noun or Gerund)
वे विकारी कृदन्त जिनका प्रयोग संज्ञा के समान हो।

1·1-1 **भाव वाचक** (Abstract Gerund)
पढ़ाई-लिखाई, पठन-पाठन, उतार-चढ़ाव आदि।

1·1-2 **करण वाचक** (Instrumental Gerund)
झूला, बेलन, झाड़ू आदि।

1·1-3 **कर्तृवाचक संज्ञा** (Subjective Gerund or Gerund of Doer)
लेखक, चालक आदि।

1·1-4 **कर्मवाचक संज्ञा** (Accusative Gerund)
लेख, आदि।

1·1-5 **अधिकरण वाचक** (Locative Gerund)
पालना, प्याऊ आदि।

1·2 **क्रियाद्योतक विशेषण** (Verbal Adjective or Participle)
वे विकारी कृदन्त जिनका प्रयोग विशेषण के समान हो।

1·2-1 **वर्तमान कालिक विशेषण** (Present Participle)
दौड़ता हुआ, खाता हुआ, जाता हुआ, आता हुआ आदि।

1·2-2 **भूतकालिक विशेषण** (Past Participle)
मरा, गिरा, डरा, खड़ा, आदि।

1·2-3 **भविष्य कालिक विशेषण** (Future Participle)
आने वाला, जाने वाला, करने वाला। आदि।

1·2-4 **कर्तृवाचक विशेष** (Participle of Agent)
लिखने वाला खाने वाला आदि।

1·2-5 **कर्मवाचक विशेषण** (Accusative Participle or Past Perfect Participle)
लिखा गया, किया गया, दिया गया, आदि।

(2) **अविकारी कृदन्त या कृदन्त अव्यय** (Indeclinable or Invariable Verbal Derivatives)—वे कृदन्त जिनमें रूपान्तर नहीं होता।

2·1 **पूर्वकालिक कृदन्त** (Absolute Verbal Derivatives)
खा के, करके, जाकर आदि।

2·2 **तात्कालिक कृदन्त** (Present Verbal Derivatives)
खाते ही, पीते ही, जाते ही आदि।

2·3 **अपूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त** (Continuous Verbal Derivatives)
खाते-खाते, जाते हुए, आते हुए इत्यादि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2·4 **पूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त** (Perfect or Complete Verbal Derivatives) गये, बीते, हुए आदि ।

कृदन्त अव्यय (Verbial Derivations)—जो शब्द किसी क्रिया के मूल रूप में किसी प्रत्यय के जोड़ने से बनते हैं । जैसे—लिखाई, जानकार (दे० अव्यय-कृदन्त अव्यय तथा कृदन्त)

कृदन्त नाम (Verbal Noun or Gerund)—(दे० कृदन्त)

कृदन्त विशेषण (Verbial Adjective)—(दे० कृदन्त)

क्रम (Order)—वाक्य में शब्दों को उनके अर्थ और सम्बन्ध की प्रधानता के अनुसार यथा स्थान रखने को 'क्रम' कहते हैं ।

क्रम बोधक निश्चित संख्यावाचक विशेषण (Ordinal Definite Numeral Adjectives)—(दे० विशेषण—संख्यावाचक विशेषण—निश्चित संख्यावाचक विशेषण)

क्रिया (Verb)—क्रिया वह विकारी शब्द है जिसके प्रयोग से किसी वस्तु के विषय में कुछ विधान किया जाय । अर्थात् जिससे किसी कार्य का होना या करना जाना जाय ।

(1) **समापिका क्रिया** (Finite Verb)—क्रिया के लिंग, वचन, काल आदि युक्त प्रत्येक विकारी रूप को समापिका क्रिया कहते हैं ।

(2) **अकर्मक क्रिया** (Intransitive Verb)—जिस क्रिया का कोई कर्मसूचक शब्द वाक्य में नहीं होता, अर्थात् जिस क्रिया के द्वारा प्रकट किए हुये कार्य का फल कर्त्ता पर पड़े, कर्त्ता को छोड़ अन्य कहीं न जाय ।

2·1 **पूर्ण अकर्मक क्रिया** (Intransitive Verb of Complete Predication) जो अकर्मक क्रिया अपनी पूर्णता के लिये किसी अन्य शब्द को न चाहे । जैसे—आना, जाना, हँसना आदि ।

2·2 **अपूर्ण अकर्मक क्रिया** (Intransitive Verb of Incomplete Predication) जो अकर्मक क्रिया अपनी पूर्णता के लिये किसी अन्य शब्द (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण या क्रिया विशेषण) को भी चाहे । (जैसे—वह अच्छा है ।)

2·3 **सजातीय अकर्मक क्रिया** (Cognative Verb) जिस अकर्मक क्रिया के साथ उसी क्रिया जन्य भाववाचक संज्ञा कर्म के समान प्रयुक्त हो । जैसे—लड़कियाँ अच्छा गाना गा रही हैं ।

(3) **सकर्मक क्रिया** (Transitive Verb)—जिस क्रिया का कोई कर्मसूचक शब्द भी वाक्य में हो, अर्थात् जिस क्रिया के द्वारा प्रकट किये हुए कार्य का फल कर्त्ता से निकल कर किसी दूसरी वस्तु पर जाय ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(4) **उभय विध क्रिया** (Verbs Both Transitive and Intransitive According to Context)—जो क्रिया प्रयोगानुसार कहीं अकर्मक हो, कहीं सकर्मक ।

(5) **एक कर्मक क्रिया** (Transitive Verb of one Object)—जिस सकर्मक क्रिया का कर्म केवल एक ही हो । यथा—उसने पुस्तक पढ़ी ।

(6) **पूर्ण सकर्मक क्रिया** (Transitive Verb of Complete Predication)—जिस सकर्मक क्रिया के कार्य का आशय कर्म द्वारा पूर्ण रूपेण प्रकट हो—जैसे—उसने मुझे देखा ।

(7) **अपूर्ण सकर्मक क्रिया** (Transitive Verb of Incomplete Predication Factiti Verbs)—जिस सकर्मक क्रिया द्वारा प्रकट हुए कार्य का आशय कर्म के रहते भी अपूर्ण रहे । जैसे—बनाना, उसने मुझे योग्य बनाया ।

(8) **द्विकर्मक क्रिया** (Transitive Verb of two Object)—जिस सकर्मक क्रिया के कर्म दो हों । जैसे—उसने 'मुझे' दो कलम दिये ।

(9) **प्रेरणार्थक क्रिया** (Causative Verb)—जिस सकर्मक क्रिया के प्रेरक और प्रेरित दो कर्त्ता हों । (दे० कर्त्ता—प्रेरित और प्रेरक कर्त्ता)

(10) **गुप्त कर्मक क्रिया** (Transitive Verbs of Implied Object)—जिस सकर्मक क्रिया का कर्म अप्रकट या लुप्त हो । जैसे—वह पढ़ता है ।

(11) **संयुक्त क्रिया** (Compound Verb)—जो क्रिया दो क्रियाओं के संयोग से बनी हो । जैसे—लिख सकना । यह क्रिया कृदन्त और क्रिया इन दो के योग से बनती है और इसका मुख्य अंग 'कृदन्त' अर्थात् पूर्व का अंग होता है ।

11·1 द्विसंयोगी क्रिया

जो संयुक्त क्रियायें, दो क्रियाओं के संयोग से बनें इनके 16 भेद हैं—

1. शक्तिबोधक या अधिकार बोधक; जैसे—जा सकना ।
2. पूर्णता बोधक या समाप्ति बोधक; जैसे—कर चुकना ।
3. आरम्भ बोधक; जैसे—लिखने लगना ।
4. अनुमति बोधक या आज्ञा बोधक; जैसे—लिखने देना ।
5. अवकाश बोधक; जैसे—पढ़ पाना ।
6. अवधारणा बोधक या विशिष्टता बोधक या निश्चय बोधक; जैसे—मार देना, पढ़ लेना ।
7. अपूर्णता बोधक; जैसे—सोते रहना ।
8. तत्परता बोधक; जैसे—मरा जाना, फटा पड़ना ।
9. अभ्यास बोधक; जैसे—देखा करना ।
10. इच्छा बोधक; जैसे—खाया चाहना, खेला चाहना ।
11. निकटता बोधक; जैसे—आया चाहना ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

12. निरन्तरता बोधक; जैसे—किये जाना, पढ़े जाना ।
13. नाम बोधक या संज्ञा बोधक; जैसे— भस्म होना, दम भरना ।
14. विशेषण यौगिक; जैसे—पूर्ण करना, छोटा करना ।
15. द्वि-शक्ति दर्शक; जैसे—दे देना, ले लेना ।
16. पुनरुक्ति दर्शक; जैसे—लिखना, पढ़ना, खाना-पीना आदि ।

11·2 **बहुसंयोगी क्रिया**

जो संयुक्त क्रियाएँ दो से अधिक क्रियाओं के संयोग से बनें; जैसे—उठा ले जाना, खाते-पीते रहना, खा-पी चुकना ।

क्रिया पद—अर्थ की दृष्टि से पदों के दो भेद होते हैं—

1. नाम पद,
2. क्रिया पद ।

नाम पद नाम के सूचक होते हैं और क्रिया पद क्रिया के सूचक होते हैं । जैसे—

लड़का आता है ।
↓ ↓
नाम पद क्रियापद ।

क्रियापदों के तीन भेद हैं—

(अ) मूल क्रिया पद (ब) धातु क्रिया पद (स) संयुक्त क्रिया पद ।

क्रियार्थ (Mood)—अर्थ या रीति को ही क्रियार्थ कहते हैं । (दे०—अर्थ)

किया विशेषण (Adverb)—ऐसा शब्द जिससे किसी क्रिया अथवा विशेषण के सम्बन्ध में कोई विशिष्टता सूचित होती हो अथवा उसके काल, प्रकार रूप, स्थान आदि का बोध होता हो ।

क्रिया विशेषण मुख्यतः दो वर्गों में बाँटे जा सकते हैं—

(1) एक वे जो सर्वनामों से बनते हैं,

(2) अन्य ।

इनमें से प्रत्येक वर्ग के कई-कई उपवर्ग हैं । (दे०—अव्यय)

क्रियार्थक विशेषण (Verbal Adjectives or Participles)—विशेषण का एक भेद । (दे० विशेषण)

इसके तीन भेद हैं—

(1) भूतकालिक,

(2) वर्तमान कालिक,

(3) भविष्यत कालीन । (वि० दे० कृदन्त)

क्रियावाच्य (Voice)

क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि वाक्य में कर्त्ता के विषय में विधान किया गया है, या कर्म के विषय में अथवा केवल भाव के विषय में उसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रियावाच्य कहते हैं। जैसे—मैंने खाना खाया। इस वाक्य में 'खाया' 'क्रिया वाच्य' है।

1. **कर्तृवाच्य** (Active voice)—क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि वाक्य का उद्देश्य क्रिया का कर्त्ता है।
2. **कर्मवाच्य** (Passive voice)—क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि वाक्य का उद्देश्य जो कर्त्ता कारक में रखा जाता है, वह यथार्थ में क्रिया का कर्म है।
3. **भाव वाच्य** (Intransitive Passive Voice or Impersonal Form of the verb)—क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि वाक्य का उद्देश्य क्रिया का कर्त्ता या कर्म कोई नहीं है, किन्तु उसी क्रिया का कोई भाववाचक शब्द परोक्ष रूप से है, उसे भाव वाच्य क्रिया कहते हैं।

जैसे—'यहाँ दौड़ा नहीं जाता।' में दौड़ा नहीं जाता। क्रिया का उद्देश्य 'दौड़ना' अप्रत्यक्ष है।

नोट—यदि कर्मवाच्य या भाव वाच्य क्रियाओं के कर्त्ता को भी दिखाने की आवश्यकता हो तो उसे 'करण कारक' रूप में वाक्य के साथ लिख देते हैं।

जैसे—यहाँ मुझसे दौड़ा नहीं जाता।

क्रिया जन्य भाव वाचक संज्ञा (Verbal Noun or Gerund)—जो भाव वाचक संज्ञा किसी क्रिया से बनी हो, उसे क्रिया जन्य भाव वाचक संज्ञा कहते हैं। (दे० संज्ञा—भाव वाचक संज्ञा)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ख

ख—यह हिन्दी वर्णमाला का दूसरा व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मतानुसार इसका उच्चारण स्थान कंठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट और बाह्य प्रयत्न महाप्राण, विवार, श्वास और अघोष हैं। आधुनिक वैयाकरण इसे महाप्राण, अघोष स्पर्श व्यंजन मानते हैं।

ख़—यह जिह्वा मूलीय अघोष संघर्षी ध्वनि है, सामान्य स्पर्श ध्वनि नहीं। यह हिन्दी में अरबी-फारसी के तत्सम शब्दों के लिए ही प्रयुक्त होती है। हिन्दी में अब इसका उच्चारण सामान्य स्पर्श ध्वनि-सा होने लगा है और लिखने में भी वैसा ही रूप बहुत प्रचलित है। उदा० बुख़ार, ख़राब, ख़तरा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग

ग—यह हिन्दी वर्णमाला का तीसरा व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण—स्थान कण्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष है। आधुनिक व्याकरणों के मत से यह अल्पप्राण, घोष स्पर्श व्यंजन है।

ग़्—इसका उच्चारण स्थान ख़् के समान है। भेद यही है कि यह घोष है और वह अघोष। यह जिह्वा मूलीय, घोष संघर्षी ध्वनि है। अरबी-फारसी के तत्सम शब्दों में ही इसका प्रयोग होता है।

गण बोधक निश्चय वाचक विशेषण (Cardinal Definite Numeral Adjectives)—निश्चय वाचक विशेषण का एक भेद। (दे० विशेषण—निश्चित संख्या वाचक)

गुण (संधि)—स्वर संधि का एक प्रकार (दे० सन्धि—स्वर सन्धि)

गुप्त कर्मक क्रिया (Transitive Verbs of Implied Object)—जिस सकर्मक क्रिया का कर्म अप्रकट या लुप्त हो। (दे० क्रिया)

जैसे—मैं 'पढ़ता हूँ'।

गुरु स्वर (Long Vowel)—जिन स्वरों के उच्चारण में दो मात्रा काल लगता है, उन्हें 'गुरु स्वर' कहते हैं।

आ, ई, ऊ, ॠ, ऌ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः, ये ग्यारह गुरु स्वर हैं।

इसे ही 'दीर्घ स्वर' भी कहते हैं।

गौण कर्म या अप्रधान कर्म (Indirect Object)—दे० कर्म।

गौरव (Emphasis)—वाक्य में किसी विशेष शब्द पर अधिक बल देकर बोलने का गौरव कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घ

घ—यह हिन्दी वर्णमाला का चौथा व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण-स्थान कण्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, संवार, नाद और घोष हैं।

आधुनिक वैयाकरण इसे महाप्राण स्पर्श व्यंजन मानते हैं।

घोष (Sonants or Soft Consonants)—जिन व्यंजन वर्णों का उच्चारण करते समय स्वर-तन्त्री में झंकार उत्पन्न हो, उन्हें घोष व्यंजन कहते हैं।

क ख च छ ट ठ

त थ प फ श ष स को छोड़कर तथा सभी स्वर घोष हैं।

(विशेष दे० बाह्य प्रयत्न)

घोषवत् व्यंजन—घोष व्यंजनों को ही घोषवत् व्यंजन कहते हैं। सभी स्वर घोष स्वर हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ङ

ङ—यह हिन्दी वर्णमाला का पाँचवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण—स्थान कण्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष हैं।

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार इसका उच्चारण जिह्वा के पश्च भाग को कोमल तालु से छुआ कर होता है। कोमल तालु कौआ के साथ नीचे झुक जाता है और वायु नासिका विवर में पहुँचकर अनुनासिक ध्वनि (गूँज) पैदा करती है। सभी अनुनासिक व्यंजनों में इसी प्रकार गूँज पैदा होती है। बाबू श्यामसुन्दरदास के अनुसार यह घोष, अल्पप्राण, कंठ्य अनुनासिक स्पर्श ध्वनि है। हिन्दी में आज इसका उपयोग केवल अनुस्वार के परसवर्ण में परिणत होने में (अनुस्वारस्य ययि परसवर्ण : पाणिनि-सूत्र) ही दिखाई देता है, वह भी कम। अनुस्वार मात्र से काम चल जाता है।

उदा० गङ्गा=गंगा।
अङ्ग=अंग।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

च

च—यह हिन्दी वर्णमाला का छठा व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण—स्थान तालु, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, विवार, श्वास और अघोष है। चटर्जी, बेली और सक्सेना के निष्कर्षों के आधार पर डॉ० धीरेन्द्र वर्मा का विचार है कि च वर्गीय अक्षरों का उच्चारण जिह्वा के अग्र भाग को ऊपरी मसूड़ों के निकट कठोर तालु से कुछ रगड़ के साथ छूकर किया जाता है। अतः यह स्पश-संघर्षी ध्वनि मानी जाती है। कुछ विद्वानों के अनुसार हिन्दी की च वर्गीय ध्वनियाँ शुद्ध स्पर्श नहीं हैं; किन्तु बेली महोदय उसे शुद्ध स्पर्शी मानते हैं।

वस्तुतः च् अल्पप्राण, अघोष, तालव्य, घर्ष-स्पर्श या स्पर्श संघर्षी व्यंजन हैं।

चंद्र बिन्दु (Pointed half moon mark)—(दे० अर्द्धचंद्र बिन्दु)

चरम् प्रत्यय या विभक्ति (Terminal affixes or case-terminations)—जिन प्रत्ययों के पीछे अन्य कोई प्रत्यय न आवें उन्हें 'चरम प्रत्यय' कहते हैं। सभी विभक्तियाँ चरम प्रत्यय हैं। (दे० अव्यय—विभक्ति नामक अव्यय, विभक्ति)

च वर्ग व्यंजन—च्, छ्, ज्, झ्, ञ्।

ये पाँच व्यंजन वर्ण च वर्ग के अन्तर्गत आते हैं और च वर्ग व्यंजन कहलाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छ

छ—यह हिन्दी वर्णमाला का सातवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण—स्थान तालु, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा वाह्य प्रयत्न महाप्राण, विवार, श्वास और अघोष हैं। आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह महाप्राण, अघोष, तालव्य, स्पर्श संघर्षी व्यंजन हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज

ज्—यह हिन्दी-वर्णमाला का आठवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण-स्थान तालु, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष है। आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, घोष, तालव्य घर्ष-स्पर्श व्यंजन है।

ज़्—यह वर्त्स्य, संघर्षी घोष ध्वनि है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार ज् और स् का उच्चारण स्थान एक ही है, बस यह घोष है और स् अघोष।

यह हिन्दी में विदेशी ध्वनि है। अरबी-फारसी या अँग्रेजी के तत्सम शब्दों में ही इसका प्रयोग होता है। यथा—ज़ालिम, ज़रूर, ज़रा।

जाति वाचक संज्ञा (Common Noun)—संज्ञा का एक भेद।

(दे० संज्ञा—जाति वाचक संज्ञा)

जाति वाचक संज्ञा जन्य भाव वाचक संज्ञा (Abstract noun madeby common noun)—जाति वाचक संज्ञा का एक भेद (दे० जाति वाचक संज्ञा)

जिह्वा मूलीय वर्ण (Linguae-radical or tongue-root letters)—जिह्वा के मूल से बोले जाने वाला एक अक्षर ⋁ है। इसका उच्चारण उर्दू भाषा के क़ाफ़ ',' और ख़ ं अक्षरों के समान दो प्रकार से वेद मन्त्रों में या प्राकृत भाषा में किया जाता है, जो अर्द्ध विसर्ग युक्त क और ख से बहुत कुछ समानता रखता है। इसीलिए इसके दोनों प्रकार के उच्चारण को प्रकट करने के लिए इसके आगे क और ख अक्षर यथा आवश्यक लिख दिये जाते हैं, यथा—⋁ क।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

झ

झ्—यह हिन्दी-वर्णमाला का नौवाँ व्यंजन-वर्ण है ।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण-स्थान तालु, आभ्यंतर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, संवार नाद और घोष हैं । आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार अन्य च वर्गीय ध्वनियों के समान ही इसका भी उच्चारण होता है । डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के शब्दों में यह महाप्राण, घोष, स्पर्श-संघर्षी व्यंजन है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ञ

ञ—यह हिन्दी-वर्णमाला का दसवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण-स्थान तालु, आभ्यंतर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष है। आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह घोष, अल्पप्रमाण, तालव्य अनुनासिक ध्वनि है। अन्य अनुनासिक व व्यंजनों की भाँति इसके उच्चारण में भी कोमल तालु कौआ के साथ नीचे झुक जाता है और वायु नासिका-विवर में पहुँचकर ध्वनि (गूँज) पैदा करती है।

इस ध्वनि का प्रयोग अब बहुत कम रह गया है। इसके स्थान पर लोग अनुनासिकता का प्रयोग करने लगे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ट

ट्—यह हिन्दी-वर्णमाला का ग्यारहवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत में इसका उच्चारण-स्थान मूर्धा, आभ्यंतर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, विवार, श्वास और अघोष है।

आधुनिक वैयाकरणों के मत से यह अल्पप्राण अघोष, मूर्धन्य स्पर्श व्यंजन है। वेदों में मूर्धन्य वर्णों की संख्या कम है, अतः कुछ विद्वानों का विचार है कि ये ध्वनियाँ भारोपीय काल की नहीं हैं। बल्कि अनार्यों के सम्पर्क से प्राचीन भारतीय आर्य-भाषाओं में इनका प्रयोग होने लगा था।

ट वर्ग—ट, ठ, ड, ढ, ण।

ये पाँच व्यंजन वर्ण ट वर्ग के अन्तर्गत आते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ठ

ठ्—यह हिन्दी-वर्णमाला का बारहवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण-स्थान मूर्धा, आभ्यंतर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, विचार, श्वास और अघोष है।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह महाप्राण, अघोष, मूर्धन्य स्पर्श है। स्थान की दृष्टि से ट् और ठ् ध्वनियाँ समान हैं, केवल ठ् महाप्राण और ट् अल्पप्राण है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ड

ड्—यह हिन्दी-वर्णमाला का तेरहवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण—स्थान मूर्धा, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्प-प्राण, संवार, नाद और घोष हैं।

आधुनिक वैयाकरणों के मत से यह अल्प-प्राण घोष मूर्धन्य स्पर्श व्यंजन है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार इसका उच्चारण—द् की भाँति, जीभ की नोंक को उलट कर उसे कठोर तालु के मध्य भाग के निकट छुआकर होता है।

ड़्—यह अल्पप्राण, घोष; मूर्धन्य, उत्क्षिप्त ध्वनि है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के मत से इसका उच्चारण जीभ की नोक को उलट कर नीचे से कठोर तालु को झटके के साथ दूर तक छूकर किया जाता है। उनके विचार से न तो यह ड् की भाँति स्पर्श ध्वनि है; न र् की भाँति लुंठित। यह हिन्दी की नयी ध्वनि है। यह शब्दों के आदि (आरम्भ) में नहीं आती।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ढ

ढ्—यह हिन्दी वर्ण माला का चौदहवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण—स्थान मूर्धा, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, संवार, नाद और घोष है।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह महाप्राण घोष मूर्धन्य स्पर्श है। इसका प्रयोग प्राय: शब्दों के आरम्भ में होता है।

ढ़्—यह महाप्राण, घोष, मूर्धन्य, उत्क्षिप्त ध्वनि है। ड़् से इसका इतना ही अन्तर है कि यह महाप्राण है, जबकि ड़ अल्पप्राण। यह भी हिन्दी की नयी ध्वनि है और इसका प्रयोग भी शब्दों के आदि में नहीं होता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ण

ण्—यह हिन्दी-वर्ण माला का पन्द्रहवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण—स्थान मूर्धा, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष हैं।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, घोष, मूर्धन्य स्पर्श व्यंजन है। अनुनासिक मूर्धन्य व्यंजनों की अपेक्षा इस अनुनासिक ण के उच्चारण में उल्टी जीभ की नोंक कठोर तालु का कुछ अधिक पीछे स्पर्श करती है और नासिका-विवर में हवा की गूँज होने देती है। हिन्दी में शब्दों के आरम्भ में इसका प्रयोग नहीं होता और वस्तुतः यह ध्वनि संस्कृत के तत्सम शब्दों में ही मिलती है। हिन्दी बोलियों में सर्वत्र प्रायः 'ण्' की जगह 'न्' मिलता है।

परसवर्ण में भी न् की ही ध्वनि सुनने को मिलती है (जैसे—घण्टा) वस्तुतः अब परसवर्ण के लिए अनुस्वार का सीधा और सुविधाजनक प्रयोग सर्व प्रचलित हो गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त

त्—यह हिन्दी-वर्णमाला का सोहलवाँ व्यंजन-वर्ण है ।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण-स्थान दन्त, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, विवार, श्वास और अघोष है ।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, अघोष, दन्त्य स्पर्श है। इसके उच्चारण में दाँतों को ऊपरी पंक्ति का जीभ की नोक से स्पर्श किया जाता है ।

तत्सम शब्द (Identical Words)—किसी भी भाषा में प्रयुक्त किसी भी भाषा के उस शब्द को तत्सम कहते हैं, जिसके रूप और बनावट में किसी प्रकार का अन्तर न पड़ा हो और वह उस प्रयुक्त भाषा के सभी नियमों का अनुसरण उस भाषा के अन्य शब्दों की तरह करे ।

आगत और आकर शब्दों के दो भेद हैं—तत्सम(=उसके समान) और तद्भव (=उससे उत्पन्न) । (दे० आकर शब्द) तथा आगत शब्द ।

हिन्दी में तत्सम रूप में चलने वाले शब्द संस्कृत के ऐसे नामपद हैं (दे० यथास्थान 'नामपद'), जो (i) आज भी प्रथमांत एकवचन रूप में चल रहे हैं अथवा (ii) जिनके प्रथमांत रूप का अन्त्य म् व्यंजन या विसर्ग लुप्त हो चुका है, जैसे—

(अ) प्रथमांत एकवचन रूप-आत्मा, लता, कृपा, पिता, नृप, योद्धा आदि ।

(ब) अन्त्य व्यंजन या विसर्ग लुप्त रूप-कमल<कमलम्, सूर्य<सूर्य. आदि ।

संस्कृत के ऐसे शब्द विशेषतया नाम पद जो मूलतः हल् चिह्न से युक्त हैं, परन्तु हिन्दी में जिन्हें अधिकतर लोग बिना हल् चिह्नों के भी लिखते हैं; तत्सम माने जाते हैं ; जैसे—जगत<जगत्, महान<महान् ।

भगवान<भगवान् आदि ।

जिन तत्सम शब्दों मे 'ड' के स्थान पर हिन्दी में 'ड़' लिखा जाता है वे तत्सम ही हैं क्योंकि ('ड़') वैदिक 'ल' ध्वनि का ही विकसित रूप है (वैदिक संस्कृत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में दो स्वरों के बीच 'ड' का उच्चारण 'ल' होता था। मराठी, तमिल आदि भाषाओं में आज भी 'ल' का उच्चारण 'ड़' से मिलता-जुलता है।

जैसे—पीड़ा<पीडा, क्रीड़ा<क्रीडा आदि।

तद्भव शब्द (Corrupted Form of Words)—हिन्दी में प्रयुक्त संस्कृत या अन्य भाषाओं के किसी शब्द के परिवर्तित या अपभ्रंश रूप को 'तद्भव' कहते हैं।

तद्भव शब्द भी आकर शब्द हैं। आगत शब्द का एक भेद तद्भव है। आकर तत्सम प्रथमांत एकवचन नामपदों के अन्त्य म् व्यंजन अथवा विसर्ग के लोप के अतिरिक्त; जब किसी अन्य वर्ग का लोप, परिवर्तन, व्यत्यय या आगम होता है, तो उसे तद्भव कहते हैं।

जैसे—काठ<काष्ठम् (ष् का लोप)
चिन्ह<चिह्नम् (वर्ण व्यत्य; ह् न् का न् ह्)
गुफा<गुहा (वर्ण परिवर्तन ह् का फ्)
महतारी<मात् (वर्ण ह् का आगम)

हिन्दी के तद्भव धातु संस्कृत के धातुओं तथा नामपदों के विकारी रूप होते हैं; जैसे—खा (हिन्दी धातु)<खाद् (संस्कृत धातु) इसी तरह पढ़<पठ, छेद<छिद, चढ़<चट् आदि।

संस्कृत नामपद से—बटोर<वर्तुल, लड़<रण, ढांक<स्थग आदि।

तद्धित (शब्द) (Nominal Derivatives)—धातुओं को छोडकर अन्य शब्दों में कोई प्रत्यय जोड़ने से जो शब्द बनते हैं, उन्हें तद्धित शब्द कहते हैं। जैसे— सरलता, मित्रता, प्यासा, भूख आदि।

तद्धित प्रत्यय (Nominal Affixes)—जिन प्रत्ययों के लगाने से तद्धित शब्द बनते हैं, उन्हें 'तद्धित प्रत्यय' कहते हैं।

तलबिन्दु वर्ण (Under Pointed Letter)—उर्दू और अँग्रेजी शब्दों के कुछ अक्षरों का यथार्थ उच्चारण दिखाने के लिए हमें जिन हिन्दी अक्षरों के नीचे एक बिन्दु (नुक्ता) लगाना पड़ता है उन्हें तलबिन्दु वर्ण कहते हैं। ऐसे 18 वर्ण है—
अ़ आ़ इ़ ई़ उ़ ऊ़ ए़ ऐ़ ओ़ औ़ क़ ख़ ग़ ज़ झ़ ड़ ढ़ फ़।

जैसे—ई़द क़ालीन, ख़ुश, ग़रीब, स्वेज़, प्राइज़।

तालव्य वर्ण (Palatals)—जिन नौ अक्षरों का उच्चारण तालु से अथवा जिह्वा को तालु पर लगा कर किया जाता है, उन्हें तालव्य वर्ण कहते हैं।

ये नौ वर्ण तालव्य हैं—इ ई च छ ज झ ञ य श।

तृतीय पुरुष (Third Person)—इसे अन्य पुरुष भी कहते हैं।

(दे० पुरुष—तृतीय पुरुष)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थ

थ्—यह हिन्दी-वर्णमाला का सत्रहवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मतानुसार इसका उच्चारण-स्थान दन्त, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, विवार, श्वास और अघोष है।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, अघोष, दन्त्य स्पर्श है। इसके उच्चारण में दाँतों की ऊपर की पंक्ति का जीभ की नोंक से स्पर्श किया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द

द्—यह हिन्दी-वर्णमाला का अठारहवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण-स्थान दन्त, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष है। आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, घोष दन्त्य स्पर्श है। इसका उच्चारण भी त आदि की भाँति ही होता है।

दन्तोष्ठ (Labiodental)—संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार द् का उच्चारण स्थान दन्तोष्ठ है। इसका उच्चारण नीचे के ओठ और ऊपर के दाँतों से होता है। बाबू श्यामसुन्दर दास हिन्दी को फ ध्वनि को भी इसी कोटि में रखते हैं।

दन्त्य (Dental)—स्पर्श ध्वनियों का चौथा विभाजन। इनके उच्चारण में जिह्वाग्र ऊपर उठकर दाँतों का स्पर्श करता है। संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार लृ, त वर्ग, ल् और स् दन्त्य हैं। आधुनिक विद्वान् न् को वर्त्स्य मानते हैं अर्थात् उसके उच्चारण में जिह्वाग्र ऊपरी मसूड़े (वर्त्स) का स्पर्श करता है।

इस प्रकार त, थ, द, ध, न, ल, स ये दन्त्य वर्ण हैं।

दीर्घ स्वर (Long Vowels)—दो मात्राओं के उच्चारण जितना समय लेने वाले स्वर को दीर्घ कहते हैं। आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ, अं और अः ये दीर्घ स्वर हैं। दृष्टव्य पाणिनि सूत्र ऊकालोऽज्झ्रस्व दीर्घप्लुतः। 1/2/27

दीर्घ सन्धि या दीर्घ स्वर सन्धि (Conjuction of Long Vowel)—स्वर सन्धि का भेद (दे० सन्धि-स्वर सन्धि)

दीर्घ सन्धि स्वर (Long Diphthong)—किसी एक मूल स्वर में उसी मूल स्वर के मिलने से जो स्वर बनता है, उसे 'दीर्घ सन्धि स्वर' कहते हैं। जैसे—अ+अ=आ। (विशेष दे० स्वर)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देशज (Native)—पूर्व भाषिक परम्परा से प्राप्त शब्दों को आकर, अन्य भाषाओं से प्राप्त शब्दों को आगत और समय-समय पर जो शब्द घड़ लिए गए हों उन्हें देशज (देश्य) शब्द कहते हैं।

इन शब्दों की व्युत्पत्ति अज्ञात रहती है। जैसे—गड़प, लबड़ घोंघों, टनाटन, घोटाला, गड़बड़ आदि। देशज शब्दों के तीन भेद हैं—अनुकरणवाची, आकस्मिक और निर्मित। ध्वनियों तथा शब्दों के अनुकरण पर बने शब्द अनुकरणवाची होते हैं, जैसे—खटखट, टन-टन आदि। ऐसे शब्द जिनके उद्गम का स्रोत अज्ञात हो उन्हें आकस्मिक कहते हैं, जैसे—भीड़, आम, लट्टू आदि। ऐसे शब्द जो अन्य शब्दों के योग से अथवा उपसर्ग प्रत्यय आदि की सहायता से बनाए गए हों, उन्हें निर्मित शब्द कहते हैं। जैसे—भावताव, अनगढ़, घिराव आदि।

द्रव्याक्षर (Written Form of a Letter)—भावाक्षर या मूल ध्वनि (निवृत्याक्षर) के प्रतिनिधि रूप आकारों या चिह्नों को 'द्रव्याक्षर' या 'स्थापनाक्षर' कहते हैं।

यह कृत्रिम हैं और इसीलिए इनकी रचना भिन्न-भिन्न देशों और भिन्न-भिन्न समय में यथा आवश्यक भिन्न-भिन्न प्रकार की लिपियों (आकारों या चिह्नों) में होती और बदलती रहती है।

द्रव्याक्षर नेत्रेन्द्रिय का विषय है इसीलिए इन्हें 'वर्ण' भी कहते हैं। साधारणतया 'द्रव्याक्षर' या वर्ण को 'अक्षर' कहते हैं। (वि० दे० वर्ण)

द्वयोष्ठ्य (Bi-Labial)—केवल दोनों होठों से उच्चरित होने वाले वर्ण प् और फ् इस कोटि में आते हैं।

द्वादश अक्षरी (बारहखड़ी) (Doudecimulation of Vowels)—सोलह स्वरों में से ऋ ॠ ऌ ॡ इन चार अक्षरों को छोड़कर शेष बारह स्वरों को प्रत्येक व्यंजन के आगे मिलाने से प्रत्येक व्यंजन के जो 12-12 रूप हो जाते हैं, उन्हें 'द्वादशाक्षरी' या 'बारहखड़ी' कहते हैं।

जैसे—क का कि कू कु कृ के को कौ कं कः।

द्वादशाक्षरी संयुक्त अक्षरों के साथ भी 12 स्वर जोड़कर बनाई जाती है।

द्विकर्मक क्रिया—क्रिया का एक भेद। (दे० क्रिया)

द्वितीय पुरुष (Second Person)—पुरुष का एक भेद। (दे० पुरुष)

द्वित्व (Duality)—जब किसी शब्द में एक व्यंजन का संयोग उसी व्यंजन से होता है, तो इस संयोग या मेल को 'द्वित्व' कहते हैं। जैसे—त्व, प्प आदि।

द्विस्पृष्ट वर्ण—जो अक्षर जिह्वा के अग्रभाग को उलटाकर या तालु के पिछले भाग में लगाने से बोले जाते हैं। उन्हें द्विस्पृष्टवर्ण कहते हैं। ड़ और ढ़ द्विस्पृष्ट वर्ण हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

द्वियौगिक काल—'काल' का एक भेद। (दे० काल-द्वियौगिक काल)

द्विरुक्त—द्विरुक्त पदों की गिनती समास-पदों में ही होती है, क्योंकि वे अर्थ गर्भ होते हैं और उनमें निरन्तरता, सदृश्यता, सर्वता, अधिकता, विविधता, विषय-परकता आदि की विवक्षा रहती है। जैसे—

मैं बैठे-बैठे थक गया हूँ। (निरन्तरता)

उसकी कमीज का रंग पीला-पीला है। (सदृश्यता)

यह घर-घर घूमता है। (सर्वता) आदि।

द्विरुक्त समास-पदों के अवयवों में योजिका लगाते भी हैं और प्रायः नहीं भी लगाते, जैसे—बैठे-बैठे/बैठे बैठे।

द्विवचन (Dual Number)—(दे० वचन-द्विवचन)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ध

ध—यह हिन्दी वर्णमाला का उन्नीसवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण—स्थान दंत, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, संवार, नाद और घोष हैं।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह महाप्राण घोष दंत्य स्पर्श है।

धातु (Root or Verbal Root)—इसे अंग अथवा प्रकृति भी कहते हैं। क्रिया का वह मूल रूप जिसमें प्रत्यय जुड़ने से उसका रूपान्तर और कुछ अर्थान्तर भी हो जाए अथवा 'जिस मूल शब्द में विकार होने से क्रिया बनती है उसे धातु कहते हैं।'

जैसे—लिख 'धातु' है इसमें 'ना' प्रत्यय जुड़ने से 'लिखना' क्रिया का साधारण रूप बनता है। क्रिया के इस साधारण रूप को भी हिन्दी भाषा में प्रायः धातु ही बोलते हैं।

व्युत्पत्ति से धातु के पाँच भेद हैं—

(1) **मूल धातु** (Primitive Verbs)—स्वयं सिद्ध धातु को मूल धातु कहते हैं। जैसे—आना, जाना, बैठना आदि।

(2) **यौगिक धातु** (Derivative Verbs)—जिन धातुओं की व्युत्पत्ति किसी मूल धातु से या किसी अन्य शब्द-भेद से हुई हो, उन्हें यौगिक धातु कहते हैं। जैसे—दिलाना, दुखाना आदि।

(3) **नाम धातु** (Denominative or Nominal Verbs)—जो धातुएँ अन्य शब्द-भेदों में से किसी से बनती हैं। जैसे—रंगना, अपनाना आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(4) **संयुक्त नाम धातु** (Compound Denominatives)—जो धातुएँ किसी मूल धातु और अन्य शब्द-भेद के संयोग से बनें। जैसे—बात करना, अलग करना आदि।

(5) **अनुकरण धातु** (Imitative Verbs)—जो धातुएँ किसी वस्तु की ध्वनि के अनुकरण पर बनें। जैसे—बड़बड़ाना, खटखटाना आदि।

ध्वन्यात्मक शब्द (Sanod)—सभी प्रकार के नाद, निनाद या आहट को जो कानों द्वारा सुने जा सकें 'ध्वन्यात्मक शब्द' कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

न

न—यह हिन्दी वर्णमाला का बीसवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मतानुसार इसका उच्चारण स्थान दंत, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष है।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, घोष अनुनासिक वर्त्स्य स्पर्श है।

डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार इसके उच्चारण में जीभ की नोक दंत्य, स्पर्श व्यंजनों के समान दांतों की पंक्ति को न छू कर ऊपर के मसूढ़ों को छूती है, अतः प्राचीन प्रथा के अनुसार न् को दंत्य मानना ठीक नहीं है। यह वास्तव में वर्त्स्य है।

नकारात्मक (Negative Sentense)—'आज्ञा सूचक' के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार के वाक्य जब नकार बोधक अर्थ के सूचक होते हैं, तब उन्हें नकारात्मक वाक्य कहते हैं। जैसे—आज धूप नहीं निकली (नकारात्मक विधान सूचक)

नपुंसक लिंग (Nutral Gender)—लिंग का एक भेद।

(दे० लिंग—नपुंसक लिंग)

नाम—संस्कृत भाषा में शब्दों के दो मुख्य विभाग किये गये हैं—'नाम' और 'आख्यात'। हिन्दी ने संस्कृत के 'नाम' तत्सम और तद्भव दोनों अपनाए हैं; किन्तु 'आख्यात' (धातु) तद्भव रूप में ही।

नाम धातु—धातु का भेद। (दे० धातु—नाम धातु)

नाम पद—अर्थ की दृष्टि से पदों के दो भेद हैं—नामपद और क्रियापद। नामपद, नाम के सूचक होते हैं। (दे० पद)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाम पदों के तीन भेद होते हैं—संज्ञा पद, सर्वनाम पद और विशेषण पद। (दे० यथास्थान)।

नामपद यदि नियत हो तो उसे संज्ञा पद, यदि वह सभी नाम पदों के लिए प्रयुक्त होता है, तो उसे सर्वनाम पद और यदि वह किसी पद की विशेषता वतलाता है, तो उसे विशेषण पद कहते हैं। जैसे—

संज्ञा पद—रमेश, कुर्सी, सूरज, तारे, पृथ्वी आदि।

सर्वनाम पद— मैं, तू, वह, क्या, कौन—आदि।

विशेषण पद—काला, गोरा, भारी, मोटा आदि।

नामी स्वर—सोलह स्वरों में पहले दो स्वर अ, आ और अंत के दो स्वर अं अः को छोड़कर शेष 12 स्वर 'नामी स्वर' कहलाते हैं। (दे० स्वर—नामी स्वर)

नासिक्य व्यंजन (Nasal Consonants)—ङ्, ञ्, ण्, न्, और म् इन व्यंजन वर्णों का उच्चारण करते सयय कुछ श्वास अपने आप (स्वतः) ही नाक से भी निकलता है, इसलिए इन्हें नासिक्य व्यंजन कहते हैं।

नासिक्य स्वर (Nasal Vowels)—आरम्भ में ं (अनुस्वार) का उच्चारण, मुखद्वार वन्द रहने की अवस्था में नासिका से किया जाता रहा है, इस लिए ं अनुस्वार को नासिक्य स्वर भी कहते हैं।

निजत्ववाचक सर्वनाम (Reflaxive Pronoun)—सर्वनाम का भेद। (दे० सर्वनाम)

निपात (Particle)—उन सहायक स्वरों को निपात कहते हैं, जो वाक्यार्थ में नई विवक्षा लाते हैं। हिन्दी के प्रमुख निपात हैं—केवल, क्या, जी, तक, तो, न, नहीं, भर, भी, मत, मात्र, सही, सिर्फ, हाँ, ही।

1. 'क्या' और 'न' प्रश्न सूचक निपात हैं। इनमें से 'क्या' का प्रयोग वाक्य के आरम्भ में होता है और न का अन्त में। यथा—क्या वह जाता है ? तथा वह जाता है न ?
2. अधिक ज़ोर देने के लिये 'क्या' निपात का प्रयोग वाक्य के अन्त में एवं कर्त्ता के बाद भी किया जाता है, जैसे—क्या वह गया है ? वह गया है क्या ? वह क्या गया है ? आदि।
3. 'मत' निपात आज्ञा सूचक वाक्य को निषेधात्मक बना देता है, जैसे—आप वहाँ मत जाइये।
4. 'मत' निपात सामान्यतया क्रियापदों से पहले जाता है और यदि क्रियापद संयुक्त हुआ, तो विकल्प से मुख्य क्रियापद के बाद भी जैसे—वहाँ आ जाना। वहाँ मत आ जाना। वहाँ आ मत जाना।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5. अधिक ज़ोर देने के लिये 'मत' का प्रयोग वाक्य के अन्त या आरम्भ में भी होता है, जैसे—वहाँ मत आना। मत वहाँ आना। वहाँ आना मत।
6. नकार बोधक निपात 'नहीं', का प्रयोग क्रियापदों से पहले या मुख्य क्रियापद के बाद होता है—यथा—वह मुझको नहीं मानता था। वह मुझको मानता नहीं था।
7. 'नहीं' निपात का प्रयोग होने पर वर्तमान काल वाचक सहायक शब्द तथा वर्तमान कालिक मूल क्रियापद का विकल्प से लोप भी हो जाता है। जैसे—वह पुस्तक खरीदता है। वह पुस्तक नहीं खरीदता है। वह पुस्तक नहीं खरीदता।
8. अधिक जोर देने के लिए 'नहीं' निपात का प्रयोग वर्तमान काल वाचक सहायक शब्द तथा वर्तमानकालिक मूल क्रियापद के बाद करते हैं, जैसे—वह गया है। वह नहीं गया है। वह नहीं गया (नियम 7)
9. 'न' निपात का प्रयोग भी निषेध कारक तथा नकारबोधक रूप में होता है, जैसे—यहाँ मत आना। यहाँ न आना।
10. 'नहीं' का प्रयोग संकल्पसूचक होता है, एवं 'न' का प्रयोग असमर्थता या अनिच्छा सूचक, जैसे—वह नहीं आया, वह न आया।
11. 'जी' ऐसा आदर सूचक निपात है, जिसका प्रयोग विशेष रूप से संज्ञापदों के बाद तथा कुछ अवसरों पर सर्वनाम तथा संज्ञा-विशेषणों के बाद भी होता है; जैसे—सोहन जा रहा है। (संज्ञा पद के साथ), मैंने आप जी को याद दिलाया था। (सर्वनाम पद के साथ), अच्छा जी (संज्ञा विशेषण के साथ)।
12. विभक्ति परसर्ग से रहित एकवचन संज्ञापद कर्त्ता के परे 'जी' निपात हो तो क्रियापद बहुवचन (आदरार्थ) में आता है, जैसे—सुरेश आ रहा है—सुरेश जी आ रहे हैं।
13. उत्तर के रूप में 'जी' का प्रयोग सहमति, अवज्ञा एवं क्षमार्थ होता है, जैसे—तुम वहाँ गये थे ?—जी। (सहमति सूचक)
    मैं तुम्हारी गर्दन मरोड़ दूँगा।—जी। (अवज्ञा सूचक)
    कल हमारे यहाँ आइयेगा।—जी ? (क्षमार्थ, आशय फिर से कहिए)
14. भी, ही तो ऐसे निपात हैं जिनका प्रयोग नामपद तथा क्रियापद; विशेषतया मुख्य क्रियापद के बाद होता है, जैसे—
    रमेश भी (तो/ही) आयेगा। रमेश आएगा भी (तो/ही)
15. 'भी' निपात में 'अतिरिक्त' की विवक्षा सूचित होती है, जैसे—रमेश भी आएगा। अर्थात् कोई और तो आ ही रहा है, रमेश भी आएगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

16. 'ही' निपात प्रस्तुत से 'भिन्न नहीं', या 'अतिरिक्त नहीं' की विवक्षा सूचित करता है; जैसे—रमेश ही आएगा। सीता सुन्दर ही है।
17. 'तो' निपात 'औरों' का विचार छोड़कर आशा या निश्चय प्रदर्शित की विपक्षा सूचित करता है, जैसे—रमेश तो आएगा।
18. यदि संज्ञापद विभक्ति-परसर्ग से मुक्त हो, तो बलप्रदायक निपात विभक्ति परसर्ग के बाद आता है; जैसे—उसने भी पुस्तक खरीदी है। उसने तो पुस्तक खरीदी है। उसने ही पुस्तक खरीदी है।
19. 'ही' निपात का प्रयोग विकल्प से विभक्ति-परसर्ग से पूर्व भी होता है, जैसे—उसने ही पुस्तक खरीदी थी। उस ही ने पुस्तक खरीदी।
20. 'सिर्फ' 'मात्र' तथा 'केवल'—ये तीनों निपात 'प्रस्तुत से अतिरिक्त कुछ और नहीं, की विवक्षा प्रकट करते हैं।
21. संज्ञापदों तथा क्रियापदों से प्रायः पूर्व और विकल्प के बाद भी उक्त तीनों निपातों का प्रयोग होता है, जैसे—
    सिर्फ रमेश आएगा—रमेश सिर्फ आएगा।
22. 'मात्रा' आकर तत्सम संज्ञापदों के बाद 'सब तथा प्रत्येक' की विवक्षा प्रकट करता है, जैसे—प्राणी मात्र दुःखी हैं।
23. 'भर' तथा 'तक' ऐसे बलप्रदायक निपात हैं, जो नामपदों तथा क्रिया-पदों के बाद आते हैं, जैसे—मीरा रात भर जागती रही। वह यहाँ आयी भर।
24. नामपद के परे यदि विभक्ति-परसर्ग हो तो 'भर' तथा 'तक' निपात उस विभक्ति परसर्ग से पहले आते हैं; जैसे—
    कृष्णा घर भर को खिलाती है। उसने भाई तक को नहीं बुलाया।
25. सामान्यतः 'भर' और 'तक' का प्रयोग मुख्य क्रियापद के बाद होता है, जैसे—वे रात में लिखते भर हैं।
26. 'भर' निपात सकल एवं केवल की विवक्षा सूचित करता है, जैसे—आशा रात भर जागती रही। वह मेरा नाम भर जानती है।
27. 'तक' निपात 'अतिरिक्त ग्रहण' की विवक्षा सूचित करता है, जैसे—वह मेरा नाम तक जानती है। वे आँख तक नहीं मिलाते।
28. समय सूचक संज्ञापदों के अनन्तर 'भर' और 'तक' निपात सामूहिक रूप से कथित काल की अवधि सूचित करते हैं, जैसे—मैं घण्टा भर तक वहाँ बैठा रहा।
29. 'तक' निपात कुछ अवसरों पर स्थान, समय तथा भाववाचक एवं क्रियार्थक संज्ञापदों का सम्बन्ध भी क्रियापदों से जोड़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

30. जब 'तक' नामपदों का सम्बन्ध क्रियापदों से जोड़ता है, तो यह कथित काल या स्थान की सम्भावित सीमा की विवक्षा द्योतित करता है एवं विभक्ति परसर्ग का भी काम करने लगता है, जैसे—
वह घर तक गया था। पानी सुबह तक बरसता रहा।
'सम्भावित' सीमा लेखक के दृष्टिकोण से सम्बद्ध होती है।
जैसे—'वह सुबह तक आएगा' से आशय यह भी हो सकता है कि सुबह होने से पहले आएगा और यह भी हो सकता है, सुबह बीतने पर आएगा।

31. 'भर' निपात भी कुछ अवसरों पर अपनी विवक्षा प्रकट करने के अतिरिक्त मानसूचक संज्ञापदों का सम्बन्ध नाम पदों से जोड़ता है, जैसे—थैला भर चीनी। गिलास भर पानी।

32. 'तक' और 'भर' पूर्ण विभक्ति-परसर्ग नहीं हैं, यही कारण है जिन नामपदों के बाद ये आते हैं, उनमें सदा विकार नहीं होते; जैसे—प्याला भर चाय-प्याले भर चाय।

33. नकारबोधक वाक्यों में 'नहीं' का प्रयोग प्रायः 'तक' तथा 'भर' निपातों के बाद होता है, जैसे—शीला आयी तक नहीं।

34. 'सही' निपात प्रवृत्ति मूलक है तथा इसका प्रयोग वाक्य के अन्त में होता है; जैसे—तुम आओ सही। तू पढ़ सही।

35. 'सही' के पहले 'तो' निपात का प्रयोग वरीय समझा जाता है। जैसे—तुम आओ तो सही।

36. 'सही' का प्रयोग आश्चर्य, औचित्य आदि सूचित करने के लिये भी होता है, जैसे—आप वहाँ गए सही। (चलो, यही सही)

निपात शब्द (Irragular words or Exceptional Words)—जो शब्द व्याकरण के नियमों से सिद्ध न हों वे 'निपात शब्द' कहलाते हैं।

(दे० शब्द—निपात शब्द)

निरनुनासिक वर्ण (Non-nasals)—अनुनासिक वर्ण के अतिरिक्त सभी वर्ण निरनुनासिक हैं। (दे० वर्ण-निरनु-वर्ण)

निरनुनासिक स्वर (Pure Vowels)—जहाँ स्वरों का शुद्ध उच्चारण नासिका की सहायता के बिना किया जाता है, वहाँ सर्वत्र सभी स्वर निरनुनासिक (अथवा अनुनासिक) होते हैं। (दे० स्वर-निरनुनासिक स्वर)

निरर्थक शब्द (Inarticulate Sound or Insiguificant Sound)—एक शब्द-भेद। अर्थ रहित शब्दों को निरर्थक शब्द कहते हैं। इसके दो उपभेद हैं—

(1) निरक्षर निरर्थक शब्द।

(2) साक्षर निरर्थक शब्द। (दे० शब्द—निरर्थक शब्द)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निर्मित शब्द—ऐसे शब्द जो अन्य शब्दों के योग से अथवा उपसर्ग, प्रत्यय आदि की सहायता से बनाये गये हों, उन्हें निर्मित शब्द कहते हैं। जैसे—भाव-ताव (संस्कृत भाव+तद्भव ताव) (दे० शब्द—निर्मित शब्द)

निर्मित शब्द यदि किसी एक स्रोत के शब्दों, प्रत्ययों, उपसर्गों, आदि के योग से तथा उसी भाषा के नियमों के अनुसार बनाये गये हों, तो उन्हें उस स्रोत के शब्द भी कह सकते हैं; जैसे—

निर्मित आकार शब्द—लोक संभा, राष्ट्रपति।

निर्मित तद्भव शब्द—झाड़-फूँक, नंगा-झोली।

निर्वृत्यक्षर (Utterance or Pronounciation of a letter)—शब्द के अभिभागी अंशोच्चारण या मूल ध्वनि को निर्वृत्यक्षर कहते हैं। यह कर्णेन्द्रिय का विषय है। (दे० वर्ण अक्षर)

निश्चयवाचक सर्वनाम (Definite Pronoun)—सर्वनाम का एक भेद। (दे० सर्वनाम)

निश्चयार्थ—क्रिया के जिस रूप से किसी विधान का निश्चय सूचित हो। (दे० अर्थ—निश्चयार्थ)

निश्चित परिमाणवाचण विशेषण (Adjective of Definite Quantity)—परिमाणवाचक विशेषण का एक भेद। (दे० विशेषण—परिमाणवाचक विशेषण)

निषेधात्मक आज्ञा सूचक वाक्य—जब आज्ञासूचक वाक्य निषेध कारक होता है, तब उसे निषेधात्मक आज्ञा सूचक वाक्य कहते हैं। (दे० वाक्य—आज्ञासूचक वाक्य)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प

प्—यह हिन्दी-वर्णमाला का इक्कीसवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण स्थान ओष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, विकार, श्वास और अघोष हैं।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, अघोष ओष्ठ्य स्पर्श व्यंजन है।

डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार ओष्ठ्य ध्वनियों के उच्चारण में जीभ से बिलकुल सहायता नहीं ली जाती। बाबू श्यामसुन्दर दास के अनुसार यदि कोई ओष्ठ्य वर्ण शब्द अथवा अक्षर के अन्त में आता है, तो उसमें केवल स्पर्श होता है, स्फोट नहीं।

पद—प्रत्यय अथवा विभक्ति युक्त संज्ञा शब्दों और प्रत्यय युक्त धातुओं को वाक्य में प्रयुक्त होने पर पद कहते हैं। रचना-भेद, अर्थ भेद तथा प्रयोग-भेद की दृष्टि से जब शब्दों एवं सहायक शब्दों पर विचार किया जाता है, तब उन्हें पद एवं उप पद कहते हैं।

रचना-भेद के विचार से पदों के तीन भेद हैं—

(1) समास पद, (2) यौगिक पद, (3) रूढ़ पद।

दो पदों के योग से बने पद को समासपद, उपपदों और पदों के योग से बने पद को यौगिक पद और ऐसे पद को रूढ़ पद कहते हैं जिसमें किसी अन्य पद या उपपद का योग न हुआ हो, जैसे—

जेब घड़ी—समास-पद [जेब (पद)+घड़ी (पद)]
चलना—यौगिक पद [चल (पद)+ना (उपपद)]
अनदेखा—यौगिक पद [अन (उपपद)+देख (पद)+आ उपपद)]
वही—यौगिक पद [वह (पद)+ही (उपपद)]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्थ की दृष्टि से पदों के दो भेद हैं—नाम पद और क्रिया पद। नामपद नाम के सूचक पद हैं, जबकि क्रियापद क्रिया के सूचक। जैसे—घोड़ा आया।

'घोड़ा' एक जीव का नाम है, अतः नाम पद हुआ और आया भूतकाल में हुई आना क्रिया का सूचक है, अतः क्रिया पद हुआ।

नाम पदों के तीन भेद हैं—

(1) संज्ञापद, (2) सर्वनाम पद, (3) विशेषण पद।

क्रिया पदों के भी तीन भेद हैं—

(1) मूल क्रियापद, (2) धातु क्रियापद, (3) संयुक्त क्रिया पद।

नाम पद यदि नियत हो तो उसे संज्ञापद, यदि वह सभी नाम पदों के लिये प्रयुक्त हो, तो उसे सर्वनाम पद और यदि वह किसी पद की विशेषता बतलाता हो तो उसे विशेषण पद कहते हैं।

पद परिचय या पद व्याख्या (Parsing)—व्याकरण शास्त्र की सहायता से उसके नियमों के अनुसार वाक्य के प्रत्येक शब्द का शब्द भेद आदि प्रकट करने की प्रक्रिया को 'पद परिचय' या पद व्याख्या कहते हैं। (वि० दे० शब्द भेद)

पदबन्ध (Phrase)—जब दो या अधिक शब्द नियत क्रम से तथा निश्चित अर्थ में किसी पद का कार्य करते हैं, तो उन्हें पद बन्ध कहते हैं। जैसे—

संज्ञापद बन्ध-आँख का इशारा, चीनी मिट्टी, मिट्टी का तेल, जान देना। संज्ञा-विशेषण पदबन्ध-ध्यान में मग्न, काम में लगा हुआ, हाथ का साफ। क्रिया विशेषण पद बन्ध-किसी न किसी तरह, सुबह होते, दिया जले।

1. ऐसे पद बन्ध को मुहावरा कहते हैं, जिससे कुछ विशिष्ट लक्षण जन्य अर्थ निकलता हो, जैसे—कमर टूट जाना, (शाब्दिक अर्थ) उसकी कमर टूट गयी है। (लक्षणा जन्य अर्थ) शक्ति या साहस न रखना।

अतः जब किसी पद से कुछ विशिष्ट लक्षणा जन्य अर्थ निकलता हो, तो उसका प्रयोग लाक्षणिक या मुहावरेदार कहा जा सकता है; जैसे—अब तुम्हारी नौकरी तो गई। (गई का प्रयोग मुहावरेदार है।)

2. ऐसे पदबन्ध को कहावत कहते हैं, जो किसी कथा पर आधारित होता है, सादृश्य द्योतनार्थ प्रयुक्त होता है एवं प्रायः वाक्य के रूप में होता है, जैसे—नाच न जाने आंगन टेढ़ा।
3. दो या दो से अधिक पदों के संयोजन से बने संक्षिप्त पद को समास-पद अथवा समस्त पद कहते हैं। जैसे—

जेब की घड़ी=जेब घड़ी

काठ की पुतली=कठपुतली

(विशेष देखिए—समास पद) (समस्त पद)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पद व्यवस्था या पद अन्वय—पद परिचय या पद व्याख्या (Parsing) को ही पद अवस्था या पद अन्वय कहते हैं (दे० पद परिचय)

पदान्तर—पद-भेद में अन्तर आ जाना ही पदान्तर है।

1. सर्वनाम संज्ञा-विशेषणों की तरह प्रयुक्त होते हैं, जैसे—हम लोग जाएँगे। हम वे पुस्तकें खरीदेंगे। जो लोग जाना चाहें चले जायें।
2. मान सूचक संज्ञापद संज्ञा-विशेषणों की तरह प्रयुक्त होते हैं, जैसे—मैं दो किलो आम खा सकता हूँ। उसके पास दस कलम हैं।
3. समय तथा स्थान-सूचक संज्ञापत्र क्रिया विशेषणों की तरह भी प्रयुक्त होते हैं, और यदि वे मूलतः अकारान्त पुलिंग हैं, तो एकारान्त भी होते देखे जाते हैं; जैसे—मैं दो वर्ष पटियाला रहा। वह आगरा जाएगा।

   (क्रिया पद के सम्बन्ध में समय एवं स्थान का निर्देश करने वाले पद क्रिया विशेषण होते हैं।)
4. जब संज्ञापद क्रिया विशेषण रूप में प्रयुक्त होते हैं, तो उनकी विशेषता बतलाने वाले संज्ञा बिशेषण तथा सर्वनाम-विशेषण विकारी रूप में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—वह अच्छे समय आया। तुम किस तरफ गए थे ?
5. अनेक संज्ञा विशेषण संज्ञापदों तथा सर्वनाम पदों की तरह भी प्रयुक्त होते हैं, जैसे—गरीब को कौन बुलाता है ? सब यहाँ आइये। कुछ इधर भी जाइये।
6. अनेक संज्ञापद धातुओं की तरह प्रयुक्त होते हैं, जैसे—स्वीकार, नकार, आरम्भ, अन्त।
7. अनेक संज्ञा-विशेषण पद क्रिया विशेषण की तरह प्रयुक्त होते हैं, तथा प्रकृत रूप में रहते हैं, जैसे—

   तुम अच्छा खेलते हो। रमेश कैसा आया।
8. जब आकारान्त सार्वनामिक-विशेषण या संज्ञा-विशेषण को रीति सूचक क्रिया विशेषण की तरह प्रयुक्त करना अभीष्ट होता है, तब उसे एकारान्त विकारी रूप में प्रयुक्त करते हैं; जैसे—लड़का कैसे आया ? आप भले आए अब मैं क्यों जाऊँ ?
9. अनेक धातु संज्ञापदों की तरह प्रयुक्त होते हैं; जैसे—जाँच, माँग।
10. कुछ धातु समासपदों में ही संज्ञापदों की तरह प्रयुक्त होते हैं, जैसे—घट-बढ़।
11. एक अक्षर वाली कुछ धातुओं के पूर्णोच्चरित 'अ' स्वर को दीर्घ करने से संज्ञापद बनते हैं, जैसे—बढ़ से बाढ़, चल से चाल।
12. अकर्मक धातु से सकर्मक धातु बनते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

13. आकारान्त तथा पड़, रह, सक, हो आदि अकर्मक धातुओं के सकर्मक धातु रूप नहीं बनते ।

14. अकारान्त अकर्मक धातु में 'आ' प्रत्यय के योग से सकर्मक धातु बनाये जाते हैं; जैसे—चल+आ
=च्+अ+ल्+अ (अपूर्णोच्चरित)+आ
=च्+अ+ल्+आ
=चला ।

इसी तरह दब, मिल अकर्मक धातु का सकर्मक धातु रूप=दबा, मिला ।

15. (अ) समर्कमकता, प्रेरणार्थकता एवं परोन्मुखता सम्बन्धी प्रत्ययों का योग होने पर धातु के आ, ई, एवं ऊ स्वर ह्रस्व हो जाते हैं, (ब) ए एवं ओ स्वरों का रूप क्रमशः इ एवं उ हो जाता है, तथा (स) ऐ स्वर का विकल्प से इ होता है; जैसे—

अकर्मक धातु	सकर्मक धातु
जाग	जगा
बीत	बिता
सूख	सुखा
खेल	खिला
बैठ	बैठा, बिठा

16. अकर्मक धातु का अन्त्य स्वर यदि अपूर्णोच्चरित 'अ' से भिन्न हो तो 'आ' के स्थान पर 'ला' प्रत्यय आता है, जैसे—
अकर्मक धातु—सो—(अन्त्य स्वर ओ)
सकर्मक धातु—सो+ला—स्+ओ+ला
किन्तु नियम—15 से स्+उ+ला—सुला ।

17. भीग एवं डूब धातुओं में 'आ' के स्थान पर 'ओ' प्रत्यय विकल्प से आता है; जैसे—
अकर्मक धातु 'भीग'
सकर्मक रूप—(1) भीग+आ=भिगा (नियम—14)
(2) भीग+ओ=भिगो (नियम—17)
अकर्मक धातु 'डूब'
सकर्मक रूप—(1) डूब+आ=डुबा (नियम—14)
(2) डूब+ओ=डुबो (नियम—17)

18. आत्मोन्मुखी सकर्मक धातुओं से परोन्मुखी सकर्मक रूप भी उसी प्रकार बनाये जाते हैं जिस प्रकार अकर्मक धातुओं के समकर्मक रूप; जैसे—कर+आ=करा । लिख+आ=लिखा ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(सकर्मक क्रिया का व्यापार आत्मपरक हुआ तो उसे आत्मोन्मुखी और दूसरे के प्रति हुआ तो उसे परोन्मुखी कह सकते हैं।)

19. 'खा' आत्मोन्मुखी धातु का परोन्मुखी सकर्मक रूप 'खिला' बनता है, जैसे—वह सब को खिलाता है।

20. सकर्मक धातु के क्रिया पदों के स्थान पर उस समय प्रेरणार्थक धातु के क्रियापदों का प्रयोग होता है, जब कर्त्ता क्रिया का सम्पादन स्वयं न करके किसी से करवाता है।

21. सकर्मक धातु को प्रेरणार्थक रूप देने के लिए 'वा' प्रत्यय लगाते हैं, जैसे—लूट+वा=लुटवा, बाँध+वा=बँधवा।

22. 'ला' धातु में 'वा' प्रेरणार्थक प्रत्यय लगने से 'लिवा' रूप बनता है।

23. सकर्मक धातु के अन्तिम अक्षर में महाप्राण व्यंजन हो तो 'वा' के स्थान पर 'ला' प्रत्यय अधिक वरीय समझा जाता है, जैसे—
कह=कहवा तथा कहला, देख=दिखवा तथा दिखला।

24. बोलियों में 'कहवा' और 'कहला' के योग से 'कहलवा' और 'दिखला' तथा 'दिखला' के योग से 'दिखलवा' प्रेरणार्थक रूप भी बनते हैं।

नोट—परोन्मुखी एवं प्रेरणार्थक क्रियापदों में जो सूक्ष्म अन्तर है, उस पर सामान्यतया ध्यान नहीं दिया जाता और परोन्मुखी क्रिया पदों को प्रेरणार्थक क्रियापदों के तुल्य मान लिया जाता है। अधिकांश अवसरों पर तो कार्य चल जाता है; किन्तु कुछ अवसरों पर अर्थगत विशिष्टता द्रष्टव्य होती है, जैसे—

केशव रीना को पढ़ाता है। केशव रीना को पढ़वाता है।
(परोन्मुखी क्रियापदों में कर्त्ता की सक्रियता रहती है और प्रेरणार्थक क्रियापदों में कर्त्ता के अभिकर्त्ता की।)

25. कुछ सकर्मक धातुओं को अकर्मक रूप देने के लिये उनके आ स्वर का अ; ई तथा ए स्वरों का इ; एवं ऊ तथा ओ स्वरों का उ करते हैं; जैसे—निकाल=निकल, निचुड़=निचोड़, लूट-लुट, भीड़=भिड़।

26. 'सी' सकर्मक धातु का अकर्मक रूप 'सिल' होता है।

27. जोड़, तोड़, फोड़, छोड़, एवं फाड़ सकर्मक धातुओं के अकर्मक रूप क्रमशः जुट-टूट, फूट, तथा फट बनते हैं।

28. सामान्यतः जिस पद, पदबन्ध अथवा सहायक शब्द का बिना प्रयोग किए ही अनुमान अथवा प्रसंग से अर्थ व्यक्त हो जाता है। उसका लोप माना जाता है, जैसे—
—/ अन्दर आ जाऊँ। 'मैं' लोप।
—/ यहाँ बैठो। 'तुम' लोप।
—/दिल्ली/—। 'मैं'/'जाऊँगा' लोप।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नोट—'लोप' वस्तुतः **लाघवीकरण** की ओर सामाजिक अभिरुचि का द्योतक है।

पदार्थ वाचक संज्ञा—संज्ञा का एक भेद (दे० संज्ञा—पदार्थ वाचक संज्ञा)

परसर्ग (Past-position)—वाक्य के एक पद का सम्बन्ध दूसरे पद से स्थापित करने वाले सहायक शब्दों को परसर्ग या विभक्ति कहते हैं। जैसे—

गोविन्द ने मदन को पुकारा।

यहाँ 'गोविन्द' और 'मदन' नामपद हैं और 'पुकारा' क्रियापद। 'ने' और 'को' सहायक शब्द हैं। 'ने' गोविन्द का सम्बन्ध 'बाँधा' से जोड़ता है और 'को' मदन का सम्बन्ध भी 'पुकारा' से। अतः 'ने' और 'को' दोनों विभक्ति-परसर्ग हुए।

डा० बदरीनाथ कपूर का विचार है कि—'विभक्ति' और परसर्ग' इन दो शब्दों मे से किसे वरीयता दी जाये, यह निर्णय करना कठिन है। विभक्ति संस्कृत भाषा का शब्द है जो मूलतः प्रत्यय का सूचक है। संस्कृत भाषा में विभक्तियाँ प्रत्ययों की तरह ही प्रयुक्त होती हैं। अर्थात् पदों से सटाकर लिखी जाती हैं और उनका अविभाज्य अंग होती हैं। परन्तु अधिकतर विभक्तियाँ अधिकतर अवस्थाओं में पदों से सटाकर नहीं लिखी जातीं। संस्कृत में नामपदों की रचना विभक्ति लगने पर ही होती है, परन्तु हिन्दी में पदों की रचना में विभक्ति का योग आवश्यक नहीं माना जाता। हिन्दी में नामपद और विभक्ति के बीच निपात भी आ टपकते हैं परन्तु संस्कृत में ऐसा नहीं होता। निश्चय ही संस्कृत की विभक्ति से हिन्दी की विभक्ति भिन्न है। इसके लिये आधुनिक विद्वानों ने 'परसर्ग' शब्द अपनाना उचित समझा है।

यदि शब्दार्थ की दृष्टि से विचार करें, तो कह सकते हैं कि विभक्ति वह है जो विभक्त करे। हम देखते हैं कि सामान्यतया कर्त्ता के लिंग, वचन तथा पुरुष के अनुसार क्रियापदों में परिवर्तन होता है, परन्तु उसके परे विभक्ति आ जाने पर नहीं। विभक्ति सचमुच क्रियापदों को कर्त्ता के लिंग, वचन तथा पुरुष के अनुरूप ढलने से रोकती है। जिस संज्ञापद के बाद विभक्ति आती है, उसके लिंग, वचन तथा पुरुष के अनुसार क्रियापद नहीं बदलता। इस दृष्टि से विभक्ति का प्रयोग सार्थक है। 'परसर्ग' का अर्थ है—जिसकी सृष्टि परे हो। सामान्यतया विभक्ति परे ही रहती है, अतः यह नाम भी सार्थक है।

(अ) हिन्दी में छह विभक्ति-प्रत्यय तथा छह ही बिभक्ति-परसर्ग हैं।

विभक्ति-प्रत्यय—अ, ए, एं, ओं, रा, ना।

विभक्ति-परसर्ग—ने, को, से, में, पर, का।

1. कर्त्ताकारक में 'अ' विभक्ति-प्रत्यय एवं ने, को तथा से विभक्ति परसर्ग आते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2. कर्मकारक में अ, ए तथा एं विभक्ति-प्रत्यय एवं 'को' तथा 'से' विभक्ति परसर्गों का प्रयोग होता है।

3. क्रिया के निष्पादन में जो नामपद सबसे अधिक साधक होता है, उसे करण कहते हैं। करण कारक मैं 'से' विभक्ति परसर्ग आता है; यथा—'मैंने चाकू से आम काटा।' इस वाक्य में काटने की क्रिया में 'चाकू' सबसे अधिक साधक है, अतः चाकू करण है।

4. जिसे कुछ दिया जाए उसके सूचक नामपद को सम्प्रदान कहते हैं। सम्प्रदान कारक में 'को' विभक्ति-परसर्ग आता है। ऐसी दशा में कर्म-कारक में विभक्ति परसर्ग—'को' नहीं आता।
जैसे - वह शीला को अपनी कलम दे रहा था।

5. जिससे सम्बन्ध विच्छेद हो उसके सूचक नामपद को अपादान कारक कहते हैं। अपादान कारक में 'से' विभक्ति पर सर्ग आता है।

6. जिससे रिश्ता-नाता या स्वामित्व भाव सूचित करना हो, उसे सम्बन्ध कारक कहते हैं। (संस्कृत में सम्बन्ध को कारक नहीं माना जाता। हिन्दी में भी प्रायः नहीं, किन्तु आचार्य किशोरीदास वाजपेयी जी ने 'के' को सम्बन्ध कारक की विभक्ति सिद्ध किया है।) सम्बन्धकारक में 'का' विभक्ति परसर्ग एकारान्त विकारी रूप 'के' आता है।

7. जो नामपद क्रिया के आधार पर सूचक हो, उसे अधिकरणकारक कहते हैं। अधिकरणकारक में 'में' एवं 'पर' विभक्ति-परसर्ग आते हैं। व—जिन नामपदों के बाद विभक्ति-परसर्ग या विभक्ति-प्रत्यय आता है, उनमें कुछ अवस्थाओं में विकार भी हो जाता है। जैसे—घोड़ा घास खाता है—घोड़े ने घास खाई।

परिनिष्ठित भाषा—भाषा के सार्वदेशिक विशेषतया संस्कृत रूप को मानक भाषा या परिनिष्ठित भाषा कहते हैं।

परिमाणवाचक विशेषण (Adjective of Quantity)—विशेषण का एक भेद। (दे० विशेषण—परिमाणवाचक विशेषण)

पर्याय (Synonyms)—समान अर्थ वाले शब्दों में से प्रत्येक शब्द को एक दूसरे का पर्याय या पर्यायवाची शब्द कहते हैं।

प-वर्ग—प् फ् ब् भ् म् वर्ण-समूह प-वर्ग कहलाता है।

पश्चस्वर (Back Vowels)—स्वरों के उच्चारण में जीभ के अगले (अग्र), बिचले (मध्य) तथा पिछले (पश्च) भागों के उपयोग से भेद हो जाता है। जिन स्वरों के उच्चारण में जीभ का पिछला भाग ऊपर उठता है, उन्हें पश्चस्वर कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पारस्परिक सर्वनाम (Receprocal Pronoun)—जिस सर्वनाम का प्रयोग पारस्परिक व्यवहार करने में किया जाता है। जैसे—एक दूसरा। ऐसा शब्द हिन्दी भाषा में केवल एक ही है। कभी-कभी 'एक दूसरा' के स्थान पर 'परस्पर' या 'आपस में' का भी प्रयोग किया जाता है। (दे० सर्वनाम—पारस्परिक सर्वनाम)

पार्श्विक (Lateral)—हिन्दी की ल और ल्ह ध्वनियाँ पार्श्विक हैं। इनके उच्चारण में जीभ की नोंक ऊपर के मसूड़ों को भली-भाँति छूती है, पर दोनों ओर रास्ता खुला रहता है। अतः दायें-बाएँ दोनों ओर से श्वास वायु निकलता रहता है।

पुनरुक्त यौगिक शब्द (Repeated or Double Derivatives)—जो शब्द दो समान यौगिक शब्दों या समान ध्वनि वाले शब्दों के योग से बनें उन्हें पुनरुक्त यौगिक शब्द कहते हैं। जैसे—घर-घर, धूम-धाम आदि।

(दे० शब्द—पुनरुक्त यौगिक शब्द)

पुरुष (Person)—वक्ता, श्रोता और इनके अतिरिक्त अन्य 'सर्व' सृष्टि के इन तीन रूपों को व्याकरण की परिभाषा में 'पुरुष' कहते हैं।

पुरुष के तीन भेद है—

1. प्रथम पुरुष उत्तम पुरुष (First Person) वक्ता बोधक सर्वनाम—मैं और इसके रूपान्तर।

2. द्वितीय पुरुष मध्यम पुरुष (Second Person) श्रोता बोधक सर्वनाम—तू, आप और इसके रूपान्तर।

3. तृतीय पुरुष अन्य पुरुष (Third Person) वक्ता और श्रोता के अतिरिक्त अन्य पद बोधक सर्वनाम—वह और इसके रूपान्तर।

नोट—1. सभी संज्ञायें भी अन्य पुरुष की गणना में होती है।

2. संस्कृत भाषा में 'प्रथम पुरुष' शब्द उत्तम पुरुष का पर्यायवाची नहीं है, किन्तु 'अन्य पुरुष' का है।

पुल्लिग—लिंग (Gender) का एक भेद। पुंस्त्व का बोध कराने वाले संज्ञापद पुल्लिग कहलाते हैं। (दे० लिंग—पुल्लिग)

पुरुषवाचक सर्वनाम (Personal Pronoun)—सर्वमाम का एक भेद। (दे० सर्वनाम—पुरुषवाचक सर्वनाम)

पूरक (Completion or Object of a Transitive Verb)—सकर्मक क्रिया के कार्य की पूर्ति जिस कर्म या कर्मों द्वारा होती है, उस कर्म या कर्मों को 'पूरक' कहते हैं। (दे० पूर्ति)

पूर्ण अकर्मक क्रिया—अकर्मक क्रिया का एक उपभेद।

(दे० क्रिया—अकर्मक क्रिया)

पूर्ण भूतकालिक क्रियार्थक विशेषण—क्रियार्थक विशेषण का एक उपभेद। (दे० विशेषण—क्रियार्थक विशेषण)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूर्ण सकमर्क क्रिया—क्रिया का एक भेद। (दे० क्रिया-पूर्ण सकर्मक क्रिया)

पूर्णांक सूचक गणनाबोधक निश्चित संख्या वाचक विशेषण—संख्यावाचक विशेषण का एक उपभेद। (दे० विशेषण—संख्यावाचक विशेषण)

पूर्णता सूचक त्रिकाल व्यापक वर्तमान काल—वर्तमान काल का एक उपभेद। (दे० काल—वर्तमान काल)

पूर्णता सूचक भविष्य काल—भविष्य काल का एक उपभेद।

(दे० काल—भविष्य काल)

पूर्णता सूचक विशेषण—विशेषण का एक उपभेद। (दे० विशेषण)

पूर्ति (Comlement)—अपूर्ण क्रिया को पूर्ण करने के लिये जिस शब्द का प्रयोग किया जाय। (दे० अपूर्ण अकर्मक क्रिया, अपूर्ण सकर्मक क्रिया)

इसके दो प्रकार हैं—

1. उद्देश्य पूर्ति (Subjective Comlement)—अपूर्ण अकर्मक क्रिया की पूर्ति को 'उद्देश्य पूर्ति' कहते हैं। उद्देश्य प्रायः कर्त्ताकारक के रूप में रखा जाता है, इसीलिए उद्देश्य पूर्ति को कर्त्तापूर्ति भी कहते हैं।

2. कर्म पूर्ति (Objective Comlement) अपूर्ण सकर्मक क्रिया की पूर्ति को 'कर्मपूर्ति कहते हैं।'

पूर्व नाम (Antecedent)—जिस पूर्ववर्ती (आगे आने वाली) संज्ञा के लिये सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है, उसे पूर्व नाम कहते हैं।

पृथकत्व वाचक सर्वनाम—सर्वनाम का एक भेद।

(दे० सर्वनाम—पृथकत्व वाचक)

पृथकत्व वाचक विशेषण—विशेषण का एक भेद।

(दे० विशेषण—पृथकत्व वाचक)

प्रकम्पी—र् व्यंजन वर्ण को प्रकम्पी माना जाता है क्योंकि इसका उच्चारण करते समय जिह्वा में प्रकम्पन होता है।

प्रकृति (A Root or Original Form)—क्रिया का वह मूल रूप जिसमें कोई प्रत्यय जुड़ने से उसका रूपान्तर और कुछ अर्थान्तर भी हो जाय। इसे 'धातु' भी कहते हैं। अर्थात् यह शब्द का प्रत्यय रहित भाग होता है। प्रकृति (धातु) को 'अंग' भी कहा जाता है। इसके पाँच भेद हैं। (विशेष—दे० धातु)

प्रत्यय (Affixes)—जो शब्दांश किसी शब्द के आगे जोड़े जाने से अपना अर्थ प्रकट करते और उस शब्द के रूप और अर्थ में कुछ भेद कर देते हैं, उन्हें 'प्रत्यय' कहते हैं। जिन शब्दों में प्रत्यय जोड़े जाते हैं, उन शब्दों के प्रत्यय रहित भाग को प्रकृति या धातु या अंग कहते हैं (दे० प्रकृति)

(वि० दे० अव्यय-प्रत्यय नामक अव्यय)

सामान्यतया यौगिक पदों में प्रत्यय अलग अवयव माने जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जैसे—चलना=चल ना । चहकना=चहक ना ।

यदि प्रत्यय स्वर वर्ण से प्रारम्भ हो अथवा सामान्य व्यंजन वर्ण रूप में हो, तो अक्षर-विभाजन के समय उसे अलग अवयव नहीं मानते । जैसे—बहाव—बह+आव/ब हाव ।

प्रत्ययों से बने हुए शब्दों के दो मुख्य भेद हैं—1. कृदन्त, 2. तद्धति ।
(दे० यथास्थान कृदन्त, तद्धति)

प्रथम पुरुष—पुरुष का एक प्रकार । (दे० पुरुष—प्रथम पुरुष)

प्रधान कर्म—कर्म का एक भेद । (दे० कर्म—प्रधानकर्म)

प्रयत्न (Effort of Utterance)—वर्णों के उच्चारण की चेष्टा या रीति को प्रयत्न कहते हैं । यह दो तरह का होता है—

1. आभ्यन्तर प्रयत्न (Internal Effort of Utterance) ध्वनि उत्पन्न होने के पूर्व मुख में वाणिन्द्रिय की चेष्टा या क्रिया को आभ्यन्तर प्रयत्न कहते हैं ।

2. बाह्य प्रयत्न (External Effort) ध्वनि उत्पन्न होने पर कण्ठ आदि में वाणिन्द्रिय की चेष्टा या क्रिया को बाह्य प्रयत्न कहते हैं । (दे० यथा स्थल)

प्रयोग (Application)—वाक्य में कर्त्ता, या कर्म के पुरुष, लिंग और वचन के अनुसार अथवा स्थिर रूप से क्रिया का जो अन्वय अनन्वय (रूपान्तर) होता है, उसे 'प्रयोग' कहते हैं ।

प्रयोग के तीन भेद हैं—

1. **कर्तरि प्रयोग** (Subjective Application)—जहाँ क्रिया का रूपान्तर कर्त्ता के पुरुष, लिंग और वचन के अनुसार हो । जैसे—राम जाता है, लड़की जाती है । हम जाते हैं ।
2. **कर्मणि प्रयोग** (Objective Application)—जहाँ क्रिया का रूपान्तर कर्म के लिंग और वचन के अनुसार हो । जैसे—राम ने किताब पढ़ी, लड़की ने पत्र पढ़ा ।

2 1. **कर्तृवाच्य कर्मणि प्रयोग** (Objective Application in Active Voice)—राम ने किताब पढ़ी ।

2·2. **कर्मवाच्य कर्मणि प्रयोग** (Obj. Appl. in Passive Voice)—जैसे—किताब पढ़ी गयी ।

3. **भावे प्रयोग** (Invariable Application)—जहाँ क्रिया का रूपान्तर कर्त्ता या कर्म में से किसी के भी पुरुष, लिंग और वचन के अनुसार न हो, किन्तु जहाँ क्रिया सदा स्थिर रूप, केवल अन्य पुरुष लिंग और एक वचन में रहे । जैसे—राम ने लड़कियों को बुलाया आदि ।

3 1. **कर्तृवाच्य भावे प्रयोग**—लड़की ने अपनी बहनों को पीटा ।

3·2. **कर्मवाच्य भावे प्रयोग**—लड़कियों को पाठशाला भेजा जाये ।

3·3. **भाववाच्य भावे प्रयोग**—लड़की से दौड़ा नहीं गया ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रयोगाधार क्रिया विशेषण—क्रिया विशेषण का एक भेद (दे० क्रिया विशेषण-प्रयोगाधार क्रिया विशेषण ।)

प्रश्न वाचक सर्वनाम—सर्वनाम का एक भेद (दे० सर्वनाम)

प्रश्न सूचक वाक्य—उस वाक्य को 'प्रश्न सूचक' कहते हैं जिसमें किसी से कुछ पूछा जाय और फलतः जिसके उत्तर की प्रतीक्षा हो ।

प्रश्न सूचक वाक्य की पहचान वाक्य में प्रयुक्त किसी प्रश्न सूचक सर्वनाम, संज्ञा विशेषण या क्रिया विशेषण से, क्रियापद पर दिये जाने वाले जोर से तथा लिखित वाक्य में उसके अन्त में चिह्नित प्रश्न चिह्न से होती है । जैसे; तुम क्या कर रहे हो ? (प्रश्नसूचक सर्वनाम)

प्रेरक कर्त्ता—कर्त्ता का एक भेद । (दे० कर्त्ता)

प्रेरणार्थक क्रिया—क्रिया का एक भेद । (दे० क्रिया)

प्रेरित कर्त्ता—कर्त्ता का एक भेद । (दे० कर्त्ता)

प्लुत स्वर (Prolated Vowel)—(दे० स्वर-प्लुत स्वर)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फ

फ—यह हिन्दी वर्णमाला का बाईसवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण स्थान ओष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, विवार, श्वास और अघोष हैं। आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह महाप्राण, अघोष ओष्ठ्य स्पर्श व्यंजन है।

फ़्—यह दंत्योष्ठ्य, संघर्षी अघोष व्यंजन है। यह एक विदेशी ध्वनि है और केवल अरबी, फ़ारसी के तत्सम शब्दों में ही प्रयुक्त होती है। हिन्दी की बोलियों में इसके स्थान पर फ् प्रयुक्त होता रहा है और अब साहित्यिक हिन्दी में भी प्रायः फ़् ही चलता है।

इसका उच्चारण नीचे के होंठ को ऊपर की दाँतों की पंक्ति से लगाकर किया जाता है, पर होंठ और दाँत दोनों के बीच में से हवा रगड़ के साथ निकलती रहती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब

ब—यह हिन्दी वर्णमाला का तेईसवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण स्थान ओष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष हैं। आधुनिक व्याकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, घोष, ओष्ठ्य स्पर्श व्यंजन है। इसका उच्चारण भी दोनों होठों को छुआ कर किया जाता है।

बलाघात (Stress)—उच्चारण के समय शब्द के किसी वर्ण या अक्षर पर अन्य वर्णों या अक्षरों की अपेक्षा श्वास का अधिक दबाव पड़ने की स्थिति को बलाघात कहते हैं।

बलाघात यदि वर्ण पर हो तो उसे वर्ण बलाघात और यदि अक्षर पर हो तो उसे अक्षर बलाघात कहते हैं।

सम्बद्ध वर्ण या अक्षर पर बलाघात सूचित करने के लिए उस वर्ण या अक्षर के नीचे रेखिका लगाते हैं।

1. एक अक्षर वाले शब्दों के स्वर वर्ण पर बलाघात होता है, जैसे—
   काम—क्+**आ**+म्+अ;
   दान—द्+**आ**+न्+अ
   गोप—ग्+**ओ**+प्+अ
2. वाक्य के ऐसे एक अक्षर वाले शब्द या सहायक शब्द पर बलाघात दिया जाता है जिसे विशेष महत्त्व प्रदान करना हो, जैसे—
   वह **कहाँ** जायेगा ? **वह** कहाँ जायेगा ?
3. कुछ अवस्थाओं में किसी विशिष्ट एक अक्षर वाले शब्द या सहायक शब्द पर बलाघात दिये जाने से वाक्य की विवक्षा में अन्तर आ जाता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है, जैसे—तुम **यहाँ** मत आओ। **तुम** यहाँ मत आओ। तुम यहाँ **मत आओ**।

4. सामान्यतया दो अक्षर वाले शब्द के प्रथम अक्षर पर बलाघात रहता है, जैसे—अटल=**अ**टल। ठोकर=**ठो**कर।
5. दो अक्षर वाले धातुओं अथवा प्रत्यय युक्त धातुओं का प्रयोग जब नाम पद अथवा प्रेरणार्थक धातु के रूप में होता है, तब बलाघात दूसरे अक्षर पर रहता है, जैसे—
   उसकी पकड़ अच्छी है। प **क**ड़ (नाम पद)
   उसने पतंग पकड़ ली। **प** कड़ (धातु)
   तुम रोटी मत फेंकना। **फें**कना (क्रिया पद)
6. तीन या अधिक अक्षर वाले शब्द के जिस अक्षर में दीर्घ स्वर हो, उस पर बलाघात रहता है, जैसे—आचरण=**आ**चरण, अनुसार=अनु**सा**र आदि।
7. यदि तीन या अधिक अक्षर वाले शब्दों के एक से अक्षरों में दीर्घ स्वर हों तो सबसे पहले दीर्घ स्वर वाले अक्षर पर बलाघात होता है; जैसे—
   कालिदास=**का**लिदास, साधारण= **सा**धारण, बुढ़ापा=बु**ढ़ा**पा।
8. यदि तीन या अधिक अक्षर वाले शब्द के सभी अक्षरों में दीर्घ अथवा ह्रस्व स्वर हों तो द्वितीय अक्षर पर बलाघात होता है, जैसे—
   चौड़ाई=चौ**ड़ा**ई परन्तु=प **रन्** तु
9. यदि तीन अक्षर वाले शब्द के किसी एक अक्षर में विसर्ग से युक्त स्वर हो अथवा संयुक्त व्यंजन वर्ण हो तो उसी अक्षर पर बलाघात होता है, जैसे—अन्तःकरण=अन् **तः** करण, आनन्द=आ **नन्द**
10. यदि अनेक अक्षर वाले किसी शब्द के एक अक्षर में विसर्ग से युक्त स्वर हो और दूसरे में संयुक्त व्यंजन वर्ण, तो विसर्गयुक्त स्वर वाले अक्षर पर बलाघात होगा, जैसे—
    प्रात =प्रा**तः**, सामान्यतः=सामान्य **तः**

बहुवचन—(दे० वचन-बहुवचन)

बारहखड़ी—द्वादशाक्षरी को ही बारह खड़ी कहते हैं। (दे० द्वादशाक्षरी)

बाह्य प्रयत्न (External Effort)—ध्वनि उत्पन्न होने पर कण्ठ आदि में वागिन्द्रिय की चेष्टा या क्रिया को बाह्य प्रयत्न कहते हैं।

(दे० प्रयत्न—बाह्य प्रयत्न)

बाह्य प्रयत्न के अनुसार वर्णों के मुख्य दो भेद हैं—
(1) अघोष, (2) घोष।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अघोष वर्णों के उच्चारण में केवल श्वास का उपयोग होता है, उनके उच्चारण में नाद नहीं होता। क ख च छ ज ट ठ त थ प फ और श ष स अघोष हैं।

घोष वर्णों के उच्चारण में केवल नाद का उपयोग होता है।

(विशेष दे०—अघोष तथा घोष यथास्थान)

बोली (Dialect)—भाषा के क्षेत्रीय; विशेषतया प्राकृत रूप का बोली कहते हैं।

डा० गुणे ने बोली की परिभाषा इस प्रकार दी है, "बोली एक ऐसे व्यक्ति समुदाय की वाणी को कहते हैं, जिसे वे परस्पर सहज रीति से और पूरा-पूरा समझ लेते हैं अथवा जिनकी बोलचाल में स्पष्ट कोई अन्तर नहीं होता।" (इण्ट्रोडक्शन टु कम्पेरेटिव फिलोलोजी, पृ० 15) जब कोई भाषा एक व्यक्ति समुदाय द्वारा बोली जाती है, तो स्थानीय या अस्थानीय प्रकार का थोड़ा-बहुत अन्तर अनिवार्य है और इस प्रकार थोड़े और बहुत अन्तर वाले क्षेत्रों की कुछ सीमाएँ हो जाती हैं। थोड़े अन्तर वाले क्षेत्र की वाणी को ही बोली कहते हैं (ब्रिटिश विश्वकोश)

बोली को ही उपभाषा या विभाषा भी कहते हैं। यों कुछ विद्वान् विभाषा का क्षेत्र बोली से विस्तृत बताकर दोनों में अन्तर मानते हैं।

भोलानाथ तिवारी ने बोली या उपभाषा उस सीमित क्षेत्र की भाषा को कहा है, जिसके बोलने वालों का उच्चारण लगभग एक सा हो, तथा जिसमें रूप रचना, वाक्य-रचना, शब्द समूह तथा अर्थ सम्बन्धी कोई स्पष्ट और महत्त्वपूर्ण भिन्नता दृष्टिगत न हो।

बोलियों की स्थिति का मुख्य कारण भौगोलिक है। किसी भाषा के कुछ भू-भागों का शेष से सम्बन्ध-विच्छेद हो जाना ही बोलियों के विकास का कारण बनता है।

ह्विटले के शब्दों में यदि भाषा में परिवर्तन न होते तो बोलियाँ वर्षों तक वैसी ही बनी रहतीं, परन्तु सभी भाषाओं मे निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। (लाइफ एण्ड ग्रोथ आफ लेंग्वेज़ पृ० 32)

भाषा का जन्म बोलियों से ही होता है, और एक भाषा में अनेक बोलियाँ हो सकती हैं। इस प्रकार भाषा और बोली का अन्तर भी स्पष्ट है, कि बोली का क्षेत्र अपेक्षतया सीमित होता है। बोली भाषा के अन्तर्गत होती है, इसका व्युत्क्रम नहीं होता।

बोलियों में बहुत अन्तर दिखाई देने पर भी कुछ ऐसी समानताएँ हैं, जो उनका एक समान स्रोत से उद्भव सिद्ध करती हैं। शब्द-समूह, ध्वनिविकारों, व्याकरण-नियमों आदि में समानता इस बात का निश्चित प्रमाण होती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बोली एक स्वाभाविक वाणी-रूप है, इसमें साहित्यिक भाषा या शिष्ट भाषा जैसी कृत्रिमता नहीं होती।

हिन्दी भाषा की अनेक बोलियाँ हैं, प्रमुख बोलियाँ इस प्रकार हैं—

(क) पश्चिमी हिन्दी

1. खड़ी बोली या कौरवी,
2. हरियाणी या बांगरू,
3. ब्रज,
4. बुन्देली,
5. कन्नौजी।

(ख) पूर्वी हिन्दी

1. अवधी,
2. बघेली,
3. छत्तीसगढ़ी।

(ग) राजस्थानी हिन्दी

1. मारवाड़ी,
2. जयपुरी,
3. मेवाती,
4. मालवी।

(घ) बिहारी हिन्दी

1. मैथिली,
2. भोजपुरी,
3. मगही।

(ङ) पहाड़ी हिन्दी

1. गढ़वाली,
2. कुमाउंनी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भ

भ—यह हिन्दी वर्णमाला का चौबीसवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मतानुसार इसका उच्चारण—स्थान ओष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, संवार, नाद और घोष हैं।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह महाप्राण, घोष, ओष्ठ्य स्पर्श व्यंजन है। इसका उच्चारण भी अन्य प वर्गीय ध्वनियों की तरह होता है।

भविष्य काल (Future Tence)—काल का भेद।

(दे० काल—भविष्य काल)

भाव वाचक संज्ञा—संज्ञा का भेद (दे० संज्ञा)

भाव वाच्य—(दे० वाच्य—भाव वाच्य)

भावे प्रयोग—प्रयोग का भेद। (दे० प्रयोग—भावे प्रयोग)

भाषा (Language)—भाषा विचार-विनिमय तथा चिन्तन-मनन के उस माध्यम को कहते हैं, जो वाग्-ध्वनियों एवं तत्सम्बन्धी संकेत चिह्नों पर अवलम्बित होता है। (डा० बदरीनाथ कपूर)

सामान्य अर्थ में भाषा 'मनुष्यों की उस चेष्टा या व्यापार को कहते हैं, जिससे वे अपने उच्चारणोपयोगी शरीरावयवों से उच्चारण किये गये व्यक्त शब्दों के द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं।

व्यापक अर्थ में विचारों की अभिव्यक्ति के लिए अपनाये जाने वाले प्रत्येक साधन को भाषा कहते हैं। वह हमारे विचारों और अनुभूतियों को व्यक्त करने वाले ऐसे बाह्य संकेतों का समुच्चय है, जिनको इच्छानुसार उत्पन्न किया जा सकता है और दुहराया जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

डा० भोलानाथ तिवारी ने भाषा की समुचित परिभाषा दी है। उनके अनुसार, "भाषा, उच्चारण—अवयवों से उच्चारित के योग्य यादृच्छिक (arbitrary) ध्वनिप्रतीकों (vocal symbols) की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा एक समाज के लोग आपस में भावों ओर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।" इस परिभाषा में 6 बातों की ओर संकेत है : (क) भाषा का कार्य वक्ता के भाव या विचार श्रोता तक पहुँचाना है। (ख) भाषा का प्रयोग एक निश्चित समाज में होता है, उसके बाहर वह अपना कार्य नहीं कर पाती, (ग) भाषा में एक व्यवस्था होती है, (घ) भाषा का आधार ध्वनि प्रतीक (vocal symbol) है, अर्थात् हर शब्द की ध्वनियाँ किसी वस्तु, भाव या विचार की प्रतीक हैं। (प्+आ+न्+ई, ये ध्वनियाँ मिलकर 'पानी' का प्रतीक हैं अर्थात् इनके प्रयोग द्वारा पानी का अर्थ व्यक्त किया तथा समझा जाता है। (ङ) यह ध्वनि-प्रतीकता यादृच्छिक होती है, अर्थात् ध्वनि और अर्थ का (कुछ अंश तक ध्वन्यात्मक शब्दों को छोड़ कर) कोई सहजात सम्बन्ध नहीं होता। यह सम्बन्ध माना हुआ है। (च) भाषा का आधार ध्वनि है। इन ध्वनियों को मुखावयवों से उच्चरित होना चाहिए। इसके अतिरिक्त एक सातवीं विशेषता भी भाषा की परिभाषा में जोड़ी जा सकती है, 'भाषा अध्ययन-विश्लेषण' के योग्य होती है।

भूत काल (Past Tense)—काल भेद। (दे० काल—भूत काल)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

म

म—यह हिन्दी वर्णमाला का पच्चीसवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मतानुसार इसका उच्चारण—स्थान ओष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न स्पष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्प-प्राण, संवार, नाद और घोष हैं। आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह अल्पप्राण, घोष, ओष्ठ्य, अनुनासिक, स्पर्श व्यंजन है। इसका उच्चारण, डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार, ओष्ठ्य स्पर्श व्यंजनों के समान—दोनों होठों को छुआ कर होता है, परन्तु अन्य अनुनासिक व्यंजनों की भाँति इसके उच्चारण में कुछ हवा नासिका विवर में प्रविष्ट होकर गूँज उत्पन्न करती है।

मध्यम पुरुष (Second Person)—पुरुष की कोटि।

(दे० पुरुष—मध्यम पुरुष)

मध्य स्वर (Central Vowels)—स्वरों के उच्चारण में जीभ के अग्र, मध्य तथा पश्च भागों के उपयोग से भेद हो जाता है। जिन स्वरों के उच्चारण में जीभ का मध्य भाग धँस-सा जाता है और अग्र तथा पश्च भाग उठते हैं, उन्हें मध्य स्वर कहते हैं। (विशेष दे० मूल स्वर)

मस्तिष्क वर्ण (Cerebrals or Head Letters)

इन्हें मूर्द्धन्य वर्ण भी कहते हैं। जिन नौ अक्षरों का उच्चारण मूर्द्धा अर्थात् तालु से भी पीछे के भाग पर जिह्वा को लगा कर किया जाता है, उन्हें मूर्द्धन्य वर्ण या मस्तिष्क वर्ण कहते हैं। वे हैं—ऋ, ॠ, ट, ठ, ड, ढ, ण र, ष।

(वि० दे० वर्ण)

महाप्राण (व्यंजन) (Aspirates)—जिन दस व्यंजनों में हकार की ध्वनि का समावेश होता है उन्हें, और ऊष्म व्यंजनों की महाप्राण व्यंजन कहते हैं। प्राण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का अर्थ होता है श्वास। अतः कह सकते हैं कि जिन व्यंजन वर्णों के उच्चारण के समय श्वास मुख से अधिक मात्रा में निकले वे महाप्राण व्यंजन हैं।

ख्, घ्, छ्, झ्, ठ्, ढ्, घ्, थ् फ्, भ्, ष्, श्, स्, ह् और (ढ़ भी) महाप्राण व्यंजन हैं।

मात्रा (Vowel Mark)—स्वर वर्ण चिह्न के संक्षिप्त प्रतीक को मात्रा कहते हैं। अथवा स्वर के उस परिवर्तित चिह्न का नाम 'मात्रा' है जो स्वर को व्यंजन के साथ मिलाने के समय लिखा जाता है।

अक्षरों के उच्चारण के काल-मान को भी 'मात्रा' कहते हैं। 'अ' स्वर के लिये कोई चिह्न नहीं है। जब यह स्वर किसी व्यंजन के आगे जोड़ा जाता है, तो उस व्यंजन का पूरा रूप हल चिह्न लगाये बिना लिख देते हैं। ऌ ॡ यह दो स्वर केवल कुछ संस्कृत शब्दों में व्यंजन के आगे अपने पूर्ण आकार में जोड़े जाते हैं। इनका परिवर्तित चिह्न कोई नहीं है। शेष स्वरों के लिये क्रमशः ा, ि, ी, ु, ू, े, ै, ो, ौ, ं : ये चिह्न हैं। इनमें से अन्तिम दो को छोड़कर सभी चिह्न मात्रा कहलाते हैं। ं चिह्न का नाम अनुस्वार है और अन्तिम का विसर्ग है।

इस तरह स्वर वर्ण-चिह्नों की मात्राएँ इस प्रकार हैं—

आ-ा, ऑ-ॉ, इ-ि, ई-ी; उ-ु, ऊ-ू, ऋ-ृ, ए-े, ऐ-ै, ओ-ो, औ-ौ, अं-ं, अः-ः।

1. यदि किसी व्यंजन वर्ण के बाद कोई स्वर वर्ण हो तो व्यंजन वर्ण चिह्न में उस स्वर की मात्रा लगाते हैं।
2. मात्राओं का संयोजन स्वर रहित व्यंजन वर्ण-चिह्न में होता है।
3. मात्रा का संयोजन होते ही हल् चिह्न का लोप होता है, जैसे—
   खाली – ख्+आ+ल्+ई
   नियम 1 से—ख्+ा+ल्+ी
   नियम 2 से—खाली
4. आ, ई, ओ, औ, तथा ॲ की मात्राएँ व्यंजन वर्ण चिह्न के बाद लगाई जाती हैं, जैसे—का=क्+आ=क्+ा=का।
5. 'इ' की मात्रा व्यंजन वर्ण-चिह्न के पहले लगाई जाती है और यदि व्यंजन वर्ण-चिह्न संयुक्त हो तो उससे भी पहले, जैसे—
   कि—क्+इ=ि+क्=कि।
   भक्ति=भ्+अ+क्+त्+इ=भक्ति=भक्ति।
6. उ, ऊ तथा ऋ की मात्राएँ व्यंजन वर्ण चिह्न के नीचे लगाई जाती हैं, जैसे—कु=क्+उ=क्+ु=कु
7. 'शृ' व्यंजन वर्ण चिह्न के नीचे 'ऋ' की मात्रा लगाने पर 'शृ' रूप भी बनता है; जैसे—शृंगार।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

8. 'र्' व्यंजन वर्ण-चिह्न के साथ 'उ' तथा 'ऊ' की मात्राएँ मध्य में लगाई जाती हैं, जैसे—रु=र+उ, रू=र+ऊ।

9. 'ए' तथा 'ऐ' की मात्राएँ व्यंजन-वर्ण चिह्न के ऊपर लगाई जाती हैं, जैसे—के=क्+ए=क्+े—के।

10. अनुनासिकता सूचित करने के लिये मात्रा के मध्य भाग के ऊपर चन्द्र बिन्दु लगाते हैं और यदि मात्रा के ऊपर घुण्डी भी हो तो उसके बाद; जैसे—काँ=क्+आँ—क्+ा=काँ; किँ=क्+ईँ=ि+क्=किँ

11. स्वर वर्ण-चिह्न यदि किसी व्यंजन वर्ण चिह्न में अन्तर्मुक्त हो अथवा उसके नीचे या मध्य में मात्रा के रूप में हो तो उसे व्यंजन वर्ण-चिह्न के ऊपर चन्द्र बिन्दु लगाते हैं, जैसे—
कँ=क्+आँ, कुँ=क्+उँ, रुँ=र्+उँ।

12. मात्रा के बाद स्वर-वर्ण का सूचक वर्ण चिह्न ही आता है, जैसे—
कौआ= क्+औ+आ,=क्+ौ+आ=कौआ

13. किसी शब्द में अति निकट आने वाले दो या अधिक स्वर वर्णों को संयुक्त स्वर या स्वर-गुंफ और दो या अधिक व्यंजन वर्णों को संयुक्त व्यंजन या व्यंजन-गुंफ कहते हैं।

हिन्दी के कुछ संयुक्त स्वर—

अ+इ=भइया=भ=अ+इ+य्+आ
आ+इ+ए—आइए=आ+इ+ए
औ+आ—कौआ=क्+औ+आ आदि।

हिन्दी के कुछ संयुक्त व्यंजन,

क्+क—पक्का=प्+अ+क्+क्+आ
क् ख्—मक्खन=म्+अ+क्+ख+अ+न्+अ
क् त—रक्त=र्+अ+क्+त्+अ

(विशेष देखिए 'संयुक्त'-व्यंजन)

मानक भाषा (Standard Language)—परिनिष्ठित भाषा को ही मानक भाषा कहते हैं। (दे० परिनिष्ठित भाषा)

मुख्य कर्म—कर्म का एक भेद। (दे० कर्म—मुख्य कर्म)

मुख्य वाक्यांग (Essential Parts of a Sentence)—प्रत्येक साधारण वाक्य, या अमिश्रित वाक्य जिन दो अंगों या विभागों का समूह होता है, उन्हें 'मुख्य वाक्यांग' या 'मुख्य वाक्य विभाग' कहते हैं। वाक्य के मुख्यांग, 'उद्देश्य' और 'विधेय' होते हैं।

(1) **उद्देश्य** (Subject)—वाक्य में जिसके विषय में कुछ विधान किया जाता है अर्थात् कुछ कहा जाय उसे सूचित करने वाले शब्द या शब्दों को 'उद्देश्य' कहते हैं। (विशेष दे० उद्देश्य)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(2) **विधेय** (Object)—वाक्य में उद्देश्य के सम्बन्ध में जो कुछ विधान किया जाय उसे सूचित करने वाले शब्द या शब्दों को विधेय कहते हैं।

(विशेष दे० विधेय)

मुहावरा (Ideam)—ऐसे पदबन्ध को मुहावरा कहते हैं, जिससे कुछ विशिष्ट लक्षणाजन्य अर्थ निकलता हो। (वि० दे० पदबन्ध)

मूल धातु (Primative Verbs)—स्वयं सिद्ध धातु को मूल धातु कहते हैं।

(दे० धातु—मूल धातु)

मूल सार्वनामिक विशेषण—सार्वनामिक विशेषण का एक उपभेद।

(दे० विशेषण—सार्वनामिक विशेषण)

मूल क्रिया विशेषण—रूपाधार क्रिया विशेषण का एक भेद।

(दे० अव्यय—क्रिया विशेषण अव्यय)

मूल भाववाचक संज्ञा (Original Abstract noun)—संज्ञा का एक भेद।

(दे० संज्ञा-मूल भाववाचक संज्ञा)

मूर्धन्यवर्ण—जिन नौ वर्णों का उच्चारण मूर्द्धा अर्थात् तालु से भी पीछे के भाग पर जिह्वा को लगाकर किया जाता है। उन्हें मूर्धन्य या मस्तिष्क वर्ण कहते हैं। वे हैं—ऋ, ॠ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र, ष।

मूल स्वर (Primitive Vowel)—जिन स्वरों की उत्पत्ति किसी अन्य स्वरों के मेल से नहीं है, उन्हें मूल स्वर कहते हैं। सभी ह्रस्व स्वर (लघु स्वर) मूल स्वर हैं। (दे० स्वर)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

य

य्—यह हिन्दी वर्ण-माला का छब्बीसवां व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मतानुसार इसका उच्चारण-स्थान तालु, आभ्यंतर-प्रयत्न ईषत्स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष हैं। आधुनिक विद्वानों के अनुसार यह तालव्य, घोष, अर्द्ध-स्वर है। इसका उच्चारण, डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार, जीभ के अग्रभाग को कठोर तालु की ओर ले जाकर किया जाता है; किन्तु जीभ न 'च वर्गीय' ध्वनियों के समान तालु को अच्छी तरह छूती ही है और न 'इ' आदि तालव्य स्वरों के समान दूर ही रहती है। इसे अर्द्धस्वर के साथ ही अन्तस्थ नाम से भी पुकारते हैं।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार य्, र्, ल्, व् ये चार अन्तस्थ व्यंजन हैं।

यण—इ, ई, उ, ऊ ऋ, ॠ के साथ अगले किसी असवर्ण (विजातीय) स्वर के मेल से होने वाले विकार को 'यण' कहते हैं।

यण सन्धि या यादि सन्धि—किसी असवर्ण स्वर के मेल से पूर्व के इ वर्ण (इ, ई) को य्; उ वर्ण (उ ऊ) को व् और क वर्ण (ऋ ॠ) को र् हो जाने को यण या यादि सन्धि कहते हैं।

जैसे—यदि+अपि=यद्यपि।

(दे० सन्धि-यण सन्धि)

यमाक्षर अथवा युग्माक्षर—(dual consonants)—यमाक्षर या युग्माक्षर वे अक्षर हैं जिनमें दो-दो अक्षर ऐसे मिलें हों कि उनका मूल आकार अदृष्ट होकर एक नवीन आकार के अक्षर बन गये हों। हिन्दी में तीन युग्माक्षर है—क्ष् (क+ष) त्र् (त+र) ज्ञ् (ज+ञ)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

योगरूढ़ि शब्द—(derived primitives or wards having an etymological as well as special or conventional meaning)—जिन शब्दों की व्युत्पत्ति तो हो सके परन्तु उनका अर्थ व्युत्पत्ति से किसी एक ही अंश में मिले, सर्वथा न मिले उन्हें योगरूढ़ि शब्द कहते हैं। जैसे—पंकज, जलज आदि।

(दे० शब्द—योगरूढ़ि शब्द)

योगवाह (Yogvah)—योगवाह वे अक्षर हैं जिनका उच्चारण किसी अक्षर के योग से ही होता है।

जिनका उच्चारण उनके पूर्व किसी व्यक्त या अव्यक्त स्वर को जोड़ने से होता है, ऐसे योगवाह दो हैं—अनुस्वार और विसर्ग। (दे० यथास्थान) और जिनका उच्चारण उनके आगे लगे कख अथवा पफ व्यंजनों के साथ ही होता है ऐसे योगवाह भी दो ही हैं—जिह्वामूलीय (ᐯ) तथा उपध्मानीय (≍) दे० यथास्थान।

नोट—1—कोई-कोई वैयाकरण केवल अनुस्वार और विसर्ग इन दो ही को योगवाह (अथवा अयोगवाह) कहते हैं।

2—अनुस्वार (ं) और विसर्ग (:) के चिह्नों को अन्य अक्षर चिह्नों के समान उच्चारण करने के लिए इनके पूर्व आ स्वर जोड़कर हिन्दी भाषा में इन्हें इस प्रकार अं अः लिखने की रीति है। इसीलिये अन्य स्वरों से बहुत कुछ समानता रखने तथा इनके उच्चारण में इनसे पूर्व सदैव कोई न कोई स्वर व्यक्त या अव्यक्त रूप से रहने के कारण इनकी गणना स्वरों में की जाती है; परन्तु जिस प्रकार व्यंजनों का उच्चारण बिना कोई स्वर जोड़े नहीं होता इसी प्रकार अनुस्वार और विसर्ग का भी उच्चारण बिना कोई स्वर जोड़े नहीं होता। इसीलिये कोई-कोई वैयाकरण इन्हें व्यंजनों की गणना में जोड़ लेते हैं। पर वास्तव में यह व्यंजन भी नहीं हैं, क्योंकि व्यंजनों में उच्चारणार्थ स्वर बाद में जोड़ा जाता है और अनुस्वार और विसर्ग में पहले जोड़ा जाता है।

3—जिह्वामूलीय और उपध्मानीय के चिह्नों या आकारों का अन्य अक्षर चिह्नों के समान उच्चारण करने के लिए जिह्वामूलीय के आगे क और ख तथा उपाध्मानीय के आगे प और फ व्यंजन लिखे जाते हैं क्योंकि इन्हीं अक्षरों के उच्चारण उनके उच्चारण की बहुत कुछ समानता है।

(दे० जिह्वामूलीय और उपध्मानीय)

योजक—ऐसे सहायक शब्दों को योजक कहते हैं, जो दो या अधिक समान व्याकरणिक इकाइयों को जोड़ कर उन्हें वृहत् इकाई बनाते हैं, जैसे—शीला आयेगी और आशा यहाँ होती हुई जायेगी। (दो वाक्य)

रमेश, सुरेश और गोपाल स्कूल जाते हैं। (तीन कर्तापद)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नोट—वाक्य के आरम्भ में किसी योजक य का प्रयोग जब निष्कर्ष या उपसंहार सूचित करने के लिये होता है, तब वह पूर्व वाक्य, अनुच्छेद, परिच्छेद आदि से अर्थगत सम्बन्ध तो जोड़ता है, परन्तु उन्हें वृहत् इकाई नहीं बनाता। ऐसे अवसरों पर उसे योजक न मानकर क्रियाविशेषण रूप में स्वीकार करना उचित है, जैसे—तो मैं क्या कर सकता हूँ ? (तो—ऐसी स्थिति में, स्पष्टतः क्रियाविशेषण है)

योजक के दो प्रमुख प्रकार हैं—

(1) समानाधिकरण योजक (2) व्यधिकरण योजक।

जो योजक स्वतन्त्र वाक्यों को जोड़ते हैं, उन्हें समानाधिकरण योजक कहते हैं और जो योजक परस्पर आश्रित वाक्यों की जोड़ते हैं, उन्हें व्यधिकरण योजक कहते हैं। जैसे—

(1) वह छोटा है और राम बड़ा है। (और समानाधिकरण योजक)

(2) वह आयेगा तो खाना बनेगा। (तो व्यधिकरण योजक)

योजक द्वारा जो वाक्य अन्य वाक्य से जुड़ा रहता है, उसे उपवाक्य कहते हैं। जिस वाक्य के सभी उपवाक्य समानाधिकरण योजक (या कई योजकों) से जुड़े हों उसे संयुक्त वाक्य तथा जिसका कोई उपवाक्य व्यधिकरण योजक से जुड़ा हो, उसे मिश्रवाक्य कहते हैं। जैसे—

(1) वह आएगा [(स्वतन्त्र उपवाक्य)] और श्याम जाएगा [(स्वतन्त्र उपवाक्य)]=संयुक्त वाक्य।

(2) वह आएगा [(स्वतन्त्र उपवाक्य)] तो खाना बनेगा [(आश्रित) उपवाक्य]=मिश्रवाक्य।

अंग्रेजी व व्याकरण के आधार पर हमारे अनेक वैयाकरणों ने आश्रित उपवाक्यों के तीन भेद दिये हैं—संज्ञा उपवाक्य, विशेषण उपवाक्य एवं क्रिया विशेषण उपवाक्य। इन विद्वानों का मत है कि आश्रित उपवाक्य या तो संज्ञापद का कार्य करता है, या संज्ञाविशेषण का या फिर क्रिया विशेषण का।

(1) 'और' योजक का प्रयोग उस समय किया जाता है जब दो वाक्यों में अनन्तरता, भिन्नता, असंगति या अनौचित्य की विवक्षा होती है; जैसे—

(1) सबेरा हो गया है और वह अभी तक नहीं आया। (अनौचित्य)

(2) वे जवान हैं और मैं बूढ़ा (भिन्नता)

(3) अभी शाम हुई नहीं और तुम आ गए। (असंगति)

(2) 'कि', योजक का प्रयोग उस समय किया जाता है अब आश्रित वाक्य व्याख्या, विकल्प या परिणाम का सूचक होता है, जैसे—देवेश ठीक कहता है कि मँहगाई बहुत बढ़ गयी है। (व्याख्या); आप यह कार्य करेंगे कि मैं पूरा करूँ। (विकल्प) कोई ऐसा उपाय बताओ कि काम हो जाए। (परिणाम)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(3) 'पर' योजक का प्रयोग उस समय होता है जब आश्रित वाक्य अपवाद, अन्तर्विरोध या प्रतिबन्ध का सूचक हो; जैसे—सब आ गये पर वह नहीं आया (अपवाद), वह काम का तो है पर है आलसी। (अन्तर्विरोध) वह वहाँ जायेगा पर थोड़ी देर में। (प्रतिबन्ध)।

(4) 'तो' योजक का प्रयोग उस समय होता है जब कार्यकारण भाव प्रकट करना अभिप्रेत होता है, अथवा असंगति का निषेध करना होता है; जैसे—

मैं कहता तो वह आ जाता। (कार्यकारण भाव) वह कुरूप है तो क्या हुआ। (असंगति का विशेष)

(5) 'या' तथा 'चाहे' विकल्प सूचक, 'जो' परिणामसूचक, 'सो' कारण सूचक तथा 'मानो' सम्भावना सूचक योजक है। जैसे—

वह आये या तुम आओ। (विकल्प सूचक)
वे चलें चाहे तुम चलो। (विकल्प सूचक)
कुछ ऐसा करो जो उसे ठीक कर दे। (परिणाम सूचक)
वह नहीं माना सो हम भी लौट आए। (कारण सूचक)
वह हम पर रौब देता है मानो हम उसी का खाते हैं। (सम्भावना सूचक)

6. कुछ परसर्ग तथा निपात भी विभिन्न पदों एवं निपातों के साहचर्य में योजकों की तरह प्रयुक्त होते हैं; जैसे—वह जल्दी उठा **जिससे** वहाँ पहुँच सके। वह नहीं रुका **क्योंकि** उसे वहाँ जाना था। वह कहे **तो भी** मैं नहीं बोलूँगा।

7. हिन्दी में संस्कृत तथा अरबी फारसी के योजक भी चलते हैं; जैसे—अतः, अतएव, अथवा, अन्यथा, अपितु, अर्थात्, एवं, किंवा, तथा, परन्तु। गो, गोया, चूँकि, ताकि, बल्कि, मगर, लेकिन, व, वरना।

8. संयुक्त वाक्य के प्रथम उपवाक्य के आरम्भ में भी कुछ योजकों की आवृत्ति देखी जा सकती है; जैसे—
(1) रमेश यहाँ आये, **चाहे** उसकी बहन।
(2) **चाहे** रमेश यहाँ आये **चाहे** उसकी बहन।

9. कुछ ऐसे भी योजक हैं जो प्रथम उपवाक्य के आरम्भ में आते हैं और उनके नित्य सम्बन्धी दूसरे उपवाक्य के आरम्भ में; जैसे—
अगर····मगर। चूँकि····इसलिए। जो····तो। यदि····तो। यद्यपि ····तथापि। यद्यपि····तो भी।

10. कुछ योजकों को उनके नियत स्थान से हटाकर वाक्य के आरम्भ में—(क) उनके बदले में एवं (ख) उनके सहित, अन्य योजक भी रखे जाते हैं; यथा—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(1) मैं पहले कह चुका हूँ कि वह यहाँ नहीं आया।

(2) जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, वह यहाँ नहीं आया।

11. यदि मिश्र वाक्य की एक इकाई के किसी सर्वनाम, संज्ञा विशेषण अथवा क्रिया विशेषण का नित्य सम्बन्धी दूसरी इकाई में हो तो उन वाक्यों के बीच योजक की आवश्यकता नहीं होती; जैसे—जो काम उसने किया था; वह गलत था।

12. जब दो या अधिक पदों को योजक जोड़ते हैं, तो संयोजन तथा विकल्प सूचक योजक अन्तिम पद के पहले आ जाते हैं और 'अन्य अनेक' के सूचक योजक अन्त में; जैसे—

राम और कृष्ण अवतार हैं। (सयोजक सूचक)

राधा या सीता आएगी। (विकल्प सूचक)

रमा, राधा, सरोज, माधुरी आदि। (अन्य अनेक-अर्थ में)

13. जब विभिन्न लिंगी कर्त्ता (अथवा कर्म) संयोजन या विकल्प सूचक योजक से जुड़े हों तो सामान्यतः अन्तिम कर्त्ता (अथवा कर्म) के लिंग, वचन तथा पुरुष के अनुरूप क्रियापद में परिवर्तन होता है; जैसे—वह और मैं जाऊँगा। एक लड़का और एक लड़की आई है।

14. संयोजन सूचक-द्वारा सम्बद्ध यदि समलिंगी कर्त्ता (या कर्म) पद हों तो क्रियापद सम्बद्ध लिंग में तथा बहुवचन रूप में रहता है; जैसे—राम और महेश आ रहे हैं।

15. यदि संयोजन सूचक योजक द्वारा सम्बद्ध विभिन्न लिंगी कर्त्ता (या कर्म) पद हों तो क्रियापद को पुलिंग बहुवचन रूप में रखने की मूल प्रवृत्ति प्रबल हो रही है; जैसे—सीता और राम आ रहे हैं।

16. जब कर्त्ता (या कर्म) पद 'अन्य अनेक' अर्थ में प्रयुक्त योजक से जुड़े हों तो क्रियापद सदा बहुवचन में रहता है।

17. जब समलिंगी कर्त्ता (या कर्म) पद 'अन्य अनेक' अर्थ में प्रयुक्त योजक से जुड़े होते हैं, तब क्रियापद सम्बद्ध लिंग में अन्यथा पुलिंग रहता है। (दे० नियम 16); जैसे—राधा, सीता, उमा, आदि जा रही हैं।

18. 'अन्य अनेक'—अर्थ में प्रयुक्त योजकों की प्रायः विरुक्ति होती है; जैसे—राधा, सीता, उमा आदि-आदि आ रही हैं।

19. 'अन्य अनेक' अर्थ में प्रयुक्त योजक के अनन्तर समाहार सूचक पद का प्रयोग भी होता है; जैसे—हम बाजार से दाल, चीनी आदि लायेंगे।

20. योजक द्वारा जुड़े हुए नाम पद समान न हों, अथवा विशेष जोर देना हो तो विभक्ति-परसर्ग की आवृत्ति हो सकती है; जैसे—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मोहन मुझको और सीता को बुला रहा है।

राम ने रमेश को और मुझको बुलाया है।

यौगिक शब्द (Derivatives)—(दे० शब्द—यौगिक शब्द)

यौगिक पद—(दे० पद—यौगिक पद)

यौगिक क्रिया विशेषण—(दे० क्रिया विशेषण—रूपाधार क्रिया विशेषण)

यौगिक धातु (Derivative Verbs)—(दे० धातु—यौगिक धातु)

यौगिक सार्वनामिक विशेषण—-सार्वनामिक विशेषण का एक उपभेद। (दे० विशेषण—सार्वनामिक विशेषण)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

र

र्—यह हिन्दी-वर्णमाला का सत्ताईसवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण—स्थान मूर्धा, आभ्यन्तर प्रयत्न ईषत्स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष हैं। आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह लुंठित, अल्पप्राण, वर्त्स्य, घोष ध्वनि है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार इसके उच्चारण में जीभ की नोक दो-तीन बार वर्त्स या ऊपर के मसूड़े को छूती है। डॉ० चटर्जी और कादरी आधुनिक 'र' को लुंठित न मानकर उत्क्षिप्त मानते हैं। उनके अनुसार इसके उच्चारण में जीभ लपेट नहीं खाती।

रीति (Modd)—(दे० अर्थ)

रूप साधन—शब्द रूपान्तर को रूप साधन कहते हैं। (दे० शब्द रूपान्तर)

रूपाधार क्रिया विशेषण—(दे० क्रिया विशेषण—रूपाधार क्रिया विशेषण)

रूपान्तर—शब्द के अर्थ में हेर-फेर करने के लिए शब्द के रूप में हेर-फेर होता है उसे रूपान्तर कहते।

रेफ (Precompounder)—जब स्वर रहित र् अगले व्यंजन से मिलता है तो उसे अगले व्यंजन के ऊपर ˙ आकार में लिखा जाता है। र् के इसी (˙) आकार को रेफ कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ल

ल्—यह हिन्दी-वर्णमाला का अट्ठाईसवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण स्थान दन्त, आभ्यंतर प्रयत्न ईषत्स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष हैं। यह अन्तस्थ वर्ण है।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह पार्श्विक, अल्पप्राण, घोष वर्त्स्य ध्वनि है।

डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार इसके उच्चारण में जीभ की नोक ऊपर के 5 मसूड़ों को अच्छी तरह छूती है; किन्तु साथ ही जीभ के दाएँ-बाएँ जगह छूट जाती है, जिसके कारण हवा पार्श्वों से निकलती है, (इसी से इसे पार्श्विक ध्वनि कहते हैं)। इसका उच्चारण र के स्थान से ही होता है।

लकार—धातु क्रियापदों से क्रिया के घटित होने का काल एवं कथन के समय विद्यमान स्थिति या मनःस्थिति भी सूचित होती है, इसलिए इन्हें लकार कहते हैं।

संस्कृत व्याकरण में लट्, लिट् आदि लकारों के द्वारा काल तथा मनःस्थिति के भेदों को प्रकट किया गया है। सुविधा की दृष्टि से ही इसी अर्थ में लकार शब्द प्रयुक्त है।

लकारों की संख्या नौ है—

1. प्रवृत्ति-मूलक लकार,
2. निष्पणता मूलक लकार,
3. औचित्य मूलक लकार,
4. तथ्य मूलक लकार,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5. आदेश मूलक लकार,
6. निदेश मूलक लकार,
7. सम्भावना मूलक लकार,
8. संकेत मूलक लकार,
9. आवश्यकता मूलक लकार।

लघुता-बोधक शब्द—दे० शब्द-भेद—लघुता-बोधक शब्द।

लिंग (Gender)—संज्ञा या किसी अन्य विकारी शब्द के जिस रूप और अर्थ से वास्तविक या कल्पित पुरुषत्व का बोध होता है उसे लिंग कहते हैं।

लिंग के भेद—

(1) **पुल्लिग** (Masculine gender)—शब्द के जिस रूप और अर्थ से वास्तविक या कल्पित पुरुषत्व का बोध होता है उसे पुल्लिग कहते हैं।

(2) **स्त्री लिंग** (Feminine Gender)—शब्द के जिस रूप और अर्थ से वास्तविक या कल्पित स्त्रीत्व का बोध होता है, उसे स्त्री लिंग कहते हैं।

(3) **नपुंसक लिंग** (Nueter Gender)—शब्द के जिस रूप और अर्थ से वास्तविक या कल्पित क्लीवत्व (नपुंसकता, कायरता, निर्बलता) का बोध हो उसे नपुंसक लिंग कहते हैं।

हिन्दी में नपुंसक लिंग का प्रयोग नहीं होता।

लिपि (Writing, a mode of writing or form of letter in writing)—अक्षरों के चिह्नों या बनावट या लिखावट को 'लिपि' कहते हैं। या वर्ण चिह्नों के समूह को 'वर्ण चिह्न माला' या लिपि कहते हैं। लिपि को ही अक्षर लिपि, अक्षर न्यास, अक्षर विन्यास, अक्षर संस्थान, अक्षर लेख, अक्षरोटी या वर्ण-लिपि, वर्णन्यास आदि भी कहते हैं। हिन्दी भाषा की लिपि 'देवनागरी लिपि है।

हिन्दी की लिपि

अ, आ, इ, ई, उ ऊ, ऋ

ए ऐ ओ औ ं (अनुस्वार) : (विसर्ग)

क ख ग घ ङ

च छ ज झ ञ

ट ठ ड ढ ण

त थ द ध न

प फ ब भ म

य र ल व श

ष स ह ड़ ढ़

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नोट—अ, आ, ओ, औ तथा ण वर्ण-चिह्न मराठी से आये हैं और उन्होंने नागरी वर्ण-चिह्नों अ, आ, ओ, औ तथा ण को प्रयोग से हटा-सा दिया है। 'झ' और 'ल' के स्थान पर मराठी के झ और ल वर्ण चिह्न भी प्रयुक्त होते हैं। (डा० बदरीनाथ कपूर)

लोप (Elision or Dropping)—वाक्य में किसी शब्द के या शब्द में अक्षर के अदर्शन या उसकी अव्यक्ति को 'लोप' कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व

व्—यह हिन्दी वर्णमाला का उन्तीसवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण स्थान दंत्योष्ठ, आभ्यन्तर प्रयत्न ईषत्स्पृष्ट तथा बाह्य प्रयत्न अल्पप्राण, संवार, नाद और घोष हैं। आधुनिक विद्वान् भी इसे दंत्योष्ठ्य संघर्षी घर्ष ध्वनि बताते हैं।

डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार इसका उच्चारण भी नीचे के होंठ को ऊपर के दाँतों से लगा कर किया जाता है, साथ ही होंठ और दाँतों के बीच से रगड़ खा कर कुछ हवा निकलती रहती है।

डा० धीरेन्द्र वर्मा इसे कंठ्योष्ठ, घोष, अर्द्धस्वर मानते हैं। जब व् हलंत अक्षर के बाद संयुक्त होकर आता है, तो इसका उच्चारण न तो साधारण व् की भाँति दंतोष्ठ्य रहता है और न पवर्गीय ब् की भाँति ओष्ठ्य।

वचन (Number)—संज्ञा या किसी अन्य विकारी शब्द के जिस रूप से उसकी संख्या के एकत्व द्वित्व या बहुत्व का बोध हो उसे वचन कहते हैं। अर्थात् वचन संज्ञापद में निहित संख्या-भाव का द्योतन करता है। 'वचन' तीन हैं—

1. **एक वचन** (Singular number)—शब्द के जिस रूप से उसके एकत्व का बोध हो।
2. **द्विवचन** (Dual number)—शब्द के जिस रूप से उसके द्वित्व अर्थात् दो की संख्या का बोध हो। (हिन्दी में इसका प्रयोग नहीं होता)।
3. **बहुवचन** (Plural number)—शब्द के जिस रूप में उसके बहुत्व का बोध हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1. यदि एक वचन संज्ञापद से जातिगत भाव या सत्ता का बोध हो तो उसे जातिवाचक एकवचन संज्ञापद और यदि उससे जाति की किसी एक विशिष्ट इकाई का ही बोध हो, तो उसे व्यक्तिवाचक एक वचन संज्ञापद कहते हैं, जैसे—
मछली पानी में तैर रही है—एक वचन जातिवाचक स्त्रीलिंग संज्ञापद।
राम पानी पीता है—एक वचन व्यक्तिवाचक पुलिंग संज्ञापद।

2. एक वचन संज्ञापद समूह, द्रव्य, राशि आदि के रूप में होने वाले व्यक्तियों, पदार्थों आदि का भी वाचक होता है, जैसे—
हमारा **परिवार** बड़ा है। **गेहूँ** बहुत मँहगा है।

3. भाववाचक संज्ञापद मूर्त इकाइयों के सूचक होने पर तथा समूह या राशि के रूप में होने वाले पदार्थों, व्यक्तियों आदि के वाचक संज्ञापद, विभिन्न इकाइयों के सूचक होने पर बहुवचन में भी प्रयुक्त होते हैं; जैसे—
मौत सब के सिर पर मँडराती है। (एक वचन) कल तीन **मौतें** हुईं। (बहुवचन) **कपड़ा** मँहगा है। (एक वचन)—**कपड़े** मँहगे सिले हैं। (बहुवचन)।

4. लोग, गण, जन आदि समूह वाचक संज्ञापदों का प्रयोग बहुवचन में होता है, जैसे—**लोग** सब समझते हैं। **बालक गण** इधर आओ।

5. दाम, हस्ताक्षर, प्राण तथा दर्शन का प्रयोग मूलतः बहुवचन में ही होता है, परन्तु विकल्प से एक वचन में भी जैसे—हमने दर्शन किया। हमने दर्शन किये।

6. एक वचन आकारान्त पुलिंग संज्ञा पद बहुवचन में एकारान्त हो जाते हैं, जैसे—घोड़ा-घोड़े, कमरा-कमरे।

7. उच्च पद तथा आस्पद वाचक आकारान्त पुलिंग संज्ञापद बहुवचन में प्रकृत रूप में ही रहते हैं, जैसे—पिता-पिता, दादा-दादा, राजा-राजा। (भारतीय परम्परा में साला और भांजा उमर में बड़े होने पर भी छोटे होते हैं, इसलिए इनके बहुवचन रूप 'साले' और 'भांजे' होंगे)।

8. उच्चपद वाचक आकारान्त पुलिंग संज्ञापद उस समय बहुवचन में विकल्प से **एकारान्त** भी हो जाते हैं, जब उनके प्रति उपेक्षाभाव सूचित किया जाता है, जैसे—
ऐसे **नेते** गलियों में मारे-मारे फिरते हैं।

9. पदवाचक पुलिंग बहुवचन संज्ञापद के साथ लोग, जन, गण, वृन्द, आदि का प्रयोग प्रायः किया जाता है, जैसे—
दादा-दादालोग, नेता-नेता गण।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

10. ऐसे आकारान्त पुलिंग संज्ञापद बहुवचन में बहुधा प्रकृत रूप में ही रहते हैं जिनके अन्त में 'इया' या 'ऐया' वर्णसमूह हो, जैसे—जांघिया-जांघिया, तौलिया-तौलिया, दरिया-दरिया।

11. यदि पुलिंग एक वचन संज्ञापद आकारान्त न हो तो बहुवचन में प्रकृति रूप में ही रहता है; जैसे—आम-आम, हाकी-हाकी, सिपाही-सिपाही।

12. एक वचन इकारान्त तथा ईकारान्त स्त्रीलिंग संज्ञापद को बहुवचन बनाने के लिये 'आ' प्रत्यय लगाते हैं।

13. बहुवचन 'आ' प्रत्यय से पूर्व अन्त्य ई स्वर ह्रस्व हो जाता है।

14. 'इ' और 'आ' बहुवचन प्रत्यय के बीच य् का आगम होता है, जैसे—रीति+आं=रीतियां।

15. एक वचन अकारान्व स्त्रीलिंग संज्ञापद का बहुवचन बनाने के लिये 'ऐ' प्रत्यय लगाते हैं।

16. बहुवचन 'एं' प्रत्यय से पूर्व संज्ञापदों के अंत्य अ स्वर का लोप होता है, तथा उपान्त य् व्यंजन वर्ण का विकल्प से लोप होता है, जैसे—
पुस्तक+एं=पुस्तकें,
(प्+उ+स्+त्+अ+क्+(अ लोप)+एं)

17. आकारान्त, उकारान्त तथा औकारान्त एकवचन स्त्रीलिंग संज्ञा पदों को बहुवचन बनाने के लिये 'एँ' प्रत्यय लगाते हैं, जैसे—
माता+एँ=माताएँ, माला=मालाएँ।

18. आकारान्त परन्तु 'इया' प्रत्यय से युक्त एकवचन स्त्रीलिंग संज्ञापद के अन्त्य 'आ' को अनुनासिक कर देने से बहुवचन रूप बनते हैं, जैसे—गुड़िया=गुड़ियां।

19. ऊकारान्त एकवचन स्त्रीलिंग संज्ञापद का बहुवचन बनाने के लिए 'एं' प्रत्यय जोड़ते हैं।

20. बहुवचन 'एँ' प्रत्यय मे पूर्व अन्त्य ऊ स्वर ह्रस्व हो जाता है, जैसे—बहू+एँ=बहुएँ।

21. एकारान्त एवं ओकारान्त एकवचन संज्ञापद बहुवचन मे प्रकृति ए रूप में ही रहते हैं, जैसे—दूबे-दूबे, चौबे-चौबे, रासो-रासो, गौं गौं।

वर्ण (Letter)—लघुत्तम वाग्-ध्वनि को वर्ण कहते हैं। अक्षर भी वर्ण का दूसरा नाम है। इस प्रकार वर्ण उस मूलध्वनि को कहते हैं, जिसके खण्ड न हो सकें।

(1) **भावाक्षर या लब्ध्यक्षर** (Mental ability to pronounce a letter)—ध्वन्यात्मक शब्द के अविभागी अंश या मूल ध्वनि की उत्पत्ति के कारण रूप शक्ति को भावाक्षर या लब्ध्यक्षर कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह अकृत्रिम अनादिनिधन और अक्षय है इसी से इसके कार्यरूप मूलध्वनि या शब्द के अविभागी अंश को 'अक्षर' कहते हैं जो कर्णेन्द्रिय का विषय है।

निर्वृत्यक्षर (Utterance or pronunciation of a letter)—शब्द के अविभागी अंशोच्चारण या मूलध्वनि को 'निर्वृत्यक्षर' कहते हैं। यह कर्णेन्द्रिय का विषय है।

(2) **द्रव्याक्षर** (Written from of a letter)—भावाक्षर अथवा मूलध्वनि (निर्वृत्यक्षर) के प्रतिनिधि रूप आकारों या चिह्नों को द्रव्याक्षर या स्थापनाक्षर कहते हैं।

यह कृत्रिम है और इसीलिये इनकी रचना भिन्न-भिन्न देशों और भिन्न-भिन्न समय में यथा आवश्यक भिन्न-भिन्न प्रकार की लिपियों में (आकारों या चिह्नों में) होती है और परिवर्तित रहती है। द्रव्याक्षर नेत्रेन्द्रिय का विषय है। इसी कारण इन्हें 'वर्ण' भी कहते हैं। साधारणतया 'द्रव्याक्षर' या वर्ण को अक्षर बोलते हैं।

वर्ण (अक्षर) प्रधानतः दो श्रेणियों में रखे जाते हैं—

1. स्वर वर्ण (वि० दे० स्वर)
2. व्यंजन-वर्ण (वि० दे० व्यंजन)

वर्णचिह्न (Character)—जो चिह्न किसी वर्ण का सूचक मान लिया जाता उसे वर्णचिह्न कहते हैं।

हर भाषा में दो तथ्य समान रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। उनमें से एक यह है कि किसी भाषा में जितने वर्ण होते हैं, उतने वर्णचिह्न नहीं होते और दूसरे यह कि कुछ वर्णचिह्न एक से अधिक वर्णों के सूचक भी होते हैं। इस प्रकार के दोष हिन्दी (देवनागरी) वर्णमाला में भी हैं। लेकिन बहुत कम।

वर्णबलाघात—दे० बलाघात।

वर्णमाला (Alphabat)—सभी अक्षरों या वर्णों (स्वरों और व्यंजनों) के समुदाय को वर्णमाला कहते हैं।

वर्णसाम्नाथ, अक्षरमाला, अक्षर साम्नाथ, अक्षर श्रेणी, अक्षरावली अक्षर-मालिका, अक्षर मातृ का या वर्णश्रेणी, वर्णावली आदि वर्णमाला के ही अन्य नाम हैं।

प्राकृत भाषा की वर्णमाला में 27 स्वर 33 व्यंजन और 4 योगवाह कुल 64 मूलाक्षर और अनेक संयोगी अक्षर हैं।

संस्कृत भाषा की वर्णमाला मे 22 स्वर 33 व्यंजन 4 योगवाह और 4 यम या युग्माक्षर=कुल 63 अक्षर हैं।

हिन्दी भाषा की वर्णमाला में 16 स्वर, 33 व्यंजन और 3 युग्माक्षर=कुल 52 अक्षर हैं। आजकल की हिन्दी में किन्हीं-किन्हीं विद्वानों के मत से 13 स्वर, 33

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व्यंजन और 3 युग्माक्षर और किन्हीं विद्वानों की सम्मति में 11 स्वर 33 व्यंजन 2 योगवाह और 3 युग्माक्षर=कुल 49 अक्षर हैं ।

उर्दू में कुल 38, अरबी में 28, अंग्रेजी में 26, फारसी में 24 अक्षर हैं ।

हिन्दी की वर्णमाला

13 स्वर—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ
ए, ऐ, ओ, औ (अनुस्वार), ः (विसर्ग) : =13

25 **व्यंजन**—क, ख, ग, घ, ङ
च, छ, ज, झ, ञ
ट, ठ, ड, ढ, ण
त, थ, द, ध, न
प, फ, ब, भ, म
य, र, ल, व, श
ष, स, ह, ड़, ढ़=36

टिप्पणी—श्री कामता प्रसाद गुरु ने 33 व्यंजन माने हैं। अनुस्वार और विसर्ग को व्यंजनों में गिना है । (हिन्दी व्याकरण, पृ० 29)

हिन्दी की वर्णमाला का ठीक नाम 'देवनागरी वर्णमाला' है। देवनागरी वर्णमाला में संस्कृत भी लिखी जाती है, और हिन्दी भी। संस्कृत में ऋ और लृ ये दो स्वर अधिक हैं, परन्तु ड़ और ढ़ ये दो व्यंजन नहीं है। ड और ढ़ वस्तुतः वैदिक वर्णों 'ल' और 'ल्ह' के विकसित रूप हैं। अनुस्वार और विसर्ग को संस्कृत में स्वरों और व्यंजनों से भिन्न माना जाता है और उन्हें 'योगवाह' कहा जाता है। अयोगवाह का अर्थ है—योग न होने पर भी जो साथ बहें। (दे० अयोगवाह)। वस्तुतः ये दोनों हैं भी कुछ अर्थों में स्वरों तथा व्यंजनों से भिन्न ही। परन्तु हिन्दी में चिरकाल से 'बारह खड़ी' में अनुस्वार तथा विसर्ग की गिनती होती चली जा रही है। इन दोनों को स्वरों के वर्ग में रखने में कोई हर्ज तो नहीं, परन्तु ये दोनों से अलग हैं। इस तथ्य को सदा ध्यान में रखना चाहिये।

दूसरी बात, बारह खड़ी में 'ऋ' की गिनती नहीं की जाती थी। हिन्दी क्या संस्कृत में भी अब ऋ का मूल उच्चारण नहीं होता। यही बात—'ष' व्यजन के सम्बन्ध में है।

हिन्दी में संस्कृत के ऐसे तत्सम शब्द चलते हैं जिनमें ऋ और ष वर्ण प्रयुक्त होते हैं। परम्परा की रक्षा के लिए लिखित रूप का प्रायः संसार की सभी भाषाओं में निर्वाह किया जाता है। अंग्रेजी भाषा में भी 'क्नाईफ' लिखते हैं बोलते 'नाईफ' हैं, और 'जड्ज' लिखते हैं किन्तु बोलते जज हैं।

हिन्दी वर्णमाला के वर्णों के प्रयोग के सम्बन्ध में कुछ नियम ध्यान देने योग्य हैं, जिनका निर्देश श्री कामता प्रसाद गुरु ने किया है—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(अ) कुछ वर्ण केवल संस्कृत (तत्सम) शब्दों में आते हैं, जैसे—ऋ, ण्, ष्, जैसे—ऋतु, ऋषि, पुरुष, गण आदि।

(आ) ङ् और ञ् पृथक् रूप से केवल संस्कृत शब्दों में आते हैं, जैसे—पराङ्मुख, नञ् तत्पुरुष।

(इ) संयुक्त व्यंजनों में से क्ष्, और ज्ञ् केवल संस्कृत शब्दों में आते हैं, जैसे—मोक्ष, संज्ञा।

(ई) ङ्, ञ्, ण्, हिन्दी में शब्दों के आदि में नहीं आते। अनुस्वार और विसर्ग भी शब्दों के आदि में प्रयुक्त नहीं होते।

(उ) विसर्ग केवल थोड़े से हिन्दी शब्दों में आता है, जैसे—छः, छिः, इत्यादि।

देवनागरी वर्णमाला का कोष्ठक

(श्री कामता प्रसाद गुरु के अनुसार)

	अघोष				घोष						
	स्पर्श		ऊष्म		स्पर्श				स्वर		
स्थान	अल्पप्राण	महाप्राण	महाप्राण	महाप्राण	अल्पप्राण	महाप्राण	अल्पप्राण + अनुनासिक	अन्तस्थ	ह्रस्व	दीर्घ	संयुक्त
कंठ	क	ख		ह	ग	घ	ङ		अ	आ	
तालु	च	छ	श		ज	झ	ञ	य	इ	ई	ए, ऐ[2]
मूर्द्धा	ट	ठ	ष		ड	ढ	ण	र	ऋ	ॠ	
दंत	त	थ	स		द	ध	न	ल			
ओष्ठ	प	फ			ब	भ	म	व[1]	उ	ऊ	ओ[3] औ
	ड़, ढ़ = द्विस्पृष्ट ज = दंत तालव्य फ़ = दंतोष्ठ्य						स्थान + नासिका	1 दंत + ओष्ठ			2 कंठ + तालु 3 कंठ + ओष्ठ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वर्ण लिपि—दे० लिपि ।

वर्ण विचार—व्याकरण का वह भाग जिसमें वर्णों के आकार, भेद, उच्चारण, तथा उनके मेल से शब्द बनाने के नियमों का निरूपण होता है ।

वर्ण सूचक, गुणवाचक विशेषण—दे० विशेषण, गुणवाचक वि० ।

वर्तमानकाल (Present tense)—काल-भेद (दे० काल-वर्तमान काल)

वर्त्स्य (Alveolar)—तालु के अन्तिम भाग, ऊपरी मसूड़ों और जीभ के नोक से उच्चरित होने वाला वर्ण, उदा० न्, न्ह । चटर्जी के अनुसार वैदिक काल में पूरा तवर्ग वर्त्स्य माना जाता था । दन्तमूल के ऊपर उभरे हुए भाग को वर्त्स्य कहते हैं ।

वाक्य (Sentence)—भाषा की ऐसी इकाई को 'वाक्य' कहते हैं, जिसके द्वारा कोई बात कही गयी हो । दूसरे शब्दों में जिस सार्थक पद या पदसमूह से कोई एक विचार पूर्णता से प्रकट हो उसे 'वाक्य' कहते हैं ।

वाक्य के मुख्य अंग-उद्देश्य और विधेय हैं (दे० यथास्थान-उद्देश्य, विधेय)

जब एक बड़ा वाक्य दो या अधिक साधारण वाक्यों से किसी व्यक्त या अव्यक्त रूप समुच्चय बोधक अव्यय द्वारा जुड़ कर बना हो तो उन साधारण वाक्यों में से प्रत्येक को 'उपवाक्य' कहते हैं ।

उपवाक्य और उसके भेदोपभेदों के लिये दे० उपवाक्य ।

प्रयोजन के आधार पर वाक्यों के सात भेद हैं—1. विधान सूचक, 2. आज्ञा-सूचक, 3. प्रश्नसूचक, 4. विस्मयादि सूचक, 4. इच्छासूचक, 6. सन्देह सूचक, 7. संकेत सूचक ।

(विशेष दे० वाक्य-भेद)

तथा द्रष्टव्य-वाक्यांश, पद, क्रम, अध्याहार, समाहार, समाहृत वाक्य, लोप, वाक्य-विभाग ।

वाक्यच्छेद-या वाक्यपृथक्करण (Analysis)—वाक्य के अवयवों (पदों) को उनका परस्पर सम्बन्ध दिखाने के लिये उनके अर्थ और प्रयोग के अनुसार अलग-अलग करने की रीति को 'वाक्य-पृथक्करण' या 'वाक्यच्छेद' कहते हैं ।

वाक्य भेद

1. अर्थापेक्षा वाक्य भेद (अर्थ के अनुसार) 8 भेद—

1. **विधानार्थक वाक्य** (Affirmative sentence)—जिस वाक्य से किसी विधान का होना पाया जाय । जैसे—वह आया ।
2. **निषेधार्थक वाक्य** (Negative sentence)—जिससे किसी विधान का न होना पाया जाय । जैसे—वह नहीं आया ।
3. **आज्ञार्थक वाक्य** (Imperative sentence)—जिससे कोई आज्ञा, प्रार्थना, विनती या उपदेश सूचित हो ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3.1 विधान सूचक आज्ञार्थक वाक्य—जैसे—उसे ले जाओ।

3.2 निषेधसूचक आज्ञार्थक वाक्य—जैसे—उसे मत लाओ।

4. **प्रश्नार्थक वाक्य** (Intrrogative sentence)—जिसमे किसी प्रकार का विधि या निषेध सूचक प्रश्न किया जाना सूचित हो। जैसे—क्या आप वहाँ जा रहे हैं ?

5. **विस्मयादि बोधक वाक्य** (Exclamatory sentence)—जिससे विस्मय, आश्चर्य, हर्ष-विषाद, घृणा या अन्य कोई आकस्मिक भाव प्रकट हो। जैसे —अरे ! यह क्या हो गया।

6. **इच्छा बोधक वाक्य** (Desiderative or Solicitative sentence)—जिससे इच्छा या आशिष सूचित होती है—

6.1 विधानार्तक इच्छा बोधक वाक्य—जैसे—ईश्वर आपका भला करे।

6.2 विषधार्थक इच्छाबोधक वाक्य—मेरे द्वारा कभी किसी को कष्ट न हो।

7. **सन्देह बोधक वाक्य** (Doubtful sentence)—जिससे कोई सन्देह या सम्भावना सूचित हो।

7.1 विधानार्थक सन्देह बोधक वाक्य—जैसे—वह आ रहा होगा।

7.2 निषेधार्थक सन्देह बोधक वाक्य—जैसे—शायद वह नहीं आ रहा होगा।

8. **संकेत बोधक वाक्य या अन्यात्रित वाक्य** (Conditional sentence)—जिससे कोई संकेत या शर्त सूचित हो।

8.1 विधानार्थक सकेत बोधक वाक्य—जैसे—आप कहें तो मैं आऊँ।

8.2 निषेधार्थक संकेत बोधक वाक्य—जैसे—आप मना करें तो मैं न आऊँ।

2. **वाच्यापेक्षा वाक्य-भेद**—(वाच्य के आधार पर) 3 भेद—

1. कर्तृवाच्य वाक्य या कर्तृप्रधान वाक्य में क्रिया के कर्तृवाच्य रूप का प्रयोग किया जाय। (दे० कर्तृवाच्य)

2. कर्मवाक्य वाक्य या कर्मप्रधान वाक्य—जिस वाक्य में क्रिया के कर्मवाच्य रूप का प्रयोग किया जाय। (दे० वाच्य—कर्मवाच्य)

3. भाववाच्य या भाव प्रधान वाक्य—जिस वाक्य में क्रिया के भाववाच्य रूप का प्रयोग किया जाय। (दे० वाच्य—भाववाच्य)

3. **रचनापेक्षा वाक्य-भेद** (रचना के आधार पर) 6 भेद—

1. **साधारण वाक्य** (**अमिश्रित वाक्य**) (Simple sentence)—जिसमें केवल एक उद्देश्य और एक समापिका क्रिया का विधेय हो। जैसे—मैं आया। उस पापी आदमी ने उपने हाथ से इस गरीब बालक के गाल पर कसकर चाँटा मारा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2. **संयुक्त वाक्य** (Compound sentence)—जिसमें दो या दो से अधिक समानाधिकरण उपवाक्यों का योग किसी समानाधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय द्वारा हो। जैसे—मैं आया और एक पत्र लिखा। यहाँ बैठो या घर चलो।

3. **मिश्रयावाक्य** (Complex sentence)—जिससे एक मुख्य उपवाक्य और एक या अधिक आश्रित उपवाक्यों का योग किसी व्याधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय द्वारा हो। जैसे—जब मैं आया, तभी वह लौट गया। मैं आज ही आगरा जाऊँगा क्योंकि वहाँ मुझे श्रीराम से मिलना है जो कल वहाँ से दिल्ली चला जायेगा।

4. **संसृष्ट वाक्य** (Mixed sentence)—जिसमें साधारण और मिश्र वाक्यों का, या संयुक्त और मिश्र वाक्यों अथवा कई मिश्र वाक्यों का संयोग हो। जैसे—मैं आया था, परन्तु जब आप देर तक न पहुँचे तो मैं चला गया।

5. **संकुचित वाक्य या संकीर्ण वाक्य** (concise sentence)—जिस वाक्य में—

(i) एक उद्देश्य और दो या अधिक विधेय हों (जैसे—मैंने पत्र लिखा और फाड़ दिया)।

(ii) एक विधेय और दो या अधिक उद्देश्य हों—(जैसे—राम और कृष्ण ने पत्र लिखे)

(iii) एक उद्देश्य के दो या अधिक उद्देश्य वर्द्धक हों, (जैसे—इस वीर और तेजस्वी पुरुष ने उसे परास्त कर दिया)

(iv) एक विधेय के दो या अधिक कर्म हों, जैसे—इसने राम और कृष्ण को बुलाया।

(v) एक विधेय की दो या अधिक पूर्तियाँ हों, जैसे—राम बड़ा गुणी, सुबुद्धी और वीर है।

(vi) एक विधेय के दो या अधिक विस्तारक हों, जैसे—राम ने बड़ी बुद्धिमत्ता से और बड़े श्रम से इस काम को किया।

(vii) एक कर्म के दो या अधिक विशेषण हों, जैसे—राम ने गुणी वीर परिश्रमी बालकों को पुरस्कार दिये।

(viii) एक पूर्ति के दो या अधिक विशेषण हों—जैसे—राम ने थोड़े ही दिनों में विद्वान् और कर्मकुशल मनुष्य बना दिया।

6. **संक्षिप्त वाक्य** (Elliptical sentence)—जिस वाक्य में उस वाक्य ही से या उसके पूर्वापर सम्बन्ध से सहज ही में जान लेने योग्य उद्देश्य को या विधेय को अथवा इनसे से किसी के कुछ भाग को संक्षिप्त या

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गौरव के लिये छोड़ दिया जाता है, उसे संक्षिप्त वाक्य कहते हैं। जैसे—आ रहा हूँ। जी हाँ, लिख लिया।

वाक्य रचना (formation of a sentence)—शब्दों को उनके अर्थ और प्रयोग के अनुसार यथाक्रम रख कर वाक्य बनाने की रीति को 'वाक्य रचना' कहते हैं। वाक्य के आधार पर इसके तीन भेद हैं। (दे० वाच्य)

वाक्य विचार (Syntex)—व्याकरण का एक अंग जिसमें वाक्यों के अवयवों के पारस्परिक सम्बन्ध, शब्दों से वाक्य बनाने की रीति और उन वाक्यों के भेद आदि का निरूपण हो। (दे० व्याकरण)

वाक्य विन्यास—वाक्य विचार को ही वाक्य-विन्यास भी कहते हैं।

वाक्य स्पष्टीकरण (Ellucidation/making a sentence intelligible)—यथार्थ वाक्यार्थ समझने के लिए वाक्य पृथक्करण और शब्दव्याख्या या पदपरिचय द्वारा शब्दों के परस्पर सम्बन्ध आदि को जानने की प्रक्रिया को वाक्य स्पष्टीकरण कहते हैं।

वाक्यांश (Phrase)—परस्पर सम्बन्ध रखने वाले दो या अधिक शब्दों के ऐसे सार्थक सग्रह को, जिससे कोई पूर्ण विचार प्रकट न हो वाक्यांश कहते हैं। इसके तीन भेद हैं—

(1) **संज्ञा वाक्यांश** (Noun Phrase)—जो वाक्यांश संज्ञा का काम दें। जैसे—थका हुआ पथिक।

(2) **विशेषण वाक्यांश** (Adjective phrase)—जो वाक्यांश विशेषण का काम दें। जैसे—दिन भर का थका हुआ।

(3) **क्रिया विशेषण वाक्यांश** (Adverbial Phrase)—जो वाक्यांश क्रिया विशेषण का कार्य दें। जैसे—बड़े परिश्रम पूर्वक। सूर्योदय के समय।

वाच्य (Voice)—वाच्य अर्थात् क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि वाक्य में कर्ता के विषय में विधान किया गया है, या कर्म के विषय में या केवल भाव के विषय में, उसे वाच्य कहते हैं। वाच्य ही को क्रिया वाच्य कहते हैं। (दे० क्रिया वाच्य) कुछ विद्वान् वाच्य को 'प्रयोग' भी कहते हैं, क्योंकि संस्कृत में ये दोनों शब्द पर्यायवायी हैं। (दे० प्रयोग)

वाच्य परिवर्तन (Change of Voice)—एक प्रकार के वाच्य को अन्य प्रकार के वाच्य के रूप में बदलने की क्रिया को 'वाच्य परिवर्तन' कहते हैं।

विकारी अव्यय—दे० अव्यय—विकारी अव्यय।

विकारी कृदन्त—दे० कृदन्त—विकारी कृदन्त।

विकारी शब्द—दे० शब्द—शब्द भेद।

विकारी समास पद—समास पद का एक भेद। (दे० समास पद—विकारी समास पद)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विकृत अव्यय (Varied form of Indeclinables)—विकारी अव्यय के विकृत रूप को, 'विकृत अव्यय' कहते हैं। (दे० अव्यय—विकारी अव्यय)

विग्रह (Expounding)—सामाजिक शब्दों का सम्बन्ध व्यक्त कर दिखाने की रीति को 'विग्रह' कहते हैं। जैसे—प्रतिदिन—प्रत्येक दिन आदि। (दे० समास-समास के भेद)

विद्या बोधक संज्ञा—संज्ञा का भेद। (दे० संज्ञा)

विधान—विधान का अर्थ है—शासन। 'विधान सूचक वाक्य' में इस शब्द का प्रयोग प्रायः किया तो जाता है, किन्तु इस शब्द के प्रयोग से इस वाक्य भेद का ठीक-ठीक आशय व्यक्त नहीं होता। (दे० वाक्य भेद विधान सूचक वाक्य)

विधेय (Predicate)—वाक्य के दो मुख्यांग हैं—उद्देश्य और विधेय। वाक्य में उद्देश्य (दे० यथास्थान) के सम्बन्ध में जो कुछ विधान किया जाय उसे सूचित करने वाले शब्द या शब्दों को विधेय कहते हैं। जैसे—वह आया। इसमें 'वह' उद्देश्य और 'आया' विधेय है।

(1) **मूल विधेय या केवल क्रिया** (Finite Verb)—विधेय की समापिका क्रिया (दे० यथास्थान—क्रिया) को मूल विधेय या केवल क्रिया कहते हैं। जैसे—वह आया। मैं 'आया'।

(2) **विधेय पूरक** (Object or Complement with Attribution)—विधेय की समापिका क्रिया के सविशेषण मुख्य कर्म, गौण कर्म, सजातीय कर्म और पूर्ति को (वाक्य में यदि कोई हो) 'विधेय पूरक' कहते हैं। जैसे—वह धोबी **बड़ा भला मनुष्य** है।

(3) **विधेय वर्द्धक या विधेय विस्तार** (Adverbial Adjuncts or Extension of Predicate)—विधेय की समापिका क्रिया से सम्बन्ध रखने वाले क्रिया-विशेषणों को अथवा क्रियाविशेषण का काम देने वाले अन्य शब्द भेदों या वाक्यांशों को तथा विभक्ति युक्त करण अधिकरण व अपादान कारकों को—विधेय-वर्द्धक कहते हैं। जैसे—वह छोटा-सा बालक **पाठशाला में** अपनी छोटी पुस्तक **धीरे-धीरे** याद कर रहा है।

विभक्ति (Inflectional Terminations)—प्रत्येक कारक के चिह्नों को 'विभक्ति' कहते हैं। (वि० दे० अव्यय—विभक्ति नाम अव्यय)

सभी विभक्तियाँ चरम प्रत्यय हैं क्योंकि उनके पीछे कोई अन्य प्रत्यय नहीं आता। (दे० प्रत्यय—चरम प्रत्यय) विभक्ति को ही परसर्ग कहते हैं; अतः इसकी परिभाषा यह भी है कि वाक्य के एक पद का सम्बन्ध दूसरे पद के साथ स्थापित करने वाले सहायक शब्दों को विभक्ति या परसर्ग कहते हैं। (विशेष—दे० परसर्ग)

विभक्ति नाम अव्यय—दे० अव्यय—विभक्ति नामक अव्यय।

विराम चिह्न—लेखन में प्रयुक्त ऐसे चिह्नों को, जो कथन के विराम के सूचक होते हैं, विराम चिह्न कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिन्दी में प्रयुक्त विराम चिह्न—

1—पूर्ण विराम (।)
2—अपूर्ण विराम (:)
3—अर्द्ध विराम (;)
4—अल्प विराम (,)
5—प्रश्नचिह्न (?)
6—विस्मयादि बोधक चिह्न (!)
7—अवतरण चिह्न ("—"/'—')
8—योजिका (-)
9—रेखिका (—)
10—तिर्यक् (/)
11—संक्षिप्तक (०)
12—बिन्दु (˙)
13—कोष्ठक ( )
14—बिन्दु रेख (····)
15—लोपचिह्न (—'—)
16—हंसपद (∧)
17—अधोरेख (_)
18—तारकचिह्न (*)
19—डाइगर (+)
20—डबल डाइगर (‡)

नोट—(1) पूर्ण विराम को छोड़कर हिन्दी में सभी चिह्न अंग्रेजी भाषा से लिये गये हैं।

(2) प्रायः इनका प्रयोग लेखक की इच्छा और दृष्टिकोण पर निर्भर है। फिर भी विराम-चिह्नों के प्रयोग के सम्बन्ध में कुछ नियम द्रष्टव्य हैं—

1. सामान्यतः वाक्य की समाप्ति पर पूर्ण विराम लगाया जाता है; किन्तु यदि वाक्य प्रश्न-सूचक हो तो उसके स्थान पर प्रायः प्रश्न-चिह्न और यदि विस्मय सूचक हो, तो उसके स्थान पर प्रायः विस्मयादि-चिह्न लगाते हैं; जैसे—यह राम ने कहा। यह राम ने कहा ? यह राम ने कहा ! यहाँ तीन चिह्नों से एक ही वाक्य की तीन स्थितियाँ द्रष्टव्य हैं।
2. कुछ लोग आदेश सूचक वाक्यों में प्रश्न-चिह्न एवं कुछ लोग इच्छा सूचक वाक्यों में विस्मयादि-चिह्न भी लगाते हैं, जैसे—
   बैठक के किवाड़ों पर खट-खट सुनकर पुकारा, 'कमाल, देखो कौन आया है ?'
   ईश्वर तुम्हारी उम्र लम्बी करे !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

3. कुछ लोग पूर्णविराम के स्थान पर बिन्दु का प्रयोग करते हैं। आजकल हिन्दी की अनेक पत्रिकाएँ बिन्दु का ही प्रयोग कर रही हैं।

4. प्रश्न या विस्मय की गम्भीरता या तीव्रता सूचित करने के लिए एक से अधिक प्रश्न-सूचक तथा विस्मयादि-चिह्न भी लगाये जाते हैं, जैसे—
आह ! कुछ भी तो दिखाई नहीं दे रहा !! उफ, शोर !!!

5. वाक्य या उपवाक्य के अन्त में उस समय अपूर्ण विराम लगाते है जब कोई सूची, उद्धरण या विचार प्रस्तुत करना प्रभिप्रेत हो। जैसे—
वह बोला; ऐसा आदमी किस काम का ?

6. दो उपवाक्यों के मध्य में सामान्यत: योजक न होने पर अल्पविराम लगाते हैं, परन्तु यदि उपवाक्य बड़े-बड़े हों या विभिन्न विचारों को सूचित करते हों तो अर्द्ध विराम लगाते हैं; जैसे—
अल्पविराम—तुम्हें नहीं पता, रहने दो, जैसा तुम हमेशा करते हो।
अर्द्धविराम—मैं हमेशा वहाँ गया; राम, सुरेश या मीरा मुझे कभी न नहीं मिले।

7. समान पदों या पदबन्धों के बीच योजक न हो तो अल्पविराम का प्रयोग होता है; जैसे—
प्यार सौन्दर्य, पवित्रता, समर्पण, श्रद्धा और विश्वास का नाम है।

8. सम्बोधन पद के बाद प्राय: अल्प विराम का प्रयोग होता है, जबकि कुछ लोग विस्मयादि चिह्न का भी प्रयोग करते हैं, जैसे—
उसने राजा से कहा, "राजन्, यह काम न करो।"
या, उसने राजा से कहा, "राजन् ! यह काम न करो।"

9. पदवाचक समानाधिकरण संज्ञापद के बाद अल्पविराम लगाते हैं; जैसे—
भारत की प्रधान मत्री, श्रीमती इन्दिरा गांधी के पुत्र संजय गांधी का आज निधन हो गया।

10. यदि किसी नाम पद के बाद पदवाचक संज्ञापद हो तो उस नाम पद के बाद भी अल्पविराम लगाते हैं; जैसे—
श्रीमती इन्दिरा गांधी, भारत की प्रधानमन्त्री, लखनऊ पहुँच रही हैं।

11. यदि किसी उपवाक्य के पेटे में ही कोई दूसरा उपवाक्य हो तो मध्य स्थित उपवाक्य से पूर्व भी अल्पविराम रखा जाता है, और बाद में भी; जैसे—
जब पुस्तक के लेखक का, **जो इतिहास के प्राध्यापक थे,** ध्यान उन भूलों की ओर गया, तो वे दंग रह गए।

12. उद्धृत अंश की पृथकता सूचित करने के लिए उसे अवतरण चिह्नों के मध्य रखते हैं; जैसे—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डाक्टर ने कहा, "घबराने की आवश्यकता नहीं है। सब ठीक हो जायेगा।"

13. जब किसी उद्धृत अंश के अन्तर्गत कोई अन्य उद्धृत अंश हो तो उसे एकल अवतरण चिह्न (' ') में रखा जाता है।

14. विचार्य पद को भी एकल अवतरण चिह्न के मध्य रखते हैं, जैसे—
'कुछ नहीं', कह देने से काम नहीं चलेगा, 'कुछ' तो है ही।

15. योजिका का प्रयोग समास-पदों में होता है, जैसे—
वे दिन-रात पढ़ते हैं।

16. रेखिका का प्रयोग पदों एवं उपवाक्यों का अलगाव सूचित करने के लिए प्रायः होने लगा है, जैसे—
वह लड़का—सुरेश और उसका भाई—गाँव वाला, आ रहा है।

17. तिर्यक् विकल्प-सूचक होता है; जैसे—
कोई भी व्यक्ति यह नहीं चाहता कि उसके चरित्र पर कलंक/दाग लगे:

18. कोष्ठक का प्रयोग विशेष विवरण, अर्थ आदि देने के लिए होता है, जैसे—
उक्त (कहा हुआ) वाक्य सच है।

19. बिन्दु रेख का प्रयोग लुप्त, अज्ञात या अप्रासंगिक अंश सूचित करने के लिए होता है; जैसे—
आप निश्चिन्त रहें.....सब लोग जा चुके हैं।

20. पद के संक्षिप्त रूप के बाद 'संक्षिप्तका' रखते हैं; जैसे—
डा० (डाक्टर), दे० (देखिए) कृ० प० उ० (कृपया पन्ना उलटिये)

21. (,) पूर्व अंश के लोप का सूचक है; जैसे—
जून' 80 (जून 1980)

22. पंक्ति में छूट का संकेत करने के लिए हंस का पद लगाते हैं, जैसे—
दिल्ली
कृष्ण कल से आया = कृष्ण कल /\ से आया। (कल और से के मध्य)

23. किसी पद, पदबन्ध, उपवाक्य आदि की विशिष्टता सूचित करने के लिए उसके नीचे अधोरेख लगाते हैं; जैसे—
वह तो नहीं आयेगा।

24. तारक चिह्न (*) का प्रयोग पाद-टिप्पणी को इंगित करने के लिए होता है।

25. डाइगर (+) तथा डबल डाइगर (‡) का प्रयोग भी तारक चिह्न के स्थान पर होता है।

विरोधी शब्द—दे० शब्द—शब्द-भेद।

विवारश्वास अघोष व्यंजन—दे० अघोष व्यंजन।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विवृत वर्ण (Letters of Open Effort)—इन्हें अस्पृष्ट वर्ण भी कहते हैं। जिन वर्णों के उच्चारण के अभ्यन्तर प्रयत्न में वागिन्द्रिय विस्तृत और खुली रहती है, वे 'विवृतवर्ण' हैं। जिह्वा इनके उच्चारण के प्रयत्न में स्थानों को स्पर्श नहीं करती। इसीलिए इन्हें अस्पृष्ट वर्ण कहते हैं। 'आ' विवृत स्वर है।

विशेषण (Adjective)—विशेषण के विकारी शब्द हैं जो किसी संज्ञा में कुछ न कुछ विशेषण का बोध कराते हैं। जैसे—अच्छा, बुरा, अनेक आदि।

विशेषण के भेद

1. **गुणवाचक विशेषण** (Adjective of Quality)—जो विशेषण किसी सज्ञा या सर्वनाम का कोई गुण प्रकट करें।
   इनके अनेक प्रकार हैं—

1·1. कालसूचक—नया, पुराना, गत आदि।

1·2. स्थान सूचक—ऊँचा, नीचा।

1·3. आकार सूचक—गोल, चौकोर।

1·4. वर्ण सूचक—लाल, काला, पीला आदि।

1·5. दशासूचक—गीला, धनी, पतला, मोटा।

1·6. स्वभावसूचक—अच्छा, नर्म, ठण्डा।

2. **परिमाणवाचक विशेषण** (Adjective of Quantity)—जो विशेषण किसी संज्ञा की कुछ नाप-तौल का बोध करायें।

2·1. निश्चित परिणामवाचक वि० (Adj. of Definit Quantity) जो परिमाण वा० विशेषण निश्चित परिमाण का बोध करायें। जैसे—दो किलो, तीन किलो, सौ ग्राम आदि।

2·2. अनिश्चय परिमाणवाचक वि० (Adj. of Indefinite Quantity) जो परिमाणवाचक विशे० किसी निश्चित परिमाण का बोध न करायें। जैसे—ढेरों, उतना, इतना आदि।

3. **संख्यावाचक विशेषण** (Numeral Adjective) जो विशेषण किसी संज्ञा की कुछ संख्या का बोध करायें।

3·1. निश्चित संख्यावाचक विशेषण (Definite Numeral Adjective) जिन संख्यावाचक विशेषणों से किसी निश्चित संख्या का बोध हो।

3·1.1. गणना बोधक (Cardinals)।

3·1.1.1. पूर्णांक सूचक (Cardinals Denoting whole Number); जैसे—एक, दो, तीन।

3·1.1.2. अपूर्णांक सूचक (Cardinals Denoting Fractional Numbers) जैसे—आधा, तिहाई, चौथाई आदि।

3·1.2. क्रमबोधक (Ordinals) जैसे—पहला, दूसरा, तीसरा आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3·1.3. आवृत्ति बोधक (Multiplicatives); जैसे—दो गुना, तिगुना।

3·1.4. समुदाय बोधक; जैसे—अकेला, दोनों, तीनों आदि।

3·2. अनिश्चित संख्यावाचक (Indefinite Numeral Adjective) जिन संख्यावाचक विशेषणों से किसी निश्चित संख्या का बोध न हो। जैसे—कई, कुछ, कई एक, बीसियों, दर्जनों आदि।

4. **संकेतवाचक, विशेषण** (Demonstrative Adjectives)—जो विशेषण किसी संज्ञा की ओर संकेत सूचक हों। जैसे—यह, वह।

5. **व्यक्तिवाचक विशेषण** (Proper Adjectives)—जो विशेषण व्यक्तिवाचक संज्ञाओं से बनते हैं। जैसे—बनारसी, हिन्दुस्तानी आदि।

6. **पृथकत्ववाचक विशेषण** (Distributive Adjective)—जो विशेषण किसी संज्ञा की पृथकता के सूचक हैं। जैसे—हर-एक, दो-दो, तीन-तीन।

7. **सार्वनामिक विशेषण** (Pronominal Adjectives)—जो सर्वनाम विशेषण का काम दें अर्थात् किसी संज्ञा की व्यापकता को मर्यादित करें। जैसे—मेरा, तेरा, उसका, किसका आदि।

7·1. मूल सार्वनामिक विशेषण—जो सर्वनाम बिना किसी रूपान्तर के विशेषण का काम दें। जैसे—'वह' घर, 'कुछ' लड़के आदि।

7·2. यौगिक सार्वनामिक विशेषण—जो शब्द मूल सर्वनामों में प्रत्यय लगाने से बनकर विशेषण का काम दें। जैसे—ऐसा, वैसा, हमारा, उसका, तुम्हारा आदि।

8. **समानाधिकरण विशेषण** (Appositional Adjectives)—जो विशेषण किसी संज्ञा की व्यापकता को मर्यादित न कर केवल उसके अर्थ को स्पष्ट करें। जैसे—'पतिव्रता' सीता, 'बली' भीम आदि। (ऐसे विशेषण प्रायः व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के साथ ही आते हैं)

9. **संज्ञात्मक विशेषण** (Nominal Adjectives)—जो संज्ञा किसी अन्य संज्ञा के पूर्व या सर्वनाम के आगे आकर विशेषण का काम दें। जैसे—स्वर्णपदक, ताम्र-पत्र आदि।

10. **क्रियार्थक विशेषण** (Verbal Adjectives or Participles)—

10·1. अपूर्ण वर्तमान क्रियार्थक विशेषण (Present Imperfect Participles); जैसे—'दौड़ता हुआ' आदमी, 'चलती' गाड़ी आदि।

10·2. पूर्ण भूतकालिक क्रियार्थक विशेषण (Past Perfect Participles); जैसे—'थका हुआ' आदमी आदि।

10·3. कर्तृसूचक क्रियार्थक विशेषण (Verbal Adjectives Denoting doer or Agent); जैसे—'मारने वाला' आदमी, 'रोऊ' बालक आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

डा० बदरीनाथ कपूर ने 'परिष्कृत हिन्दी व्याकरण में विशेषण को इस प्रकार वर्गीकृत किया है—

1—संज्ञा विशेषण—
- —गुणवाचक
- —सम्बन्धवाचक
- —मानवाचक
- —संख्यावाचक
  - —निश्चित संख्यावाचक
  - —अनिश्चित संख्यावाचक
- —परिमाणवाचक

2—क्रियाविशेषण—
- —गुणसूचक
- —सम्बन्धसूचक
- —रीतिसूचक

क्रियाविशेषण के रूप में विकार नहीं होता, इसलिए यह 'अव्यय' है।

(दे० अव्यय)

विशेषण पद—नामपद यदि किसी पद की विशेषता बतलाता हो, तो उसे विशेषण पद कहते हैं। (दे० नामपद) जैसे—काला, गोरा आदि।

विशेषणावस्था (Comparision of Adjective)—विशेषण के जिन रूपों से उनकी परस्पर तुलना की जाती है, उन्हें 'विशेषणावस्था' कहते हैं। जैसे—अच्छा—अधिक अच्छा। कहीं अच्छा। सबसे अच्छा। विशेषणावस्थाएँ तीन हैं—

1. मूलावस्था या साधारणावस्था (Positive degree) जैसे—अच्छा।
2. उत्तरावस्था या तुलनावस्था (Comparative degree) जैसे—अधिक अच्छा।
3. उत्तमावस्था या उत्कृष्टावस्था (Superlative degree) जैसे—उच्चतम, सबसे अच्छा।

विशेष्य (Substantive)—कोई विशेषण जिस संज्ञा या सर्वनाम में किसी प्रकार की विशेषता सूचित करता या उसकी व्याप्ति को मर्यादित करता है, उस सज्ञा या सर्वनाम को 'विशेष्य' कहते हैं।

विश्लेष् (Disjunction)—किसी शब्द के मिले हुए अक्षरों को क्रम से अलग-अलग करने को 'विश्लेष्' कहते हैं।

जैसे—व्याख्यान—व्+य्+आ+ख्+य्+आ+न्+अ।

विसर्ग (Emission of Breath)—किसी अक्षर के आगे जो 16वें स्वर अः के चिह्न रूप (दो विन्दु) आगे लगाये जाते हैं, उन्हें विसर्ग कहते हैं।

(दे० योगवाह,—विसर्ग)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विसर्ग सन्धि—दे० सन्धि, विसर्ग सन्धि ।

विस्मयादिबोधक अव्यय—दे० अव्यय ।

विस्मयादिबोधक वाचक वाक्य—दे० वाक्य-भेद ।

वृत्ताकार स्वर—उच्चारण के समय होठों की गोलाई के विचार से उ, ऊ, ओ, औ, वृत्ताकार स्वर हैं, इनमें होठ गोल हो जाते हैं ।

वृद्धि—'अ' या 'आ' के साथ अगले ए ऐ ओ औ में से किसी के मेल से होने वाले विकार या आ, ऐ ओ को 'वृद्धि' कहते हैं ।

वृद्धि सन्धि—दे० सन्धि-वृद्धिसन्धि ।

व्यंजन (Consonant)—जिन अक्षरों (वर्णों) का उच्चारण करते समय श्वास मुख-विवर के कंठ, तालु आदि स्थानों से बाधित होकर निकलता है, उन्हें व्यंजन कहते हैं अथवा जिन अक्षरों का उच्चारण (स्पष्ट उच्चारण) किसी न किसी स्वर के सहारे से होता है, उन्हें 'व्यंजन' कहते हैं ।

इनके उच्चारण में अर्द्धमात्रा-काल लगता है । बाह्य प्रयत्न के अनुसार व्यंजनों के दो भेद हैं—(1) अल्पप्राण, (2) महाप्राण ।

जिन व्यंजनों मे हकार की ध्वनि विशेष रूप से सुनाई देती है, उनको महाप्राण और शेष व्यंजनों को अल्पप्राण कहते हैं । स्पर्श व्यंजनों में प्रत्येक वर्ग का दूसरा और चौथा अक्षर तथा ऊष्म महाप्राण हैं । (दे० स्पर्श व्यंजन, ऊष्म व्यंजन) ।

व्यंजन को ही व्यंजन वर्ण, व्यंजनाक्षर और हल् भी कहते हैं ।

हिन्दी-व्यंजन

क	ख	ग	घ	ङ	श्री कामता प्रसाद गुरु ने 33 व्यंजन
च	छ	ज	झ	ञ	माने हैं । साथ ही व्यंजनों में दो वर्णों
ट	ठ	ड	ढ	ण	को और बताया है—अनुस्वार और
त	थ	द	ध	न	विसर्ग । इनमें भी स्वर की आवश्यकता
प	फ	ब	भ	म	होती है । (अं, अः) । (हिन्दी व्याकरण,
य	र	ल	व	श	पृ० 29)
ष	स	ह	ड़	ढ़	

व्यंजन चिह्न (हल् चिह्न) (Consonant Mark)—व्यंजनों में से प्रत्येक के नीचे जो एक तिरछी छोटी-सी रेखा इस आकार की (्) लगाई जाती है, वह 'व्यंजन चिह्न या हल चिह्न है । बिना इस चिह्न के लगाये यह अक्षर अकेले व्यंजन या शुद्ध व्यंजन नहीं माने जाते—अव्यक्त या अप्रकट रूप से इनके आगे अ स्वर का संयोग माना जाता है, देखें—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क् ख् ग् घ् ङ्
च् छ् ज् झ् ञ्
ट् ठ् ड् ढ् ण्
त् थ् द् ध् न्
प् फ् ब् भ् म् आदि ।

व्यंजन सन्धि—दे० सन्धि—व्यंजन सन्धि

व्यक्तिवाचक एक वचन संज्ञापद—दे० संज्ञापद

व्यक्तिवाचक विशेषण—दे० विशेषण

व्यक्तिवाचक संज्ञा—दे० संज्ञा

व्यधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय—दे० अव्यय

व्याकरण (Grammar)—जिस विद्या की सहायता से किसी भाषा के (मुख्यतः गद्यात्मक भाषा के और गौणतः पद्यात्मक भाषा के भी) ठीक-ठीक लिखने-पढ़ने, बोलने समझने का तथा शब्द-रचना और उसकी व्युत्पत्ति आदि का यथार्थ ज्ञान हो उसे व्याकरण कहते हैं ।

व्याकरण को ही 'शब्द विद्या' कहा जाता है ।

वस्तुतः व्याकरण किसी भी भाषा के बोलने तथा लिखने के नियमों की व्यवस्थित पद्धति है ।

व्याकरण के तीन प्रमुख अंग हैं—

(1) **अक्षर विचार** (Orthography)—व्याकरण के जिस विभाग में अक्षरों के आकार, उच्चारण और मिलाने आदि का वर्णन हो उसे 'अक्षर विचार' कहते हैं ।

(2) **शब्द विचार** (Etymology)—व्याकरण के जिस विभाग में शब्दों के भेद, अवस्था, रूपान्तर, व्युत्पत्ति और उनके प्रयोग आदि का वर्णन हो, उसे 'शब्द विचार' कहते हैं ।

(3) **वाक्य विचार** (Syntex)—व्याकरण के जिस विभाग में वाक्यों के अवयवों के पारस्परिक सम्बन्ध, शब्दों से वाक्य बनाने की रीति और उन वाक्यों के भेद आदि का विरूपण हो, उसे 'वाक्य विचार' कहते हैं ।

नोट—शब्द विचार को 'शब्द साधन तथा वाक्य-विचार को वाक्य-विन्यास, भी कहते हैं ।

व्याकरण शास्त्र (A Book of Grammar, a Book of Wording or Accidence)—जिस शास्त्र या ग्रन्थ में शब्दविद्या या व्याकरण के नियमों का कथन हो उसे व्याकरण शास्त्र कहते हैं ।

व्युत्पत्ति (Etymology)—एक शब्द से दूसरा नया शब्द बनाने की प्रक्रिया को व्युत्पत्ति कहते हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श

श्—यह हिन्दी वर्णमाला का तीसवाँ व्यंजन वर्णन है।

संस्कृत व्याकरणों के मत से इसका उच्चारण स्थान तालु आभ्यंतर प्रयत्न ईष द्विवृत्त (या विवृत) तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, विवार, श्वास और अघोष हैं।

आधुनिक व्याकरणों के अनुसार यह अघोष, संघर्षी, तालव्य ध्वनि है।

इसके उच्चारण में डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार, जीभ की नोक द्वारा कठोर तालु को रगड़ के साथ छुआ जाता है। बाबू श्याम सुन्दर दास के अनुसार इसके उच्चारण में जीभ द्वारा तालु का पूरा स्पर्श नहीं होता, अतः तालु और जीभ के बीच में से रगड़ खाती हुई हवा बिना रूके आगे निकल जाती है। इसमें 'शी', 'शी' के समान ऊष्मा के निकलने से इसे ऊष्मा ध्वनि भी कहते हैं। संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ ही सभी विदेशी भाषाओं से आये हुए शब्दों (आगत शब्दों) में भी यह पाई जाती है।

शक्यार्थ (Its Potential Mood)—अधिकारार्थ को ही शक्त्यार्थ कहते हैं। (वि० दे० अर्थ—शक्त्यार्थ)

शब्द (Sound, Word)—वाक्य की रचना जिन अर्थवान् ध्वनि-समूहों से होती है, उन्हें 'शब्द' कहते हैं अथवा एक या अधिक अक्षरों से बनी हुई स्वतन्त्र सार्थक ध्वनि को 'शब्द' कहते हैं। शब्द के प्रमुख दो भेद हैं—

(1) **निरर्थक शब्द** (Inarticulate Sound or Insignificant Sound)—अर्थरहित शब्दों को 'निरर्थक शब्द कहते हैं। जैसे—मेघ का गर्जना, ईंट पत्थर आदि के गिरने-टकराने की ध्वनि से उत्पन्न शब्द तथा ऐसे शब्द जो लिखे जा सकने पर भी उनका अर्थ कुछ न लग सके। जैसे—समृत कर, यर्व आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1·1. निरक्षर निरर्थक शब्द—जो शब्द न तो अक्षरों द्वारा लिखे जा सकें और न उनका कोई अर्थ ही लग सके। जैसे—बिजली की कड़क आदि।

1·2. साक्षर निरर्थक शब्द—जो शब्द अक्षरों द्वारा लिखे जा सकें परन्तु उनका अर्थ कुछ न हो। जैसे—मखग, लल्ललु आदि।

(2) **सार्थक शब्द** (Articulate Sound, Significant Word or Sound)—अर्थबोधक शब्दों को सार्थक शब्द कहते हैं।

2 1. निरक्षर सार्थक शब्द—जो ध्वन्यात्मक शब्द अक्षरों द्वारा तो प्रकट न किये जा सकें, किन्तु कुछ न कुछ अर्थ सूचक हों, उन्हें निरक्षर सार्थक शब्द कहते हैं। जैसे—पशुओं को हांकने, कुत्ता, बिल्ली आदि को भगाने या पास बुलाने आदि के शब्द।

2·2. साक्षर सार्थक शब्द—एक या अधिक अक्षरों से बनी हुई सार्थक ध्वनि को 'साक्षर सार्थक शब्द' कहते हैं। व्याकरण में केवल इसी प्रकार के शब्दों पर विचार किया जाता है।

निपात शब्द (Irragular or Exceptional Words)—जो शब्द व्याकरण के नियमों से सिद्ध न हों, वे निपात् शब्द कहलाते हैं।

उद्गम या स्रोत के विचार से शब्दों के तीन भेद हैं—आकर, आगत और देशज या देश्य।

पूर्व भाषिक परम्परा से प्राप्त शब्दो को आकर, अन्य भाषाओं से प्राप्त शब्दों को आगत और समय-समय पर जो शब्द गढ़ लिए गये हों, उन्हें देशज (देश्य) कहते हैं।

आकर शब्दों के दो भेद हैं—(1) तत्सम, (2) तद्भव।

तत्सम (उसके समान) तद्भव (उससे बना) (विशेष दे० यथास्थान)

आगत शब्दों के भी दो भेम हैं—(1) तत्सम, (2) तद्भव।

देशज शब्दों के तीन भेद हैं :—

(अ) अनुकरणवाची। (दे० यथास्थान)

(ब) आकस्मिक। (दे० यथास्थान)

(स) निर्मित। (दे० यथास्थान)

शब्द प्रयोग (Word Application)—वाक्य में शब्दों को यथास्थान रखना 'शब्द प्रयोग' कहलाता है।

शब्द-भेद (Part of Speech)—प्रयोग के अनुसार शब्दों की भिन्न-भिन्न जातियों को 'शब्द भेद' कहते हैं। (अ) वाक्य में प्रयोग के अनुसार शब्दों के मूल भेद पाँच हैं—

(1) संज्ञा, (2) सर्वनाम, (3) विशेषण, (4) क्रिया विशेषण (5) अव्यय। (दे० यथास्थान)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कामताप्रसाद गुरू ने 8 भेद बताये हैं—(1) संज्ञा, (2) क्रिया, (3) विशेषण, (4) क्रिया-विशेषण, (5) सर्वनाम, (6) सम्बन्ध सूचक, (7) समुच्चय बोधक, (8) विस्मयादि बोधक।

(स) रूपान्तर के अनुसार शब्द के मूल भेद दो हैं—

(1) विकारी शब्द, (2) अविकारी शब्द।

(स) व्युत्पत्ति के अनुसार शब्दों के तीन भेद हैं—

(1) रूढ़ि शब्द, (2) यौगिक शब्द, (3) योग रूढ़ि शब्द।

1. **विकारी शब्द** (Declinable Words)—जिन शब्दों के रूप में कोई विकार या परिवर्तन होता है, उन्हें विकारी शब्द कहते है। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया ये चार विकारी शब्द हैं।

3. **अविकारी शब्द** (Indeclinable Words)—जिन शब्दों के रूप में कोई विकार या परिवर्तन नहीं होता, उन्हें अविकारी शब्द कहते हैं। कुछ को छोड़कर सभी अव्यय अविकारी शब्द हैं।

व्युत्पत्ति के अनुसार तीन भेद—

1. **रूढ़ि शब्द** (Primitives)—जिन शब्दों की व्युत्पत्ति न हो, या हो भी तो उनका व्युत्पत्ति से कुछ सम्बन्ध न हो, उन्हें रूढ़ि शब्द कहते हैं। जैसे—पुस्तक, गाय, बकरी, कान, बालक आदि।

2. **यौगिक शब्द** (Derivatives)—जिन शब्दों की व्युत्पत्ति हो सके और उनका अर्थ व्युत्पत्ति के अनुकूल ही हो उन्हें यौगिक शब्द कहते हैं। ऐसे शब्द प्रायः धातु और प्रत्यय या उपसर्ग के योग से बनते हैं। जैसे—सेवक, उपवन, प्रतिदिन, गया, दौड़ा आदि।

अपत्य बोधक, लघुताबोधक, कर्तृ बोधक, शब्द प्रायः यौगिक शब्द होते हैं।

2·1. अपत्यबोधक शब्द (Patronymics) जो यौगिक शब्द अपने मूल शब्द के अर्थ से उसकी सन्तान या उसका सम्प्रदायी या अनुयायी आदि अर्थ के सूचक हों, उन्हें अपत्यबोधक शब्द कहते हैं। जैसे—वासुदेव (वसुदेव का पुत्र), पाण्डव (पाण्डु क पुत्र), ईसाई (ईसा का अनुयायी)।

2·2. लघुता बोधक शब्द (Diminutives) जो यौगिक शब्द अपने मूल शब्द के अर्थ से छोटापन हलकापन, निरादरता, नीचता आदि अर्थ के सूचक हों, उन्हें लघुता बोधक शब्द कहते हैं।

जैसे—लुटिया (छोटा लोटा) चुहिया, खटिया, आदि।

2·3. कर्तृ बोधक शब्द (Words Denoting Doer or Agent) जो यौगिक शब्द किसी कार्य के कर्त्ता के सूचक हों, उन्हें कर्तृ बोधक शब्द कहते हैं; जैसे—भिखारी (भीख माँगने वाला), सेवक (सेवा करने वाला), दानी, परीक्षक आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यौगिक शब्द के दो भेद हैं—

(अ) **पुनरुक्तयौगिक शब्द** (Repeated or Double Derivatives)—जो शब्द दो समान यौगिक शब्दों या समान ध्वनि वाले शब्दों के योग से बनें। जैसे—घर-घर, धूम-धाम, खटाखट आदि। इनके दो उपभेद हैं—पूर्ण पुनरुक्त, अपूर्ण पुनरुक्त।

(ब) **अनुकरण सूचक यौगिक शब्द** (Imitative Derivatives)—जो शब्द किसी पदार्थ की यथार्थ या कल्पित ध्वनि को लेकर बनें। जैसे—खटाखट, चूँ-चूँ, भिन्न-भिन्न।

(3) **योगरूढ़ि शब्द** (Derived Primitives or words Having an Etymological as well as Special or Conventional Meaning)—जिन शब्दों की व्युत्पत्ति तो हो सके परन्तु उनका अर्थ व्युत्पत्ति से किसी एक ही अंश में मिले, सर्वथा न मिले उन्हें 'योगरूढ़ि' शब्द कहते हैं। जैसे—पंकज, पीताम्बर, लम्बोदर आदि।

शब्द रचना (Word Formation)—एक शब्द से कोई दूसरा शब्द बनाने की प्रक्रिया को 'शब्द रचना' कहते हैं।

शब्द रूपान्तर (Declension or Inflection of words)—शब्द के अर्थ में कुछ हेर-फेर करने के लिए उस शब्द के रूप में जो उपसर्ग या प्रत्यय लगाकर कुछ हेर-फेर किया जाता है, उसे 'शब्द रूपान्तर' कहते हैं।

शब्द रूपान्तर को ही 'रूप साधन' भी कहते हैं।

नोट—संज्ञाओं में लिंग, वचन और कारक के कारण सर्वनामों में वचन, पुरुष और कारक के कारण कुछ विशेषणों में लिंग, वचन और उनकी तुलनात्मक आदि अवस्था के कारण और क्रियाओं में वाच्य, काल, रीति, या अर्थ, पुरुष, लिंग और वचन के कारण रूपान्तर होता है।

शब्द वर्गीकरण (Classification of Words)—शब्दों की भिन्न-भिन्न जातियाँ बताने को 'शब्द वर्गीकरण' कहते हैं।

शब्द विचार—दे० व्याकरण।

शब्द व्युत्पत्ति (Tracing to the root or Throngh Proficiency of Words)—व्याकरण शास्त्र के आधार पर किसी शब्द के विशेष अर्थ जानने की शक्ति या विधि विशेष को या धातु को खोजने की क्रिया को 'शब्द व्युत्पत्ति' कहते हैं।

शब्द शास्त्र—व्याकरण को ही शब्द शास्त्र कहते हैं। दे० व्याकरण।

शब्द साधन—व्याकरण के उस विभाग को कहते हैं, जिसमें शब्दों के भेद (तथा उनके प्रयोग), रूपान्तर और व्युत्पत्ति का निरूपण किया जाता है। इस तरह इसके तीन भाग हैं—वर्गीकरण, रूपान्तर और व्युत्पत्ति।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शब्दांश—(A Syllable)—दो या अधिक अक्षरों से बने हुए शब्द के किसी विभाग को शब्दांश कहते हैं। किन्तु व्याकरण की परिभाषा में जो ध्वनि स्वयं कुछ अर्थ प्रकट न करे किन्तु अन्य शब्द से मिलकर सार्थक हो, उसे 'शब्दांश' कहते हैं। जैसे—स, अप, ता, पन, वान आदि।

उपसर्ग और प्रत्यय प्रायः शब्दांश ही होते हैं।

शुद्ध वाक्य (Correct Sentense)—साधु एवं शुद्ध वाक्य से अभिप्रायः केवल शब्दों या शब्दों और सहायक शब्दों के ऐसे समूह से होता है जिसके द्वारा कोई पूरी बात कही गई हो तथा जो व्याकरण के नियमों के अनुरूप और भाषा की सहज प्रकृति के अनुकूल हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ष

ष् —यह हिन्दी-वर्णमाला का इकत्तीसवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के अनुसार इसका उच्चारण-स्थान मूर्धा, आभ्यंतर प्रयत्न विवृत तथा बाह्य प्रयत्न विवार, श्वास और अघोष हैं। हिन्दी के विद्वानों ने हिन्दी की ध्वनियों में इसकी गणना नहीं की है। इसका कारण सम्भवतः यही है कि यह ध्वनि अब हिन्दी में शेष नहीं रह गई है। वस्तुतः कुछ संस्कृत शब्दों में ही इसका प्रयोग होता है, परन्तु इसका उच्चारण अब प्रायः तालव्य 'श' के समान ही होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स

स्—यह हिन्दी वर्णमाला का बत्तीसवाँ व्यंजन वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मतानुसार इसका उच्चारण स्थान दन्त, आभ्यन्तर प्रयत्न ईषद्विवृत (या विवृत) तथा बाह्य प्रयत्न महाप्राण, विवार, श्वास और अघोष हैं।

आधुनिक वैयाकरणों के अनुसार यह वर्त्स्य संघर्षी अघोष ध्वनि है।

डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार इसका उच्चारण जीभ की नोंक से वर्त्स्य स्थान को रगड़ के साथ छूकर किया जाता है। सामान्यतः इसे दंत्य स कहते हैं।

संकेत सूचक वाक्य—दे० वाक्य-भेद

संकेत वाचक विशेषण—दे० विशेषण

संकेत वाचक सर्वनाम—दे० सर्वनाम

संकेतार्थ—दे० अर्थ

संख्यावाचक विशेषण—दे० विशेषण

संघर्षी वर्ण—ऊष्म व्यंजन संघर्षी व्यंजन कहलाते हैं। (दे० ऊष्म)

संज्ञा (Noun or Substantive)—संज्ञा उस विकारी शब्द को कहते हैं, जिससे सृष्टि की किसी वस्तु या गुण आदि का नाम सूचित हो। संज्ञा के मूल भेद दो हैं—

(1) पदार्थवाचक संज्ञा, (2) भाववाचक संज्ञा।

1. **पदार्थवाचक संज्ञा** (Concrete Noun)—जिस संज्ञा से किसी ऐसे पदार्थ का या पदार्थ समूह का बोध हो जो सृष्टि में स्वयं अपनी कोई सत्ता रखता हो, अर्थात् जिसकी सत्ता किसी अन्य पदार्थ के आश्रित न हो, उसे पदार्थवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे—पुस्तक, ब्रह्म, सीमा, जल, वायु आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2. **भाववाचक संज्ञा** (Abstract Noun)—जिस संज्ञा से किसी ऐसी वस्तु या गुण आदि का बोध हो जिसकी सत्ता किसी अन्य पदार्थ के आश्रित ही रहे। जैसे—मित्रता, भलाई, गणित, बल। पदार्थवाचक संज्ञा के दो भेद हैं—

2·1. व्यक्तिवाचक संज्ञा (Proper Noun) जिस पदार्थवाचक संज्ञा से किसी एक ही पदार्थ या पदार्थ-समूह का बोध हो। ये बहुधा अर्थहीन होती हैं। जैसे—राम, गंगा, हिमालय, काशी आदि।

2·2. जातिवाचक संज्ञा (Common Noun) जो पदार्थवाचक संज्ञा से उसकी जाति के सम्पूर्ण पदार्थों का बोध हो। ये अर्थवान् होती हैं। जैसे—पुस्तक, नदी, पहाड़, मनुष्य आदि।

भाववाचक संज्ञा के सात भेद हैं—

2·2.1 जातिवाचक संज्ञाजन्म भाववाचक संज्ञा (Abstract Noun made by Common Noun) जो भाववाचक संज्ञा किसी जातिवाचक संज्ञा से बनी हो। जैसे—लड़कपन, मित्रता, पौरुष आदि।

2·2.2 विशेषण जन्य भाववाचक संज्ञा (Abstract noun made by Adjective) जो भाववाचक संज्ञा किसी विशेषण से बनी हुई हो, जैसे—भलाई, मिठास, गर्मी आदि।

2·2.3 क्रियाजन्य भाववाचक संज्ञा (Verbal Noun or Gerund) जो भाववाचक संज्ञा किसी क्रिया से बनी हो। जैसे—लिखावट, लेख, पढ़ाई आदि।

2·2.4 अव्ययजन्य भाववाचक संज्ञा (Abstract Noun made by Indeclinables) किसी अव्यय से बनी हुई संज्ञा को अव्ययजन्य भाववाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे—नित्यत्व, निकटता, समीपत्व आदि।

2·2.5 विद्या या कला बोधक संज्ञा (Names of Science or Art) जो भाववाचक संज्ञा किसी विद्या या कला का नाम हो। जैसे—वैद्यक, ज्योतिष, गणित, व्याकरण आदि।

2·2.6 मूल भाववाचक संज्ञा (Original Abstract Noun) जो भाववाचक संज्ञाएँ किसी अन्य संज्ञा या विशेषण या क्रिया से न बनी हों, और न विद्या बोधक ही हों, वे सभी मूल भाववाचक संज्ञा हैं। जैसे—पुण्य, पाप, धर्म, गुण, शक्ति, हर्ष आदि।

2·2.7 समानाधिकरण संज्ञा (Nouns in Apposition) दो साथ-साथ आने वाली एक ही कारक की संज्ञाओं में से जब एक संज्ञा दूसरी संज्ञा के अर्थ को केवल स्पष्ट करने के लिए आये तो उनमें से प्रत्येक को (अथवा दूसरी को पहिली की) समानाधिकरण संज्ञा कहते हैं। जैसे—राजा भोज, चौधरी राम सिंह, कवि कालिदास आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसी सर्वनाम के आगे आने वाली ऐसी संज्ञा को भी समानाधिकरण संज्ञा कहते हैं। जैसे— मैं रामलाल, मुझ रामसिंह, तुझ राधास्वरूप आदि।

संज्ञात्मक विशेषण—दे० विशेषण।

संदेहसूचक वाक्य—दे० वाक्य—वाक्य-भेद।

संदेहार्थ—दे० अर्थ—संदेहार्थ।

सन्धि (Joining or Conjunction of Letters)—दो निर्दिष्ट अक्षरों के पास-पास आकर मिल जाने और मिलकर विकृत रूप हो जाने को 'सन्धि' कहते हैं।

सन्धियों के प्रमुख भेद निम्नवत् हैं—

1. **स्वर सन्धि** (Conjunction of Vowels)—स्वर के साथ स्वर के मेल को 'स्वर सन्धि' कहते हैं। इसे ही अच् सन्धि भी कहा जाता है।

इसके प्रमुख उपभेद इस प्रकार हैं :—

1·1. **दीर्घ-सन्धि** (Conjunction of Long Vowels)—जहाँ दो सवर्ग ह्रस्व स्वर या ह्रस्व दीर्घ या दीर्घ ह्रस्व या दीर्घ-दीर्घ स्वरों के मेल से एक सवर्ग दीर्घ स्वर हो जाता है, तो ऐसे मेल को 'दीर्घ स्वर सन्धि' कहते हैं। जैसे—शब्द+अर्थ=शब्दार्थ। इसे दीर्घ स्वर सन्धि भी भी कहते हैं।

1·2. **गुण-सन्धि**—अ या आ के साथ इ ई उ ऊ ऋ ॠ में से किसी के मेल से होने वाले विकार या ए ओ अ को 'गुण' कहते हैं तथा 'अ' या 'आ' के साथ अगले 'इ' या 'ई' के मेल से 'ए' उ या इ के मेल से 'ओ' और ऋ या ॠ के मेल से 'अर्' हो जाने को 'गुण-सन्धि' कहते हैं। जैसे—देव+इन्द्र=देवेन्द्र।

1·3. **वृद्धि-सन्धि**—'अ' या 'आ' के साथ अगले ए, ऐ, ओ, औ में से किसी के मेल से होने वाले विकार या आ, ऐ, औ को वृद्धि कहते हैं और अ या आ के साथ अगले ए या ऐ के मेल से ऐ और ओ या औ के मेल से औ हो जाने को वृद्धि-सन्धि कहते हैं। जैसे—एक+एक=एकैक।

नोट—अ या आ के साथ अ या आ के मेल से आ, इ या ई के मेल से ऐ, उ या ऊ के मेल से औ, ऋ या ॠ के मेल से 'आर्' और ऌ के मेल से आल हो जाने को भी वृद्धि-सन्धि कहते हैं।)

1·4. **यण-सन्धि**—इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ के साथ अगले किसी असवर्ण (विजातीय) स्वर के मेल से होने वाले विकार को 'यण' कहते हैं। किसी असवर्ण स्वर के मेल से पूर्व के इ वर्ण (इ ई) को य्, उ वर्ण (उ ऊ) को व और ऋ वर्ण (ऋ ॠ) को र् हो जाने को यण-सन्धि कहते हैं। यण-सन्धि को ही 'यादि-सन्धि' भी कहते हैं। जैसे—यदि+अपि=यद्यपि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1·5. **अयादि सन्धि**—ए, ऐ, ओ, औ के साथ अगले किसी भिन्न स्वर के मेल से उनके स्थान में क्रम से अय्, आय् अव, आव् हो जाने को आयादि सन्धि कहते हैं। जैसे—ने+अन=नयन, ने+अक=नायक।

2. **व्यंजन सन्धि** (Conjunction of Consonents)—व्यंजन के साथ अगले व्यंजन के मेल को अथवा व्यंजन के साथ अगले स्वर के मेल को 'व्यंजन सन्धि' कहते हैं। जैसे—दिक्+गज=दिग्गज, अच्+अन्त=अजन्त।

3. **विसर्ग सन्धि** (Conjunction of Visarg)—विसर्ग के साथ अगले स्वर या व्यंजन के मेल को विसर्ग सन्धि कहते हैं। जैसे—निः+चल =निश्चल। धनुः+टंकार=धनुष्टंकार।

सन्धि स्वर—स्वर का एक प्रकार (दे० स्वर)

संयुक्त क्रिया (Compound verb)—धातुओं के कुछ विशेष कृदन्तों के आगे (विशेष अर्थ में) कोई क्रियाएँ जोड़ने से जो क्रियाएँ बनती हैं, उन्हें संयुक्त क्रियायें कहते हैं। (वि० दे० क्रिया, संयुक्त क्रिया)

संयुक्त क्रिया पद—जब (1) दो या दो से अधिक धातुओं या क्रिया पदों के योग से तथा (2) नामपद और धातु या क्रिया रूप के योग से, क्रिया पद बनता है, तो उसे संयुक्त क्रियापद कहते हैं। जैसे—

राम चला जाएगा।

(चल तथा जा धातुओं से बना संयुक्त क्रियापद)

संयुक्त क्रियापद के दो भेद हैं—

(1) मुख्य क्रियापद, (2) सहकारी क्रियापद।

संयुक्त क्रियापद के प्रथम धातु अथवा उससे बने क्रिया रूप को मुख्य क्रियापद और द्वितीय को सहकारी क्रियापद कहते हैं।

संयुक्त क्रिया विशेषण—दे० क्रिया विशेषण।

संयुक्त नाम धातु—दे० धातु।

संयुक्त व्यंजन—जब दो या अधिक व्यंजनों के बीच में स्वर नहीं रहता, तब उनको संयोगी या संयुक्त कहते हैं, जैसे—क्य, स्म, त्र। संयुक्त व्यंजन प्रायः मिलाकर लिखे जाते हैं। हिन्दी में प्रायः तीन से अधिक व्यंजनों का संयोग होता है, जैसे—स्तम (स्+त्+म+भ्+अ), मत्स्य, माहात्म्य।

जब किसी व्यंजन का संयोग उसी व्यंजन के साथ होता है, तब वह संयोग द्वित्व कहलाता है, जैसे—पक्का, सच्चा, अन्न।

संयोग में जिस क्रम से व्यंजनों का उच्चारण होता है, वे उसी क्रम से लिखे जाते हैं, जैसे—अन्त, यत्न, अशक्त, सत्कार।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्ष, त्र, ज्ञ जिन व्यंजनों के मेल से बने हैं, उनका कुछ भी रूप संयोग में दिखाई नहीं देता, इसलिए प्रायः उन्हें व्यंजनों के साथ वर्णमाला के अन्त में लिख देते हैं। क्ष, क्, और ष के मेल से, त्र, त्, और र के मेल से तथा ज्ञ, ज् और ञ के मेल से बनता है।

संयोग के कुछ भी नियम द्रष्टव्य हैं—

1. पाई (।) वाले आद्य वर्णों की पाई संयोग में गिर जाती है, जैसे—प्+य=प्य, थ्+य=थ्य।
2. ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, ह ये सात व्यंजन संयोग के आदि में भी पूरे लिखे जाते हैं और इनके अन्त का (संयुक्त) व्यंजन पूर्व वर्ण के नीचे बिना सिरे के लिख जाता है, जैसे—अङ्कुर, उच्छ्वास, मट्ठा, हड्डी, प्रह्लाद आदि।
3. कई संयुक्त अक्षर दो प्रकार से लिखे जाते हैं, जैसे—क्+क=क्क, या ल्+ल=ल्ल आदि।
4. यदि रकार के पीछे कोई व्यंजन हो तो रकार उस व्यंजन के ऊपर यह रूप (र्) धारण करता है, जिसे रेफ़ कहते हैं, जैसे—धर्म, सर्व, अर्थ। यदि रकार किसी व्यंजन के पीछे आता है, तो उसका रूप दो तरह से लिखा जाता है—

(अ) खड़ी पाई वाले व्यंजनों के नीचे र कार इस रूप (/) से लिखा जाता है, जैसे—चक्र, भद्र आदि।

(ब) दूसरे व्यंजनों के नीचे उसका (‸) यह रूप होता है, जैसे राष्ट्र पुंड्र आदि।

5. क् और त मिलकर क्त और त् और त मिलकर त्त होता है।
6. ङ्, ञ्, ण्, न्, म् अपने ही वर्ग के व्यंजनों से मिल सकते हैं; पर उनके बदले में विकल्प से अनुस्वार आ सकता है, जैसे—गङ्गा-गंगा, चञ्चल-चंचल, पण्डित-पंडित, दन्त-दंत, कम्प-कंप। कई शब्दों में इस नियम का भंग होता है, जैसे—वाङ्मय, मृणमय, धन्वन्तरि, सम्राट, उन्हें, तुम्हें आदि।
7. हकार से मिलने वाले व्यंजन कभी-कभी, भूल से उसके पूर्व लिख दिये जाते हैं; जैसे—चिन्ह (चिह्न) ब्रम्ह (ब्रह्म), (यह शुद्ध है)।

संयुक्त संधिस्वर—दे० स्वर-संधिस्वर।

संयुक्ताक्षर (Compound letter)—इसे संयोगी अक्षर भी कहते हैं। जब किसी शब्द में स्वर रहित व्यंजन के आगे कोई दूसरा व्यंजन आता है, तो पहले व्यंजन को अगले व्यंजन से मिला दिया जाता है। ऐसे दो या अधिक व्यंजनों के मेल से जो अक्षर बनता है, उसे संयुक्ताक्षर कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संयोगी क्रिया (Compound verb)—दे० क्रिया, संयुक्त क्रिया ।

संयोजक क्रिया विशेषण—दे० क्रिया विशेषण ।

संप्रदान कारक—दे० कारक—संप्रदान कारक ।

संवृत वर्ण—उच्चारण के समय मुख द्वार जिन वर्णों के उच्चारण में अत्यल्प खुलता है, उन्हें संवृत वर्ण कहते हैं, इ, ई, उ, ऊ, तथा ऋ संवृत स्वर हैं ।

संवृत विवृत वर्ण—दे० स्वरित ।

संवार नाद घोष व्यंजन—घोष व्यंजनों को ही संवार नाद घोष व्यंजन कहते हैं । (दे० घोष व्यंजन)

सकर्मक क्रिया—दे० क्रिया ।

सकर्मक धातु—दे० धातु ।

सजातीय अकर्मक क्रिया—दे० क्रिया ।

सजातीय कर्म—दे० कर्म ।

सजातीय स्वर—दे० स्वर ।

समाहार (Contraction or conciseness of two or more simple sentences)—दो या अधिक साधारण वाक्यों को संग्रह कर एक 'संकुचित वाक्य' (अथवा युक्तवाक्य या मिश्रवाक्य या संयुक्त वाक्य) बना देने को समाहार कहते हैं ।

समाहृत वाक्य (Contracted of concised sentence)—दो या अधिक साधारण वाक्यों का समाहार करके जो एक संकुचित वाक्य बनाया जाय उसे समाहृत वाक्य कहते हैं ।

समानाधिकरण विशेषण—दे० विशेषण ।

समानाधिकरण शब्द—जो शब्द या वाक्यांश किसी समानार्थी शब्द का अर्थ स्पष्ट करने के लिए वाक्य में आता है, उसे उस शब्द का समानाधिकरण शब्द कहते हैं ।

समानाधिकरण संज्ञा—दे० संज्ञा ।

समानाधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय—दे० अव्यय ।

समापिका क्रिया—दे० क्रिया ।

समास (Compound or aggregation)—दो या अधिक शब्दों के ऐसे योग को, जिसमें प्रत्ययों का लोप हो, समास कहते हैं । इसके मूल भेद 5 और उत्तर भेद 30 (1+18+4+6+1) या अनेक हैं ।

समास के मुख्य भेद इस प्रकार हैं—

1. **अव्ययी भाव समास** (Indeclinable compound or adverbial compound)—जिस समास में अव्यय का योग किसी अन्य शब्द के साथ होकर या दो समान शब्दों का योग (द्विरुक्ति) होकर समूचा सामसिक शब्द क्रिया विशेषण का काम दे । जैसे—प्रतिदिन, यथाशक्ति ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2. **तत्पुरुष समास** (Determinative compound)—जिस समास में उत्तर पद (दूसरा शब्द) की प्रधानता हो और कर्त्ता व सम्बोधन कारकों को छोड़कर शेष किसी भी कारक के लुप्त चिह्न सहित हो। इसके मूल भेद 2 तथा उत्तर भेद 18 हैं—

2·1. व्यधिकरण तत्पुरुष समास जिस तत्पुरुष समास का पूर्वपद कर्त्ता और सम्बोधन कारकों को छोड़कर शेष किसी कारक के लुप्त या प्रकट चिह्न सहित कोई संज्ञा हो और जिसके 'विग्रह' में उसके दोनों शब्दों में परस्पर निम्न विभक्तियाँ लगती हों। इसके प्रमुख उपभेद इस प्रकार हैं—

2·1.1. कर्म तत्पुरुष समास स्वर्ग प्राप्त (स्वर्ग को प्राप्त)।

2·1.2. करण तत्पुरुष समास ईश्वर दत्त (ईश्वर द्वारा दिया हुआ)।

2·1.3. सम्प्रदाय तत्पुरुष समास कृष्णार्पण (कृष्ण के लिए अर्पण)।

2·1.4. अपादान तत्पुरुष समास ऋण मुक्त (ऋण से मुक्त)।

2·1.5. सम्बन्ध तत्पुरुष समास राजपुत्र (राजा का पुत्र)।

2·1.6. अधिकरण तत्पुरुष समास ग्रामवास (ग्राम में का वसेरा) गृहस्थ (गृह में स्थित)।

2·1.7. अलुकतत्पुरुष समास जिस तत्पुरुष समास में पहले पद की विभक्ति का लोप नहीं होता। इस समास का प्रयोग केवल संस्कृत शब्दों ही में होता है। खेचर (आकाश में चलने वाला) युधिष्ठिर (युद्ध में स्थिर रहने वाला)।

2·1.8. उपपद तत्पुरुष समास जिस तत्पुरुष समास का दूसरा पद ऐसा कृदन्त हो जिसका स्वतन्त्र उपयोग न हो सके। जैसे—
ग्रन्थकार, तटस्थ, तिलचट्टा।

2·1.9. नत्रतत्पुरुष समास जो तत्पुरुष समास निषेधार्थ में शब्दों के पूर्व ऊ या अन् आदि लगाने से बने। जैसे—अधर्म, अनबन।

2·2. समानाधिकरण तत्पुरुष या कर्मधारय तत्पुरुष समास (Appositional compound) जिस तत्पुरुष समास के 'विग्रह' में उसके दोनों पदों के साथ एक ही कर्त्ताकारक की विभक्ति लगती है, और जिसमें अगले पद का विशेष्य-विशेषण भाव या उपमान-उपमेय-भाव सूचित होता है।

2·2.1. विशेष्य-विशेषणभाव सूचक कर्मधारय समास—

(क) विशेषण पूर्वपद कर्मधारय—पीताम्बर, नीलकमल।

(ख) विशेषण उत्तरपद कर्मधारय—देशान्तर, पुरुषोत्तम।

(ग) विशेषणोभयपद कर्मधारय—शीतोष्ण, श्यामसुन्दर।

(घ) संख्या पूर्वपद कर्मधारय या द्विगुसमास (Numeral compound) त्रिलोक, नवरत्न, षटपदी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(ङ) मध्यपद लोपी या लुप्तपद कर्मधारय घृतान्न (घृत मिश्रित अन्न) दही-बड़ा (दही मिश्रित बड़ा)

2·2.2. उपमानोपमेय भाव सूचक कर्मधारय समास—

(क) उपमान पूर्वपद कर्मधारय—चन्द्रमुख (चन्द्रसमान मुख) व्रजदेह।

(ख) उपमानोत्तर पद कर्मधारय—चरणकमल (कमल समान चरण)।

(ग) अवधारण पूर्वपद कर्मधारय—भवसागर पुरुषरत्न।

(घ) अवधारणोत्तर पद कर्मधारय—साधुसमाज, प्रयाग (प्रयाग रूपी साधु समाज)।

3. **द्वन्द्व समास** (Copulative compound) जिस समास में दोनों पद अथवा उनका समाहार प्रधान हो। इसके चार उपभेद हैं—

3·1. इतरेतर द्वन्द्व समास—जिस द्वन्द्व समास के दोनों पदों के मध्य 'और' शब्द का लोप हो। जैसे—ऋषि-मुनि, राधाकृष्ण।

3·2. समाहार द्वन्द्व समास—जिस द्वन्द्व समास में उसके पदों के अर्थ के अतिरिक्त उसी प्रकार के अर्थवाली अन्य वस्तुओं का भी समावेश हो सके। जैसे—सेठ साहूकार (सेठ और साहूकार और अन्याय धनी लोग भी) रुपया-पैसा आदि।

3·3. वैकल्पिक द्वन्द्व समास—जिस द्वन्द्व समास में दोनों पदों के मध्य 'या', 'वा' 'अथवा' इनमें से किसी शब्द का लोप हो और जिसमें प्रायः विरोधी शब्दों का मेल हो। जैसे—पुण्य-पाप, जात-कुजात, धर्माधर्म, हानि-लाभ।

3·4. एक शेष द्वन्द्व समास—जिस द्वन्द्व समास में दो या अधिक पदों के मेल से केवल एक ही पद शेष रहे। जैसे—पुत्रौ (पुत्र और पुत्री) बच्चे (बच्चा और बच्ची या बच्चे और बच्चियाँ)।

4. **बहुव्रीह समास** (Relative compound or attributive compound) जिस समास में कोई भी पद प्रधान नहीं होता किन्तु उसके पदों के योग से जो अर्थ सूचित हो, उस अर्थ वाला कोई अन्य विशेष पद का ग्रहण जिस समास हो।

जैसे—दशानन (दश आनन (मुख) वाला रावण) पंचानन (शिव)

इसके 6 भेद हैं—

4·1. कर्म बहुव्रीहि समास—धनप्राप्त (प्राप्त है धन जिसको)।

4·2. करण बहुव्रीहि समास—जितेन्द्रिय (जीती गई हैं, इन्द्रियाँ जिसके द्वारा)।

4·3. सम्प्रदान बहुव्रीहि समास—दत्त धन (दिया गया है धन जिसके लिए)।

4·4. अपादान बहुव्रीहि समास—दुर्बल (दूर हो गया है बल जिससे) सिर कटा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

4·5. सम्बन्ध बहुव्रीहि समास—दशानन (दश हैं आनन जिसके), बारह-सिंगा।

4·6. अधिकरण बहुव्रीहि समास—प्रफुल्ल कमल (प्रफुल्ल हैं कमल जिसमें) निष्कलंक, अधर्मी आदि।

इस समास के 1. तद्गुण संविज्ञान, और 2. अतद्गुण संविज्ञान, यह भी दो भेद हैं। जो समास ऐसे पदों के योग से बना हो जिनका अर्थ सूचक लक्षण उस समास-सूचक पदार्थ में दीख पड़े तो उसे 'तद्गुण संविज्ञान समास', कहते हैं। जैसे—दुर्बल, सिरकटा, दश मन आदि और जो समास ऐसे पदों के योग से बना हो जिनका अर्थ सूचक लक्षण उस समास सूचक पदार्थ में प्रत्यक्ष न हो, गुप्त रूप से हो; तो उसे 'अतद्गुण संविज्ञान समास' कहते हैं। जैसे—दत्त-धन, मथुरावासी, जयपुरिया आदि।

5. **केवल समास** (Mere compound) जिन समासों का कोई विशेष नाम नहीं है, वे सब केवल समास हैं।

समासपाद (या समस्त पद)—दो या अधिक पदों के संयोजन से बने संक्षिप्त पद को समास पद अथवा समस्त पद अथवा समस्त पद कहते हैं, जैसे—

काठ की पुतली=कठपुतली।
पानी की चक्की=पनचक्की।
जेब की घड़ी=जेबघड़ी।

रचना की दृष्टि से समास पदों के दो भेद हैं—

1. अविकारी समास-पद, 2. विकारी समास पद।

1. अविकारी समास पद—संयोजन के बाद जिनमें विकार न हो, जैसे—

रसोई+घर=रसोईघर।
काम+चलाऊ=कामचलाऊ।

2. विकारी समासपद—संयोजन के बाद जिनमें विकार आ जा जाता है, जैसे—

काठ+पुतली=कठपुतली।
आधा+कचरा=अधकचरा।

अर्थ की दृष्टि से समास-पदों के दो भेद हैं—

(1) अर्थ सिद्धि समास-पद, (2) अर्थ गर्भ समास पद।

1. **अर्थ सिद्धि समास पद**—जो अर्थ से सिद्ध हों, जैसे—
अधकचरा=आधा कचरा, मोलभाव=मोल और भाव।

2. **अर्थ गर्भ समास पद**—जिनके गर्भ में अर्थ छिपा हो, जैसे—
रसोई घर=रसोई बनाने का घर, लल मुँहा=वह जिसका लाल मुँह हो अर्थात् बन्दर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
विरुक्त पदों की गिनती समास पदों में ही होती है, क्योंकि वे अर्थ-गर्भ होते हैं और उनमें निरन्तरता, सदृश्यता, सर्वता, अधिकता, विविधता, विषयपरकता आदि की विवक्षा रहती है, जैसे—

मैं बैठे-बैठे थक गया हूं। (निरन्तरता)

संस्कृत की परम्परा के अनुसार रचना के विचार से समास पदों के चार भेद हैं—

(1) अव्ययी भाव, (2) तत्तपुरुष, (3) बहुव्रीहि, (4) द्वन्द्व।

समुच्चय बोधक अव्यय—दे० अव्यय

समुच्चय बोधक—निश्चय वाचक विशेषण—दे० विशेषण

सम्बन्ध कारक—दे० कारक

सम्बोधन कारक—दे० कारक

सम्भवनार्थ—दे० अर्थ

सम्बन्धवाचक सर्वनाम—दे० सर्वनाम

सम्बन्ध सूचक अव्यय—दे० अव्यय

असम्बद्ध सम्बन्ध सूचक अव्यय—दे० अव्यय

सर्वनाम (Pronoun)—सर्वनाम वह विकारी शब्द हैं जिनका प्रयोग पूर्वापर सम्बन्ध से किसी संज्ञा के बदले किया जाता है।

(1) **पुरुषावाचक सर्वनाम** (Personal Pronouns)—जिन सर्वनामों का प्रयोग उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष या अन्य पुरुष इन तीनों में से किसी के लिए किया जाय, उन्हें 'पुरुषवाचक' सर्वनाम कहते हैं।

(2) **सम्बन्धवाचक सर्वनाम** (Relative Pronouns)—जिन सर्वनामों से सम्बन्ध जाना जाय। जैसे—जो-सो, जो-वह, और उनके रूपान्तर जिसने-तिसने, जिसके-उसके, जिसको-तिसको इत्यादि।

(3) **प्रश्नवाचक सर्वनाम** (Interrogative Pronouns)—जिन सर्वनामों से प्रश्न का बोध हो। जैसे—कौन-क्या और इनके रूपान्तर किसने, किसको, किसका, किन, किन्होंने इत्यादि।

(4) **निश्चयवाचक सर्वनाम** (Demonstrative Pronouns)—जिन सर्वनामों से वक्ता के निकट की या दूर की किसी वस्तु का निश्चय हो या संकेत हो—यह, वह, वे, इस, उस, इन, उन। इसको संकेत वाचक सर्वनाम भी कहते हैं।

(5) **अनिश्चय वाचक सर्वनाम** (Indefinitive Pronouns)—जिन सर्वनामों से किसी विशेष वस्तु का निश्चय न हो। जैसे—कोई, कुछ और इनके रूपान्तर 'किसी ने', 'कोई भी' इत्यादि।

(6) **निजत्व वाचक सर्वनाम** (Reflexive Pronouns)—जिन सर्वनामों का प्रयोग वाक्य के कर्त्ता के अवधारणार्थ किया जाता है; जैसे—आप, स्वयं और आपके रूपान्तर अपने को, अपने से, आपही, अपने आप।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(7) **पारस्परिक सर्वनाम** (Reciprocal Pronouns)—जिस सर्वनाम का प्रयोग पारस्परिक व्यवहार करने में किया जाता है। जैसे—एक दूसरा। ऐसा शब्द हिन्दी भाषा में केवल एक यही है। कभी-कभी 'एक दूसरा' के स्थान पर 'परस्पर' या 'आपस में' इन शब्दों का भी प्रयोग होता है।

(8) **पृथकत्व वाचक सर्वनाम** (Distributive Pronoun)—पृथकत्व वाचक विशेषण का जब बिना विशेष के प्रयोग किया जाता है तो उसे पृथकत्व वाचक सर्वनाम कहते हैं। (दे० विशेषण—पृथकत्व वाचक)

श्री कामता प्रसाद गुरू जी ने सर्वनाम के छः भेद, प्रयोग के अनुसार माने हैं—

1. पुरुष वाचक—मैं, तू, आप (आदर सूचक)
2. निजवाचक—आप।
3. निश्चय वाचक—यह, वह, सो।
4. सम्बन्ध वाचक—जो।
5. प्रश्न वाचक—कौन, क्या।
6. अनिश्चय वाचक—कोई, कुछ।

हिन्दी के सब सर्वनाम प्राकृत के द्वारा संस्कृत से निकले हैं :—

संस्कृत	प्राकृत	हिन्दी
अहम्	अम्ह	मैं, हम
त्वम्	तुम्ह	तू, तुम
एव	एअ	यह, ये
सः	सो	सो, वह, वे
यः	जो	जो
कः	को	कौन
किम्	किम्	क्या
कोऽपि	कोपि	कोई
आत्मन्	अप्प	आप
किंचित	किंचि	कुछ

इस प्रकार हिन्दी में कुछ मिलाकर उपर्युक्त ग्यारह सर्वनाम हैं।

डा० बदरीनाथ कपूर ने ईनकी संख्या 15 बताई है, मैं और हमको वे अलग मानते हैं (अस्मे से व्युत्पन्न हम) इसी तरह तुमको वे 'युष्म' से व्युत्पन्न मान तू से अलग करते हैं तथा ये को 'एते' से व्युत्पन्न मानकर 'यह' से अलग करते हैं, और सो, वह, वे, मैं भी अंतर मानते हुए 'वे' को 'ते' से तथा 'वह' को 'तद्' से व्युत्पन्न मानते हैं।

सर्वनामपद—ऐसे नामपद को सर्वनाम पद कहते हैं, जो किसी नियत नाम का सूचक तो नहीं होता परन्तु जिसका प्रयोग प्रायः सभी नाम पदों के स्थान पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
होता है तथा जो सन्दर्भ से उनके अर्थ का वाचक, लिंग का सूचक और वचन का बोधक भी होता है। (दे० सर्वनाम)

सवर्ण स्वर (Homogeneous Veluvel)—दस समान स्वरों में से सामान स्थान और समान प्रयत्न से उत्पन्न होने वाले स्वरों को 'सवर्ण स्वर' या 'सवर्णी स्वर' कहते हैं। सवर्ण स्वर को ही 'सजातीय' स्वर भी कहा जाता है।

सहायक शब्द (Auxillary words)—सामान्यतया शब्द नाम, गुण या क्रिया के सूचक होते हैं, किन्तु जो शब्द नाम, गुण या क्रिया के सूचक तो नहीं होते परन्तु वाक्य-रचना में अवश्य सहयोगी होते हैं, उन्हें सहायक शब्द कहते हैं। जैसे—

आज ही राम ने मोहन और श्याम को स्टेशन से घर तक पहुँचाया।

शब्द—आज, राम, मोहन, श्याम, स्टेशन, घर, पहुँचाया।

सहायक शब्द—ही, ने, और, को, से, तक।

इस प्रकार विभक्तियों (परसर्गों), उपसर्गों, प्रत्ययों, निपातों, योजकों तथा विस्मयादि बोधक शब्दों की गिनती सहायक शब्दों में होती है।

साक्षर निरर्थक शब्द—दे० शब्द-शब्द भेद।

साक्षर सार्थक शब्द—दे० शब्द भेद।

साधु वाक्य—साधु वाक्य एवं शुद्ध वाक्य से अभिप्राय केवल शब्दों अथवा शब्दों और सहायक शब्दों के ऐसे समूह से होता है जिसके द्वारा कोई पूरी बात कही गई हो तथा जो व्याकरण के नियमों के अनुरूप और भाषा की सहज प्रकृति के अनुकूल हो। (दे० शुद्ध वाक्य)

साधारण क्रिया-विशेषण—दे० क्रिया-विशेषण।

सानुनासिक वर्ण—दे० अनुनासिक।

सानुनासिक स्वर—दे० अनुनासिक स्वर।

सान्त अपूर्णता सूचक भविष्य काल—दे० काल।

सान्त अपूर्णता सूचक द्वियौगिक काल—दे० काल।

सामान्य द्वियौगिक काल—दे० काल।

सामान्य त्रिकाल व्यापक या स्वभाव सूचक वर्तमान काल—दे० काल।

सामान्य भूतकाल—दे० काल।

सामान्य वर्तमान काल—दे० काल।

सामाजिक शब्द—दो या अधिक शब्दों के समास से जो स्वतन्त्र शब्द बनते हैं, उन्हें सामासिक शब्द कहते हैं; जैसे—प्रतिदिन, घुड़ दौड़, नील कमल आदि।

सार्थक शब्द—दे० शब्द।

सार्वनामिक विश्लेषण—पुरुष वाचक और निजवाचक सर्वनामों को छोड़कर शेष सर्वनामों का प्रयोग विशेषण के समान होता है। जब ये शब्द अकेले आते हैं, तब सर्वनाम होते हैं, और जब इनके साथ संज्ञा आती है, तब वे विशेषण होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अतः जो सर्वनाम विशेषण का काम दें वे सार्वनामिक विशेषण हैं। (दे० विशेषण)
व्युत्पत्ति के अनुसार इनके दो भेद हैं—मूल सर्वनाम, यौगिक सर्वनाम।

(दे० विशेषण—सार्वनामिक)

सुप्—संस्कृत संज्ञाओं या सर्वनामों के आगे लगाई जाने वाली 21 विभक्तियों या कारक चिह्नों को 'सुप्' या 'सुप्' प्रत्याहार कहते हैं।

सुबन्द पद (Inflective Base)—जिन शब्दों में विभक्ति लगाई जाती है, उन्हें 'विभक्ति पद' कहते हैं।

स्त्रीलिंग—दे० लिंग।

स्थान (Place)—मुख के जिस भाग से जिस अक्षर का उच्चारण होता है, उसे उस अक्षर का स्थान कहते हैं। स्थान भेद से वर्णों के 7 भेद हैं—

(1) कंठ्य, (2) तालव्य, (3) मूर्द्धन्य, (4) दंत्य, (5) ओष्ठ्य, (6) अनुनासिक, (7) कंठतालव्य, (8) कंठोष्ठ्य, (9) दंतोष्ठ्य। (दे० यथास्थान)

स्थानवाचक क्रिया विशेषण—दे० क्रिया विशेषण।

स्थान सूचक गुणवाचक विशेषण—दे० विशेषण।

स्थानीय क्रिया विशेषण—दे० क्रिया विशेषण।

स्थापना अक्षर—द्रव्याक्षर को स्थापनाक्षर कहते हैं। (दे० द्रव्याक्षर)

स्पर्श व्यंजन (Touch Consonants)/Plosive Consonents/Stop—33 व्यंजनों में से प्रारम्भ के क् से म् तक के 25 व्यंजन स्पर्श व्यंजन हैं। स्पर्श व्यंजन को 'स्पृष्ट व्यंजन' भी कहते हैं।

इन व्यंजनों के उच्चारण में उच्चारण करते समय जिह्वा का अग्रभाग मुख के किसी अवयव को स्पर्श करता है, इसीलिए इन्हें स्पर्श व्यंजन कहते हैं।

स्पर्श व्यंजनों के पाँच वर्ग हैं और प्रत्येक वर्ग में पाँच-पाँच व्यंजन हैं। प्रत्येक वर्ग का नाम पहले वर्ण के अनुसार रखा गया है—

क—वर्ग—क, ख, ग, घ, ङ।
च—वर्ग—च, छ, ज, झ, ञ।
ट—वर्ग—ट, ठ, ड, ढ, ण।
त—वर्ग—त, थ, द, ध, न।
प—वर्ग—प, फ, ब, भ, म।

स्पर्श संघर्षी (Affricate)—जिन व्यंजन वर्णों का उच्चारण करते समय जिह्वा का अग्रभाग मुख-विवर के किसी स्थान का स्पर्श भी करता है, तथा श्वास भी संघर्षण करते हुए निकलता है, उन्हें स्पर्श संघर्षी कहते हैं। च्, छ्, ज् एवं झ् स्पर्श संघर्षी व्यंजन हैं।

स्पृष्ट—दे० स्पर्श व्यंजन।

स्वभाव सूचक गुणवाचक विशेषण—दे० विशेषण।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर (Vowel)—जिन अक्षरों का अन्य किसी अक्षर की सहायता के बिना स्वतन्त्र रूप से उच्चारण किया जा राके और जो व्यंजनों के उच्चारण में सहायक होते हैं; उन्हें स्वर या स्वर वर्ण या स्वर अक्षर कहते हैं।

इन वर्णों का उच्चारण करते समय श्वास मुखविवर के कंठ, तालु आदि स्थानों से निर्बाध निकलता है।

हिन्दी में स्वर 18 माने गये हैं—

अ, आ, इ, ई, उ, इ, ऋ, ऋ, लृ, लृ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः। (श्रीकामता प्रसाद गुरु अ, अः को व्यंजन मानते हैं।) (दे० व्यंजन)

किन्तु आजकल मानव हिन्दी भाषा में ऋ, लृ, लृ, को छोड़कर शेष 13 स्वर अं और अः वास्तव में शेष स्वरों के समान स्वर न होने और व्यंजनों से भी समानता न रखने के कारण 'योगवाह' के नाम से अलग गिने जाते हैं। (दे०योगवाह)

इस प्रकार आज मानक हिन्दी में ये 11 स्वर हैं—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ।

(अ) उच्चारण के काल-मान के अनुसार स्वरों के तीन भेद हैं :—

1. लघुस्वर (Short vowel)—जिन स्वरों के उच्चारण में एक मात्रा का समय लगे उन्हें 'लघुस्वर' कहते हैं। अ, इ, उ, ऋ यह 4 लघुस्वर हैं। इन्हें ह्रस्वस्वर भी कहा जाता है।
2. गुरुस्वर (Long vowel)—जिन स्वरों के उच्चारण में दो मात्रा काल लगता है, उन्हें गुरुस्वर कहते हैं। आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ (अं अः) गुरुस्वर हैं—गुरुस्वर को 'दीर्घस्वर' भी कहते हैं।
3. प्लुतस्वर (Prolated vowel)—किसी गुरु स्वर के उच्चारण में जहाँ तीन मात्रा-काल लगें वहाँ उस स्वर को—'प्लुतस्वर' कहते हैं। जैसे—'ओम्' शब्द को उच्चारण करने में ओ का कुछ अधिक लम्बे स्वर से उच्चारण किया जाता है, अतः यहाँ और प्लुतस्वर है। प्लुतस्वराच्चारण करने की पहचान के लिये उस स्वर के आगे प्रायः 3 (तीन) का अंक लिख दिया जाता है। जैसे—ओ३म्।

प्लुत स्वर प्रायः प्राकृत व संस्कृत शब्दों में तो आते ही हैं, परन्तु हिन्दी भाषा में भी कभी-कभी किसी को पुकारते समय जिसे पुकारा जाय उसके नाम के अन्तिम भाग पर या विस्मयादि बोधक शब्दों पर (अथवा किसी अन्य शब्द पर भी) अधिक बल देते समय प्लुतस्वर का प्रयोग किया जाता है।

(ब) उत्पत्ति के अनुसार स्वरों के दो भेद हैं—

1. मूल स्वर (Primitive vowel)—जिन स्वरों की उत्पत्ति किसी अन्य स्वरों के मेल से नहीं हुई है, उन्हें मूल स्वर कहते हैं।
   सभी लघु स्वर मूल स्वर हैं। ये चार हैं—अ, इ, उ और ऋ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

2. सन्धि स्वर (Diphthong)—मूल स्वरों के मेल से बने हुए स्वरों को सन्धि स्वर कहते हैं। सभी गुरु (दीर्घ) स्वर सन्धि स्वर ये हैं—आ, ई, ए, ऐ, ओ, औ आदि।

सन्धि स्वरों के दो भेद हैं—

2·1. दीर्घ सन्धि स्वर (Long diphthong)—किसी एक मूल स्वर में उसी मूल स्वर के मिलने से जो स्वर बनता है, उसे दीर्घ सन्धि स्वर कहते हैं। जैसे—अ+अ=आ, इ+इ=ई।

2·2. संयुक्त सन्धि स्वर (Mixed diphthong)—भिन्न-भिन्न मूल स्वरों के मेल से जो स्वर बनते हैं, उन्हें संयुक्त संधि स्वर कहते हैं।

जैसे—अ+इ=ए। अ+उ=ओ (आ+ए=ऐ)।

इस प्रकार कुल 6 संयुक्त स्वर हैं।

(स) जाति के अनुसार स्वरों के दो भेद हैं—

1. **सवर्ण स्वर** (Homogeneons vowel)—सजातीय स्वर, दस समान स्वरों में से समान स्थान, समान प्रयत्न से उत्पन्न होने वाले स्वरों को 'सवर्ण स्वर' या 'सवर्णी स्वर कहते हैं। इन्हें समान स्वर भी कहा जाता है।

2. **असवर्ण स्वर** (Non-homogeneous vowel)—जिन स्वरों के स्थान और प्रयत्न समान नहीं हैं, वे असवर्ण स्वर' कहलाते हैं। जैसे—अ, इ, अ, उ, इ, उ आदि। परस्पर असवर्ण स्वर हैं। ए, ऐ, ओ, औ भी असवर्ण स्वर हैं क्योंकि रे अन्य असवर्ण स्वरों से ही बने हैं।

असवर्ण स्वरों को ही असवर्णी स्वर, विजातीय स्वर, असमानस्वर भी कहते हैं।

(द) उच्चारण के अनुसार स्वरों के दो भेद हैं—

1. **अनुनासिक स्वर** (Nasal vowel) या सानुनासिक स्वर—जिन स्वर वर्णों का उच्चारण करते समय यदि कुछ श्वास नासिका से भी निकले, उन्हें अनुनासिक या सानुनासिक स्वर कहते हैं या नासिक्य भी। अनुनासिक स्वर का चिह्न (ँ) चन्द्रबिन्दु कहलाता है, जैसे—गाँव, ऊँचा।

अनुस्वार और अनुनासिक व्यंजनों के समान चन्द्र बिन्दु कोई स्वतन्त्र वर्ण नहीं है, वह केवल अनुनासिक स्वर का चिह्न है।

2. **निरनुनासिक स्वर (अननुनासिक स्वर)**—जिन स्वरों का शुद्ध उच्चारण नासिका की सहायता के बिना किया जाता है, उन्हें निरनुनासिक (अननुनासिक) स्वर कहते हैं। इनके उच्चारण में मुँह का पूरा श्वास निकलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टिप्पणी—नामीस्वर—सोलह स्वरों में (ऋ, ॠ, और ऌ, ॡ सहित) पहले दो स्वर, अ, आ और अन्त के दो स्वर अं, अः को छोड़कर शेष बारह स्वर 'नामीस्वर' कहलाते हैं। स्वरों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

1. अ वर्ण—अ, आ, इन दो अक्षरों को अ वर्ण कहते हैं।
2. इ वर्ण—इ, ई को इ वर्ण कहते हैं।
3. उ वर्ण—उ ऊ को उ वर्ण कहते हैं।
4. ऋ वर्ण—ऋ ॠ को ऋ वर्ण कहते हैं।
5. ऌ वर्ण—ऌ ॡ को ऌ वर्ण कहते हैं।

का० प्र० गुरु ने हिन्दी-स्वरों से सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य कुछ नियम इस तरह बताये हैं—

(अ) हिन्दी में अंत्य अ का उच्चारण प्रायः हल के समान होता है, जैसे—गुण, रात, धन इत्यादि। इस नियम के कई अपवाद हैं—

1. यदि अकारान्त शब्द का अंत्याक्षर संयुक्त हो तो अंत्य का उच्चारण पूरा होता है; जैसे—सत्य, इन्द्र, गुरुत्व, सन्न, धर्म, अशक्त आदि।
2. इ, ई और ऊ के आगे य हो तो अंत्य अ का उच्चारण पूर्ण होता है, जैसे—प्रिय, सीय, राजसूय आदि।
3. एकाक्षरी अकारान्त शब्दों के अन्त्य अ का उच्चारण पूरा-पूरा होता है, जैसे—न, व, र इत्यादि।
4. (क)—कविता में अंत्य अ का पूर्ण पूर्ण उच्चारण होता है, जैसे—'समाचार लक्ष्मण पाये', परन्तु जब इस वर्ण पर यति (विश्राम) होती है, तब इसका उच्चारण बहुधा अपूर्ण होता है, जैसे—'कुन्द इन्दु सम देह उमारमन करुणा अयन।

(ख)—दीर्घ स्वरान्त त्र्यक्षरी शब्दों में यदि दूसरा अक्षर अकारान्त हो, तो उसका उच्चारण अपूर्ण होता है; जैसे—बकरा, कपड़े, करना, बोलना, तानना आदि।

(ग)—चार अक्षरों के ह्रस्व स्वरान्त शब्दों में यदि दूसरा अक्षर अकारान्त हो तो उसके अं का उच्चारण अपूर्ण होता है, जैसे—गड़बड़, देवधन, सुरलोक। अपवाद—यदि दूसरा अक्षर संयुक्त हो अथवा पहला अक्षर कोई उपसर्ग हो तो दूसरे अक्षर के अ का उच्चारण पूर्ण होता है। जैसे—पुत्रलाभ, धर्महीन, आचरण, प्रचलित।

(घ)—दीर्घ स्वरान्त चार अक्षरी शब्दों में तीसरे अक्षर के अ का उच्चारण अपूर्ण होता है, जैसे समझाना, निकलना, सुनहरी, कचहरी।

(ङ)—यौगिक शब्दों में मूल अवयव के अंत्य अ का उच्चारण आधा (अपूर्ण) होता है, जैसे—देवधन, सुरलोक, अन्नदाता, सुखदायक, शीतलता, मनमोहन, लड़कपन आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5. हिन्दी में ऐ और औ का उच्चारण संस्कृत से भिन्न होता है। तत्सम शब्दों में इनका उच्चारण संस्कृत के ही अनुसार होता है; हिन्दी में ऐ बहुधा अम् और औ बहुधा अव् के समान बोला जाता है, जैसे—
संस्कृत—ऐश्वर्य, सदैव, पौत्र, कौतुक इत्यादि।
हिन्दी—है, मेल, और, चौथा, इत्यादि।

ए और ओ का उच्चारण कभी-कभी क्रमशः इ और ए तथा उ और ओ का मध्यवर्ती होता है, जैसे—इकट्ठा (एकट्ठा), मिहतर (मेहतर), उसीसा (ओसीसा) गुबरैला (गोबरैला)।

6. उर्दू और अंग्रेजी के अक्षरों का उच्चारण दिखाने के लिए, अ, आ, इ, उ आदि स्वरों के साथ बिन्दी और अर्द्धचन्द्र लगाते हैं, जैसे—इल्म, उम्र, लाड़ी इन चिह्नों का प्रचार सार्वदेशिक नहीं है और किसी भी भाषा में विदेशी उच्चारण पूर्ण रूप से प्रकट करना है कठिन भी होता है।

स्वर सन्धि—दे० सन्धि, स्वर सन्धि।

स्वराघात—शब्दों के उच्चारण में अक्षरों पर जो जोर (धक्का) लगता है उसे स्वराघात कहते हैं। (दे० आघात तथा बलाघात)।

स्वरित (Circumflexively accented vowel)—जब कोई स्वर वर्ण उदात्त प्रयत्न से प्रारम्भ होकर अनुदात्त प्रयत्न पर समाप्त हो तो उसे स्वरित या 'स्वरितप्रयत्नोच्चरित स्वर' कहते हैं।

स्वरित प्रयत्न (Circumflexive effort)—जिस बाह्य प्रयत्न से स्वरित स्वर बोला जाय उसे स्वरित प्रयत्न कहते हैं।

अ, इ, उ, ऋ चार स्वरों में से प्रत्येक स्वरों में से प्रत्येक स्वर ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत भेदों से तीन-तीन प्रकार के हैं और ए ऐ ओ औ इन चारों में प्रत्येक स्वर दीर्घ और प्लुत् भेदों से दो-दो प्रकार के हैं। (और ऌ स्वर भी ह्रस्व और प्लुत भेदों से दो प्रकार का है)। अतः उच्चारण के बाह्य प्रयत्न की अपेक्षा प्रत्येक भेद का स्वर उदात्त, अनुदात्त और स्वरित होने से अ, इ, उ, ऋ में से प्रत्येक वर्ण के नौ-नौ भेद और ए ऐ ओ औ और ऌ में से एत्येक वर्ण के छः छः भेद हैं। ये सभी सानुनासिक और निरनुनासिक हो सकने से अ इ उ ऋ में से प्रत्येक स्वर के 10 भेद और ए ऐ औ औ और ऌ में से प्रत्येक स्वर के 12 भेद हो जाते हैं। इस प्रकार सभी स्वरों के (अनुस्वार और विसर्ग को छोड़कर, 14 स्वरों के) सभी उच्चारण संस्कृत और प्राकृत भाषाओं में 132 ($18 \times 4 + 12 \times 5 = 72 + 60 = 132$) प्रकार के हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ह

ह्—यह हिन्दी-वर्णमाला का तेतीसवाँ व्यंजन-वर्ण है।

संस्कृत वैयाकरणों के मत से इसका उच्चारण-स्थान कंठ, आभ्यन्तर प्रयत्न ईषा द्विवृत (या विवृत) और बाह्य प्रयत्न महाप्राण; संवार, नाद और घोष है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार यह स्वरयंत्रमुखी, घोष, संघर्षी ध्वनि है। बाबूश्यामसुन्दरदास के अनुसार इसके उच्चारण में जीभ, तालु अथवा होठों से सहायता नहीं ली जाती। हवा के वेग से संघर्ष (रगड़) के साथ निकलने पर इसका उच्चारण होता है, इसी से इसे संघर्ष ध्वनि कहते हैं। अन्यथा इस रगड़ के सिवा इसमें अ के ही समान मुखावयव रहते हैं। डॉ० बाबूराम सक्सेना के अनुसार शब्द के अन्त में आने वाला ह् घोष रहता है।

अघोष ह् को ही विसर्ग या ह् कहते हैं। महाप्राण ध्वनियों घ, झ, ढ, भ और म में घोष ह् पाया जाता है।

हल्—व्यंजन को हल् भी कहते हैं। (दे० व्यंजन)

हल् चिह्न—दे० व्यंजन चिह्न।

हेतु हेतुमत्—संकेत सूचक वाक्य को ही 'हेतु हेतुमत्' वाक्य कहते हैं। दे० वाक्य-संकेत सूचक वाक्य।

हेतु हेत्वार्थ—दे० अर्थ-हेतु हेत्वार्थ या संकेतार्थ।

ह्रस्व स्वर (Short vowel)—दे० स्वर-लघुस्वर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्ष, त्र और ज्ञ

क्ष, त्र और ज्ञ—कुछ विद्वान इन्हें देवनागरी वर्णमाला के अन्त में रखते हैं। वस्तुतः ये संयुक्त व्यंजन हैं। अर्थात्—

क्ष=क्+ष
त्र=त्+र
ज्ञ=ज्+ञ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी-व्याकरण—रचना का क्रमिक विकास

हिन्दी-व्याकरण—ग्रन्थों के प्रणयन की परम्परा अधिक प्राचीन नहीं है। जब हिन्दी के स्वरूप का चिन्तन आरम्भ हुआ, तभी से इसके व्याकरण-ग्रन्थ की आवश्यकता का अनुभव किया गया। बल्कि कहना चाहिए कि हिन्दी-व्याकरण का निर्माण-कार्य, हिन्दी-भाषा के उद्भव के लगभग सात सौ वर्ष बाद, सत्रहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में, हिन्दी गद्य के सूत्रपात के साथ-ही-साथ प्रारम्भ हुआ। उसके पूर्व हिन्दी व्याकरण के प्रणयन की ओर विद्वानों का ध्यान आकृष्ट नहीं होने के अनेक कारणों में से दो मुख्य थे—पहला यह कि उस समय तक हिन्दी गद्य के साहित्यिक रूप का विकास नहीं हो पाया था और दूसरा यह कि देववाणी संस्कृत की तुलना में लोकवाणी (आधुनिक आर्य भाषाओं) का महत्त्व आचार्यों की दृष्टि में उस समय भी नगण्य ही था। इन्हीं कारणों से जहाँ रामानन्द, नागेश भट्ट, पण्डितराज जगन्नाथ आदि अनेक आचार्यों ने संस्कृत-व्याकरण-सम्बन्धी अनेक रचनाएँ कीं, वहाँ हिन्दी आदि आधुनिक भाषाओं की ओर उस समय तक किसी का ध्यान नहीं गया।[1]

हमारे यहाँ संस्कृत-व्याकरण की एक सुदृढ़ परम्परा रही है। ऐसा होते हुए भी, यह बड़े आश्चर्य की बात है कि हिन्दी-व्याकरण का निर्माण-कार्य सर्वप्रथम यूरोपीय विद्वानों के द्वारा प्रारम्भ किया गया था। हाँ, यह बात अलग है कि बाद में यूरोपीय विद्वानों के पाश्चात्य व्याकरणिक ढाँचे को तोड़कर अनेक भारतीय वैयाकरणों ने उसे संस्कृत-व्याकरण के अनुरूप बनाने का प्रयास किया। इस तरह, वर्तमान युग तक हिन्दी-व्याकरण के निर्माण में पाश्चात्य तथा भारतीय दोनों ही व्याकरणों की शास्त्रीय परम्पराओं का सम्मिलित योगदान रहा है।

हिन्दी का प्रथम व्याकरण

हिन्दी-व्याकरण के विकास-क्रम का विधिवत् इतिहास प्रायः उपेक्षित सा रहा है। इस ओर सर्वप्रथम ध्यान पं० कामताप्रसाद गुरु ने दिया, और उन्होंने आवश्यकता महसूस करते हुए लिखा कि "हिन्दी-व्याकरण का प्रारम्भिक इतिहास

---

1. द्रष्टव्य—आचार्य किशोरीदास बाजपेयी, 'हिन्दी शब्दानुशासन' में डॉ० श्रीकृष्णलाल का प्रकाशकीय वक्तव्य, पृष्ठ-1।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अन्धकार में पड़ा हुआ है। हिन्दी-भाषा के पूर्वरूप 'अपभ्रंश' का व्याकरण हेमचन्द्र ने बारहवीं शताब्दी में लिखा, पर हिन्दी-व्याकरण के प्रथम आचार्य का पता नहीं लगता।"[2]

इधर इस दिशा में कुछ कार्य हुआ है। इस क्षेत्र में वैज्ञानिक शोध का श्रेय डॉ० अनन्त चौधरी को दिया जाना चाहिए, जिन्होंने "हिन्दी-व्याकरण का इतिहास" प्रस्तुत कर हिन्दी-व्याकरण के इतिहास को व्यवस्थित करने का कार्य किया है।

हिन्दी के आदि वैयाकरण कौन थे, उनका व्याकरण कौन-सा था और कब लिखा गया? इन प्रश्नों का समुचित उत्तर देने के लिए डॉ० चौधरी ने प्रमाण जुटाने का यत्न किया है, लेकिन निश्चित एवं पुष्ट प्रमाणों के अभाव में वे इटली के प्रसिद्ध विद्वान् एमिल्यो तेत्सा, इंगलैंड के डॉ० जार्ज ग्रियर्सन तथा भारत के डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी के साक्ष्य के आधार पर वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि अद्यावधि ज्ञात हिन्दी-वैयाकरणों में सर्वाधिक प्राचीन हालैंड निवासी जोहन जोशुआ केटेलर माना जा सकता है, जिनका 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' सन् 1698 ई० में या उसके कुछ वर्ष पूर्व लिखा गया था।[3]

डॉ० उदय नारायण तिवारी ने भी 'हिन्दुस्तानी भाषा' (केटेलर के व्याकरण का सही नाम) को हिन्दी का प्रथम व्याकरण बनाया है, जिसका प्रणयन सन् 1698 में आगरे में हुआ था।[4] लेकिन, एक बात हम कहना चाहेंगे, जो डॉ० चौधरी ने भी स्वीकार की है, कि हिन्दी-व्याकरण के निर्माण की परम्परा केटेलर के भारत आगमन से पूर्व ही शुरू हो चुकी थी। जब अकबर और जहाँगीर के समय में खड़ीबोली भिन्न-भिन्न प्रदेशों में शिष्ट समाज के व्यवहार की भाषा हो चली थी, तब ऐसा कैसे सम्भव है कि उसका कोई व्याकरण न बना हो?

केटेलर से पूर्व हिन्दी-व्याकरण

जोहन जोशुआ केटेलर का 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' 1680-1698 ई० के लगभग निकला था।[5] मूल ग्रन्थ डच भाषा में लिखा गया था। इसका लैटिन अनुवाद डेविड मिल के द्वारा सन् 1747 ई० में लीडन नगर में प्रस्तुत किया।

---

2. पं० कामताप्रसाद गुरु "हिन्दी-व्याकरण", भूमिका, पृष्ठ-5।
3. डॉ० अनन्त चौधरी : "हिन्दी-व्याकरण का इतिहास", (बिहार ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1972) पृष्ठ 159।
4. डॉ० चटर्जी ने इसका रचनाकाल 1715 ई० माना है, डॉ० ग्रियर्सन ने भी। डॉ० चौधरी ने 1695-1679 ई० के बीच। कृष्णाचार्य ने 1680-1698 के बीच।
5. डॉ० उदयनारायण तिवारी, सम्मेलन पत्रिका, भाग-64 अंक 1-4, में लेख, पृ० 160।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस व्याकरण से पूर्व हिन्दी की बोलियों और उर्दू में, जो हिन्दी की ही एक शैली रही है, के व्याकरण प्रचुर मात्रा में लिखे जा चुके थे। ऐसा पहला व्याकरण संग्रामसिंह नामक किन्हीं लेखक का सन् 1279 ई० का लिखा हुआ मिलता है जो "बाल-शिक्षा" नाम से जाना जाता है। यह राजस्थानी हिन्दी भाषा का एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है, जो बच्चों को व्याकरण की शिक्षा देने के लिए लिखा गया था। व्याकरण पर लिखी गई कृतियों की परम्परा का श्रीगणेश इसी ग्रन्थ से माना जा सकता है।

इसके बाद राजस्थानी के द्वारा संस्कृत व्याकरण को सरलता से समझाने के लिए कुलमडन सूरि द्वारा सन् 1393 ई० में प्रणीत "मुग्धावोध औक्तिक" नामक व्याकरण-रचना का उल्लेख मिलता है। ऐसे ही 'औक्तिक' या 'उक्ति संग्रह', नाम से कई और ग्रन्थों का उल्लेख हमें मिल जाता है, यथा—सोमप्रथ सूरि की रचना "औक्तिक" (सन् 1445 ई०), तिलक द्वारा रचित "उक्ति संग्रह" (अनुमानतः 1445 ई०), पं० दामोदर कृत "उक्ति व्यक्ति प्रकरण" (सन् 1150 ई० के लगभग) आदि।

इन व्याकरणनुमा ग्रन्थों के बाद "ब्रजभाषा का परिचयात्मक व्याकरण" नाम से विख्यात मिर्जा खाँ का व्याकरण "तुहफ्तुल-ए-हिन्द" मिलता है, जिसका अनुमानित समय सन् 1675-76 ई० है।

फारसी में लिखे ग्रन्थ का अंग्रेजी अनुवाद फखरुद्दीन अली मुहम्मद के पुत्र मि० जियाउद्दीन ने प्रो० विश्वभारती संस्थान कलकत्ता से 1935 ई० प्रकाशित किया। अनुवादक ने पुस्तक का रचनाकाल सन् 1675 अथवा उससे कुछ वर्ष पूर्व माना है, जबकि डा० चटर्जी ने 1605 ई० के आसपास (सम्राट अकबर की मृत्यु के निकट)। इस ग्रन्थ की एक प्रति फ्रान्स में भी है। मूल प्रति इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी लन्दन में संरक्षित है।

इस ग्रन्थ के व्याकरणिक दृष्टि से लिखे गए भाग में सर्वप्रथम हिन्दी ध्वनियों और उसकी विशेषताओं पर विचार किया गया है। तत्पश्चात् हिन्दी ध्वनियों की संख्या तथा क्रम और अरबी-फारसी में उनकी पहचान के चिह्न दिए गए हैं। तीसरे खण्ड में स्वरों के चिह्न और उनसे सम्बन्धित व्याकरणिक चिह्नों की चर्चा हैं। चौथे और अन्तिम खण्ड में व्यंजनों के साथ प्रयुक्त स्वर, उनके प्रकार तथा विशेषताएँ और भाषा के व्याकरणिक नियम दिये गए हैं, जिनमें शब्द, सर्वनाम, उपसर्ग, प्रत्यय आदि पर प्रकाश डाला गया है।

व्याकरण—रचना के प्रारम्भिक चरण में ऐसे ग्रन्थ की रचना कम महत्त्व नहीं रखती। फिर इस ग्रन्थ को हिन्दी का पहला व्याकरण स्वीकार न करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता। जोहन जोशुवा केटेलर के योगदान को अस्वीकार न करते हुए, हम मिर्जा खाँ के "ब्रजभाषा का परिचायात्मक व्याकरण" (तुहफ्तुल-ए हिन्द) को ही हिन्द का प्रथम व्याकरण-ग्रन्थ स्वीकार करने का आग्रह करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी-व्याकरण का इतिहास

काल-विभाजन—हिन्दी-व्याकरण के स्वरूप-विकास का सम्यक् अध्ययन करने की दृष्टि से काल-विभाजन आवश्यक है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए कुछ विद्वानों ने इस ओर ध्यान दिया भी है। हिन्दी-व्याकरण के इतिहास का पहली बार विस्तृत और अनुसन्धानपरक अध्ययन करने वाले विद्वान् डॉ० अनन्त चौधरी ने हिन्दी-व्याकरण के सम्पूर्ण इतिहास के लगभग तीन सौ वर्षों की अवधि को पाँच काल खण्डों में विभाजित किया है[6]—

1. आरम्भ-काल : लगभग सन् 1676-1855 ई०।
2. विकास-काल : सन् 1855-1876 ई०।
3. उत्थान-काल : सन् 1876-1920 ई०।
4. उत्कर्ष-काल : सन् 1920-1947 ई०।
5. नवचेतना-काल : सन् 1947 से वर्तमानकाल तक।

डॉ० चौधरी अपने इस काल-विभाजन के औचित्य के लिए कई तर्क देते हैं। वे कहते हैं कि हिन्दी व्याकरणेतिहास के उपर्युक्त कालखण्डों में प्रत्येक के साथ व्याकरण के स्वरूप—विकास की क्रमशः स्पष्ट होती जाने वाली विभिन्न रेखाओं का घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रत्येक काल-खण्ड का प्रारम्भ एवं समाप्ति किसी विशेष प्रवृत्ति, विशेष उद्देश्य तथा विशिष्ट वैयाकरणों की प्रभावावधि के प्रारम्भ एवं समाप्ति के साथ संलग्न है। उक्त काल-विभाजन में एतद्विषयक प्रायः सभी सम्भव आधारों के सामञ्जस्य पर ध्यान रखा गया है। किन्तु, जहाँ तक काल खण्डों के नामकरण का सम्बन्ध है; यह सम्भव नहीं है कि किसी काल-खण्ड का कोई एक ऐसा नाम दिया जाय, जिसमें सभी आधारों का सामञ्जस्य है। इसलिए, भिन्न-भिन्न आधारों पर प्रत्येक काल-खण्ड के अनेक नाम सम्भव हैं। उपर्युक्त नामकरण में हमने हिन्दी व्याकरण के स्वरूप में क्रमिक रूप से होने वाले विकास को आधार बनाया है।[7]

डॉ० केहरसिंह चौहान ने अपने पी० एच० डी० उपाधि के शोध प्रबन्ध में[8] डॉ० चौधरी के उपर्युक्त काल विभाजन की त्रुटियों पर विचार करते हुए अपना नया काल विभाजन प्रस्तुत किया है। उन्होंने डॉ० चौधरी के काल विभाजन में निम्नलिखित न्यूनताएँ घोषित की हैं—

(1) इस काल-विभाजन में 'उत्कर्षकाल' भी माना गया है। सम्भवतः गुरुजी के हिन्दी व्याकरण को ही प्रामाणिक मान लेने के फलस्वरूप ऐसी मान्यता

---

6. डॉ० अनन्त चौधरी, हिन्दी व्याकरण का इतिहास, पृष्ठ 157।
7. वही, पृष्ठ 157।
8. द्रष्टव्य, डॉ० केहरसिंह चौहान का शोध प्रबन्ध "हिन्दी व्याकरण का उद्भव और विकास" (गुरुकुल काँगड़ी विश्व वि०, हरिद्वार 1975) (अप्रकाशित)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थापित कर दी गई है, जबकि गुरुजी ने स्वयं अपनी दुर्बलताओं की ओर संकेत किया है। यही नहीं, यदि भाषा प्रभाकर के संशोधक व्यास जी तथा मा० प्र० पाठक की उक्तियाँ 'उत्थानकाल' मानने में भी साधक सिद्ध नहीं होती। अभी तो हिन्दी व्याकरण अपने विकास काल के मध्य युग से ही गुजर रहा है। उसका उत्कर्ष आना शेष है, अर्थात् हिन्दी व्याकरण का मानकीकरण अभी पूर्ण नहीं हो पाया है।

(2) काल विभाजन में डॉ० चौधरी से दो प्रकार की भूलें रह गई हैं। प्रथम तो यह कि 1676 ई० से आरम्भ काल मानने के पूर्व की स्थिति पर साधारण संकेतात्मक प्रकाश ही डाला है। उस स्थिति पर अधिक विचार करना आवश्यक था। यह ठीक है कि "साहित्य गृहीत अपभ्रंश" से खड़ी बोली हिन्दी का जन्म मानने पर विद्वानों में मतैक्य नहीं है, किन्तु न तो इस सम्बन्ध में और न पूर्ववर्ती अपभ्रंश के जिन व्याकरणिक रूपों से हिन्दी के व्याकरणिक रूपों का सम्बन्ध है, उनका कोई उल्लेख किया गया है। पूर्व स्रोत के रूप में "अपभ्रंश" के व्याकरणों की नामावली और संक्षिप्त विवेचन उस आवश्यकता की पूर्ति नहीं करता।

दूसरा दोष यह आ गया है कि काल-विभाजन में पाँच कालों में विभाजन सरलता की दृष्टि से तो भले ही ग्राह्य घोषित कर दिया जाय किन्तु कालावधि की व्याप्ति को दृष्टि में रखते हुए उनका काल-विभाजन युक्तियुक्त नहीं लगता। विकास-काल के लिए केवल 25 वर्ष और उत्थान काल के लिए 45 वर्ष मानना उचित और तर्क संगत नहीं है।

वास्तव में हिन्दी व्याकरण पर लिखी गई पुस्तकों के समय, आधार तथा शैली आदि को दृष्टि में रखकर उनका अनेकविध वर्गीकरण सम्भव है। डॉ० चौधरी ने काल-विभाजन का विशेष रूप से उल्लेख किया है, किन्तु अन्य आधारों में से कुछ की संकेत-मात्र चर्चा कर दी है। जिससे ग्रन्थों के अनेकविध वर्गीकरण की स्थिति स्पष्ट रूप से सामने नहीं आती। डॉ० केहरसिंह चौहान के मत से हिन्दी व्याकरण का काल विभाजन प्रमुख घटनाओं के आधार को दृष्टि में रखते हुए इस प्रकार होना चाहिए—

1. सन् 1000 से 1500 ई७—उद्भवकाल—प्रथम चरण—संक्रान्ति अथवा संक्रमण अथवा सन्धि काल—प्रांकुरण युग—1,
2. सन् 1500-1680 ई०—उद्भवकाल—द्वितीयोन्मेष—संक्रान्ति अथवा संक्रमण अथवा सन्धिकाल—प्रांकुरण युग—2,
3. 1680 ई०-1785 ई०—उद्भवकाल—तृतीयोन्मेष—आकृति—ग्रहण—समुदय युग—1,
4. 1785 ई०-1845 ई०—उद्भवकाल—चतुर्थोन्मेष—उन्नयन, प्रसार एवं विस्तार युग—समुदय—2,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5. 1845 ई०-1895 ई०—विकासकाल—प्रथम चरण—प्रचारकाल—असंयत भाषा प्रयोग युग,

6. 1895 ई०-1935 ई०—विकास काल—द्वितीय चरण—विचार काल—भाषा—संस्कार और समन्वय युग,

7. सन् 1935-1974 ई० विकासकाल—तृतीच चरण—निखार एवं निकष काल—मौलिक विवेचन; शोध तथा परिशोधन—युग ।

डॉ० चौहान का यह काल-विभाजन बहुत अस्पष्ट है । सुविधाजनक तो है ही नहीं । साथ ही 'प्रयोग युग'—'परिशोधन युग' जैसे नाम सर्वथा उचित नहीं हैं । प्रयोग और परिशोधन तो हर युग में मिलता है । अन्त में अपने शोध प्रबन्ध लेखन तक के काल की सीमा वर्ष 1974 ई० तक ही सीमित कर दी है, क्या इसके बाद हिन्दी व्याकरण-लेखन नहीं हुआ अथवा नहीं होगा ?

हिन्दी व्याकरण पर एक और शोध-प्रबन्ध आगरा विश्व विद्यालय की पी० एच० डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत हुआ है, वह है डॉ० कान्तिप्रसाद मिश्र का "खड़ी बोली की व्याकरण रचना के क्रमिक विकास का अध्ययन"[9] इस शोध प्रबन्ध में डॉ० मिश्र ने कुछ नवीन बातें दी हैं और हिन्दी व्याकरण-रचना का काल-विभाजन इस प्रकार दिया है—

(1) आरम्भिक युग (सन् 1872 से पूर्व का युग)

(2) मध्य युग (सन् 1872 से 1900 ई० तक का युग)

(3) वर्तमान युग (बीसवीं शताब्दी)

हमारे विचार से डॉ० कान्तिचन्द्र जैन का यह वर्गीकरण सुविधा की दृष्टि से तो ग्राह्य हो सकता है, लेकिन व्याकरण-रचना के क्रमिक इतिहास की निरन्तर परिवर्तित प्रवृत्तियों और गतिशीलता को पूरी तरह रेखांकित नहीं कर सकता । मात्र तीन युगों में इस लम्बे इतिहास को समेटना न तो पर्याप्त है, न सर्वथा उचित ही ।

उपर्युक्त तीन काल-विभाजनों के परिप्रेक्ष्य में हम हिन्दी व्याकरण-रचना के क्रमिक विकास को इस प्रकार विभाजित करना चाहेंगे—

(1) स्वतन्त्रता से पूर्व का व्याकरण-लेखन (आरम्भ सन् 1280 से 1947 ई० तक)	—आरम्भिक युग (सन् 1150-1680 ई०) —मध्य युग (सन् 1680-1876 ई०)
(2) स्वतन्त्रता-परवर्ती-व्याकरण लेखन (सन् 1947 से वर्तमान समय तक)	—उत्कर्ष युग (सन् 1876-1947 ई०)

9. वर्ष 1968 में प्रस्तुत, अभी अप्रकाशित ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(1) स्वतन्त्रता से पूर्व का व्याकरण-लेखन

भारतीय स्वतन्त्रता से पूर्व का व्याकरण-लेखन तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है—

(अ) **आरम्भिक युग** (सन् 1150 से 1680 ई० तक)—यह वह युग है, जिसमें हिन्दी-व्याकरण-लेखन के आरम्भिक प्रयत्न किए गए। इस युग में मुख्य रूप से दो प्रकार की व्याकरण रचनायें उपलब्ध होती हैं—

(i) क्षेत्रीय बोलियों की व्याकरण-जैसी छोटी-छोटी रचनायें।

(ii) विदेशी विद्वानों द्वारा काम चलाऊ हिन्दी या फ़ारसी सीखने के लिए लिखी गई व्याकरण—रचनाएँ।

आरम्भिक युग की उल्लेखनीय व्याकरण विषयक रचनाओं का काल-क्रमानुसार संक्षिप्त परिचय इस प्रकार देखा जा सकता है—

(1) **'उक्ति-व्यक्ति प्रकरण'** (सन् 1150 ई० के लगभग)—पं० दामोदर कृत यह रचना पूर्वी हिन्दी अर्थात् अवधी के प्राचीन रूपों के सम्बन्ध में व्याकरणिक जानकारी देती है।

(2) **'बाल-शिक्षा'** (सन् 1279 ई०)—संग्रामसिंह द्वारा प्रणीत इस छोटी सी पुस्तक से व्याकरण पर लिखी गई कृतियों की परम्परा का श्रीगणेश माना जा सकता है। यह वस्तुतः राजस्थानी हिन्दी भाषा की बालोपयोगी कृति है, जिसको संस्कृत व्याकरण को जन भाषा में सरलतम ढंग से समझाने का अच्छा प्रयास कहा जा सकता है।

(3) **"मुग्धाबोध औक्तिक"** (सन् 1393 ई०)—कुलमडन सूरि कृत यह पुस्तक भी 'बाल-शिक्षा' की तरह राजस्थानी के द्वारा संस्कृत व्याकरण को सरलता से समझाने के लिए लिखी गई है। यह कृति अनुवाद के रूप में है।

(4) **औक्तिक** (सन् 1445 ई०)—'औक्तिक' वस्तुतः व्याकरण मूलक रचनाओं को कहा जाता है। इसके रचयिता जैन आचार्य सोमप्रभ सूरि थे। इसका रचनाकाल श्री दलाल ने 15वीं शताब्दी निश्चित किया है।

(5) **'उक्ति संग्रह'** (निश्चित समय अज्ञात)—'तिलक' द्वारा रचित यह ग्रन्थ सन् 1445 के आसपास की रचना मानी जाती है। यह रचना भी संस्कृत व्याकरण को राजस्थानी हिन्दी में छोटे-छोटे सरल वाक्यों के माध्यम से समझाने का प्रयास कहा जा सकता है।

(6) **'चाइना इल्लस्ट्रेटा'** (सन् 1667 ई०)—'अथानासी किरचरी' द्वारा रचित यह पुस्तक विश्व की पहली पुस्तक है, जो नागरी लिपि में छपी है। एमस्टरडम से छपी इस पुस्तक में सातवें अध्याय में पाँच प्लेटें हैं, जिनमें पाणिनि का प्रथम सूत्र अ इ उ (अ इ उ—), बारहखड़ी के कुछ रूप दिए गए हैं।

(7) **'तुहफ़तुल-ए-हिन्द'** अर्थात् **'ब्रजभाषा का परिचयात्मक व्याकरण'** (सन् लगभग 1676 ई०)—ईरानी विद्वान् मिर्जा खाँ द्वारा रचित यह पुस्तक भारतीय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आर्य भाषाओं के सही अर्थों में व्याकरण प्रणयन का सूत्रपात करने वाली पहली पुस्तक मानी जा सकती है। मूल पुस्तक का अनुवाद फखरुद्दीन अली मुहम्मद के पुत्र मि० जियाउद्दीन (प्रो० विश्व भारती संस्थान, कलकत्ता) द्वारा फारसी से अँग्रेजी में किया गया, जो 1935 ई० में विश्व भारती प्रकाशन, कलकत्ता से छपा।

इस ग्रन्थ में 4 अध्याय हैं, जो 10 प्रकरणों (न अ) में पल्लवित हैं। इस व्याकरण में देवनागरी की ध्वनियों पर फारसी-अरबी की ध्वनियों के तुलनात्मक विचार के साथ, उनके लिपि चिह्नों का भी संकेत दिया गया है। स्वरों की ह्रस्व, दीर्घ मात्राओं तथा अनुस्वार, विसर्ग, अनुनासिक आदि चिह्नों के नाम निर्देश के साथ संकेतित हैं, किन्तु पारिभाषिक शब्द वे ही हैं, जो उस काल में सामान्य पाठकों में प्रचलित थे, जैसे—कना, घुंडी, पाई, डांड इत्यादि। व्याकरण प्रक्रिया की दृष्टि से अपूर्ण होते हुए भी, पद-विभाग, और पद-वर्त (पदवृत्ति, Sylax) इसकी अपनी मौलिक देन है। व्याकरण लेखन का वास्तविक सूत्रपात करने के नाते इस ग्रंथ का बहुत महत्त्व है।

नोट—इसी युग में 'षट्कारक रचना' (लेखक अज्ञात, समय लगभग सन् 1428 ई०) तथा अमीर खुसरो के कोश ग्रंथ 'खालिगबारी' का भी उल्लेख किया जा सकता है।

(ब) मध्य युग (सन् 1680 ई० से 1876 ई०)—इसे हिन्दी व्याकरण का आकृति ग्रहण युग कहा जा सकता है। इस युग में लिखे जाने वाले अधिकांश व्याकरण ग्रंथ विदेशी विद्वानों द्वारा लिखे गए। अतः स्वाभाविक रूप से उनके लिखने का ढंग अँग्रेजी व्याकरण पद्धति पर निर्भर है। कुछ ग्रथों में वैज्ञानिकता होते हुए भी हिन्दी का गहरा ज्ञान न होने के कारण, भ्रांतियाँ और त्रुटियाँ देखने को मिलती हैं। इस युग में हिन्दी व्याकरण रचना की ओर गम्भीरता से ध्यान देने की प्रवृत्ति हमें मिलती है। परिणामस्वरूप 1855 ई० के आसपास भारतीय विद्वान भी व्याकरण लेखन की ओर सचेष्ट हुए।

इस युग में रचित व्याकरण ग्रंथों की सूची बहुत लम्बी है, कुछ महत्त्वपूर्ण व्याकरण ग्रन्थ इस प्रकार हैं—

(अ) 'हिन्दी के तीन प्रारम्भिक व्याकरण—सन् 1976 ई० में संत पौलुस प्रकाशन इलाहाबाद से मैथ्यु वेच्चुर ने 'हिन्दी के तीन प्रारम्भिक व्याकरण' नाम से एक पुस्तक प्रकाशित कराई है, जिसमें उन्होंने जोहन जोशुवा केटेलर (जो हिन्दी के प्रथम वैयाकरण कहे जाते हैं), बेंजामिन शुल्ज और कैसियानो बेलिगत्ती के व्याकरणों का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है।

ये तीनों कृतियाँ सन् 1650 ने 1800 ई० तक प्रचलित हिन्दी के रूप को हमारे सामने प्रकट करती हैं। इन तीन व्याकरण-पुस्तकों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(1) 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' (हिन्दुस्तानी भाषा) (सन् 1680 ई० अथवा 1698 ई०)।

डा० उदयनारायण तिवारी ने इसे हिन्दी का पहला व्याकरण और इसके लेखक जान जोशुआ केटलर को प्रथम व्याकरण माना है।[10]

केटलर ने यह ग्रन्थ डच भाषा में आगरा में लिखा। बाद में इसका अनुवाद लैटिन में हुआ। हिन्दी में इसके कुछ अंश डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी ने उपलब्ध कराये थे।

(2) 'हिन्दुस्तानी व्याकरण' (ग्रामेटिका हिन्दुस्तानी) (सन् 1745 ई०)।

बेंजामिन शुल्ज ने यह ग्रंथ हैदराबाद में लैटिन में लिखा। इसमें हिन्दुस्तानी के शब्द फारसी और अरबी के वर्णों में छपे हैं। देवनागरी का शब्द और नागरी वर्णमाला का परिचय क से ह तक भूमिका में दिया गया है।

(3) अल्फाबेतुम ब्रह्मानिकुम (सन् 1771 ई०)।

तीसरे नम्बर पर गिने जाने वाला यह व्याकरण ग्रंथ कैसियानो बेलिगत्ती ने पटने में लिखा। इसका सम्बन्ध नागरी लिपि से है। इसमें नागरी लिपि की उत्पत्ति हिब्रू से बताई गई है।

(ब) अन्य व्याकरण—इस युग के कुछ अन्य व्याकरण ग्रथों की कालक्रमानुसार नामानुक्रमणिका इस प्रकार है—

(क) विदेशी लेखकों द्वारा प्रणीत व्याकरण

1. "हिन्दुस्तानी व्याकरण—ग्रामैटिकल रिमार्क्स ऑन दी प्रेक्टिकल एण्ड वल्गी डायलैक्ट ऑफ दी इन्दोस्तानी लैंग्वेज, कामन्ली काल्ड मूर—(कैप्टेन जॉर्ज हैडले, सन् 1772 ई०, लन्दन से प्रकाशित। [इसका पाँचवाँ संस्करण लखनऊ से छपा—"ए कम्पेडियस ग्रामर ऑफ दी करंट करप्ट डायलैक्ट ऑफ दी जार्गन ऑफ हिन्दुस्तान (कॉमनली काल्ड मूर), विद ए वोकेबुलरी इंग्लिश एण्ड मूर्स एण्ड इंगलिश" नाम से]
2. "हिन्दुस्तानी भाषा का कोश" (जोहन फर्गुसन, 1773 ई० दो भागों में। लंदन से प्रकाशित। प्रारम्भ के 58 पृष्ठ हिन्दी भाषा के व्याकरण पर हैं पुस्तक अंग्रेजी में रोमन लिपि में है।)
3. "ग्रामैटिका इन्दोस्ताना" (लेखक अज्ञात। सन् 1778 ई० में पुर्तगाली भाषा में, किन्तु रोमन लिपि में छपा है।)
4. "ए ग्रामर ऑफ द हिन्दुस्तानी लैंग्वेज" (जॉन बॉर्थविक गिलक्राइस्ट, सन् 1796 ई०)।

---

10. डॉ० उदयनारायण तिवारी का लेख, "आचार्य किशोरीदास वाजपेयी और हिन्दी शब्दशास्त्र" ग्रंथ में द्रष्टव्य, पृष्ठ 156।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5. हेरासिम लेबेडेफ का एक सामान्य-सा व्याकरण सन् 1801 ई० में लन्दन से छपा।
6. "द स्ट्रेन्जर्स ईस्टगाइड टु हिन्दुस्तानी" (जॉन बॉर्थविक गिलक्राइस्ट, सन् 1801 ई० में छपी इस पुस्तक में पृष्ठ 1–217 तक व्याकरण और 301–424 तक अंग्रेजी हिन्दुस्तानी कोष है।)
7. "द इंग्लिश एण्ड हिन्दुस्तानी डिक्शनरी विथ ए ग्रामर प्रिफिक्स्ड" (रोएबक, सन् 1811 ई० कलकत्ता से प्रकाशित)।
8. "ए ग्रामर ऑफ द हिन्दुस्तानी लैंग्वेज" (ले०—जॉन शेक्सपियर, सन् 1813 ई० में लन्दन से प्रकाशित)।
9. "हिन्दुस्तानी ग्रामर" (कैप्टेन विलियम प्राइस, सन् 1827-28 में लन्दन से प्रकाशित)।
10. "इण्ट्रोडक्शन टु द हिन्दुस्तानी लैंग्वेज" (लेखक—विलियम येट्स, कलकत्ता से प्रकाशित। तीन खण्ड। प्रथम खण्ड में व्याकरण, दूसरे में कोष तथा तीसरे में अभ्यास के लिए पाठ दिये गये।)
11. "हिन्दी व्याकरण" (लेखक—एम० टी० आदम, सन् 1827 ई० में कलकत्ता से प्रकाशित। हिन्दी भाषा में लिखा गया पादरी आदम का पहला व्याकरण है।)
12. "ए कम्प्रिहेन्सिव सिनॉप्सिस ऑफ द एलिमेण्ट्स ऑफ हिन्दुस्तानी ग्रामर" (ले० विलियम एण्ड्रूड, सन् 1830 ई० में लन्दन से प्रकाशित सामान्य व्याकरण।)
13. "हिन्दुस्तानी ग्रामर" (ले० सेण्डफोर्ड आर्नोट, सन् 1831 ई० में लन्दन से प्रकाशित)।
14. "ग्रामर ऑफ द हिन्दुस्तानी लैंग्वेज विथ ग्रैमेटिकल एक्सरसाइजेज" (जेम्स आर० बैलेण्टाइन, सन् 1838 ई०)।
15. "एलिमेण्ट्स ऑफ हिन्दी एण्ड ब्रजभाषा ग्रामर" (वही, सन् 1839 ई०)।
16. "ए ग्रामर ऑफ द हिन्दुस्तानी लैंग्वेज विथ नोटिसेज ऑफ द ब्रज एण्ड दखिनी डायलेक्ट्स" (वही, सन् 1842 ई०)।
17. "हिन्दुस्तानी मैनुअल" (डङ्कन फोर्बेस, सन् 1845 ई०। लन्दन से। दो भागों में प्रथम भाग व्याकरण, दूसरा भाग कोष।)
18. "ए ग्रामर ऑफ द हिन्दुस्तानी लैंग्वेज" (वही, सन् 1846 ई०)।
19. "ए कन्साइज ग्रामर ऑफ द हिन्दुस्तानी लैंग्वेज" (ले० इ० बी० इस्टविक, सन् 1847 ई० लन्दन के प्रकाशित)।
20. जे० डेटलो प्रोखनों ने सन् 1852 ई० जर्मन भाषा में एक हिन्दी व्याकरण लिखा था, जो बर्लिन से छपा था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

21. 'द ओरिएण्टेलिस्ट्स ग्रामेटिकल वादे-मेकम' (ले०—अलेग्जेण्डर फॉकनर, सन् 1853 ई०, बम्बई से प्रकाशित। इसमें हिन्दुस्तानी, फारसी तथा गुजराती का संक्षिप्त व्याकरण है)
22. "रुडिमेण्ट्स ऑफ हिन्दुस्पानी ग्रामर" (ले०—सर मोनियर विलियम्स, सन् 1858 में कैल्टेनहम से प्रकाशित)।
23. "ए प्रैक्टिकल हिन्दुस्तानी ग्रामर" (ले०—वही, सन् 1862 में लन्दन से प्रकाशित।)
24. "स्टूडेण्ट्स ग्रामर ऑफ द हिन्दी लैंग्वेज" (ले०—विलियम एथरिङ्टन, सन् 1870 में बनारस से प्रकाशित। बहुत लोकप्रिय व्याकरण ग्रन्थ)
25. "ए ग्रामर ऑफ द उर्दू और हिन्दुस्तानी लैंग्वेज।" (ले०—जॉन डाउसन, सन् 1872 ई० में लन्दन से।)
26. "ए कम्पेरेटिव ग्रामर ऑफ द मॉडर्न आर्यन लैंग्वेज ऑफ इण्डिया" (भारतीय आर्य भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण" [ले०—जॉन बीम्स, सन् 1872, 1875 तथा 1879 में क्रमशः 'ध्वनि', 'संज्ञा और सर्वनाम', तथा 'क्रिया' शीर्षक से तीन खण्ड लन्दन से प्रकाशित। बहुत महत्त्वपूर्ण व्याकरण ग्रन्थ माना जाता है।)
27. "ए कम्पेरेटिव ग्रामर आफ द गौडियन लैंग्वेजेज" (गौड़ीय भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण) [ले०—ए० एफ्० रुडोल्फ हॉर्नली, सन् 1880 में लन्दन से प्रकाशित संस्कृत गोत्र की सात भाषाओं—सिन्धी, गुजराती, पंजाबी, हिन्दी, बंगला, उड़िया और मराठी का तुलनात्मक व्याकरण है विशेष महत्त्वपूर्ण है।]
28. "ग्रामेटिका इटालियाना इन्दोस्ताना" [ले०—पेज्जोनी विकारिओ, सन् 1874]
29. "हिन्दुस्तानी ग्रामर" (ले०—जॉन० टी० प्लाट्स, सन् 1874 में प्रकाशित)।

(ख) भारतीय विद्वानों द्वारा प्रणीत व्याकरण

1. पं० श्रीलाल कृत 'भाषा चन्द्रोदय' अर्थात् 'भारतवर्षीय हिन्दी-भाषा व्याकरण' सन् 1855 में प्रकाशित। संस्कृत-व्याकरण के ढाँचे पर लिखा गया प्रथम आदर्श व्याकरण है।
2. 'भाषातत्त्वबोधिनी' (ले० पं० रामजसन सन् 1858 ई० में प्रकाशित)
3. 'कोलोकियल डायलॉग्स इन हिन्दुस्तानी' (ले० मुंशी गुलाम मुहम्मद, सन् 1858 में बम्बई से प्रकाशित)
4. "की टु हिन्दुस्तानी" (ले० हैदर जंग बहादुर, सन् 1861 ई० में लन्दन से प्रकाशित)
5. "नवीन चन्द्रोदय" (ले० नवीन चन्द्र राय, सन् 1868 में प्रकाशित)
6. "शब्द प्रकाशिका" (ले० शीतल प्रसाद गुप्त, सन् 1870 ई० में मुंशी नवल किशोर यंत्रालय लखनऊ से प्रकाशित बहुचर्चित व्याकरण)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

7. "भाषा तत्त्व दीपिका" (ले० पं० हरिगोपाल पाध्ये, सन् 1871 ई० में प्रकाशित)
8. "हिन्दी लघु व्याकरण" (भैरव प्रसाद मिश्र, सन् 1871 में प्रकाशित सामान्य व्याकरण)
9. "भाषादर्श वाल व्याकरण" (ले० दामोदर शास्त्री, सन् 1874 ई० में प्रकाशित सरल व्याकरण)
10. "हिन्दी व्याकरण" (राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द, सन् 1875 ई० में बनारस से प्रकाशित) एक चर्चित व्याकरण।

(स) उत्कर्ष युग (सन् 1876 ई० से 1947 ई०)

स्वतन्त्रता पूर्व के व्याकरण—लेखन में सर्वाधिक प्रगति सन् 1876 ई० से देखने को मिलती है। इस युग में विदेशी लेखकों की प्रेरणा से भारतीय विद्वानों का ध्यान हिन्दी के अच्छे व्याकरणों की रचना की ओर गया। इससे पूर्व मध्य युग में अनेक भारतीय विद्वान् इस ओर क्रियाशील भी हो गये थे, किन्तु अभी वे राष्ट्र-भाषा को एक संतोषजनक व्याकरण नहीं दे पाए थे। अंग्रेजी ढाँचे और संस्कृत-ढाँचे के मेल से आदर्श व्याकरण-रचना की ओर विद्वानों का ध्यान गया उत्कर्ष युग में ही, जिसमें केलॉग का व्याकरण, (1876 ई०), पं० अम्बिका प्रसाद बाजपेयी की 'हिन्दी कौमुदी' (सन् 1919 ई०), पं० कामता प्रसाद गुरु के 'हिन्दी व्याकरण' (सन् 1921 ई०) तथा आचार्य किशोरीदास बाजपेयी के 'ब्रजभाषा का व्याकरण' (सन् 1943 ई०) का समान रूप से महत्त्व है। ये व्याकरण ऐसे हैं जो हिन्दी व्याकरण-रचना के उत्कर्ष को सूचित करते हैं और स्वतन्त्रता के पश्चात् लिखे गये व्याकरण ग्रन्थों को नवीन चेतना प्रदान करते हैं। 'व्याकरण' का वास्तविक प्रणयन इन्हीं ग्रन्थों में मिलता है, इनमें नयी उद्भावनाएँ और नयी चिन्तना विद्यमान है।

इस युग में लिखे गये वैयाकरण और उनके व्याकरण ग्रन्थों की सामान्य सूची कालक्रमानुसार इस प्रकार देखी जा सकती है—

1. एच० एच० केलॉग—सन् 1876 ई०, "ए ग्रामर ऑफ द हिन्दी लैंग्वेज", लन्दन से प्रकाशित। उत्कर्ष युग का प्रथम उल्लेखनीय व्याकरण।
2. अयोध्या प्रसाद खत्री—सन् 1874 ई० में "हिन्दी व्याकरण", बाँकीपुर से प्रकाशित।
3. केशव प्रसाद—सन् 1878 में "भाषा लघु व्याकरण" (2 भाग) छात्रोपयोगी।
4. वंशीलाल—सन् 1879 ई०, "हिन्दी व्याकरण भाग–1, सामान्य छात्रोपयोगी पुस्तिका।
5. गोविन्द देव शास्त्री—सन् 1879 ई० में "बाल-बोध" व्याकरण, मिर्जापुर से छपा।
6. शिवदयाल उपाध्याय—सन् 1881 ई० मे "हिन्दी व्याकरण सार" सामान्य व्याकरण।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

7. पं० बिहारीलाल चौबे—सन् 1881 में "पद वाक्य-बोध" नाम से छोटा-सा व्याकरण।
8. पं० मदन मोहन—सन् 1891, "भाषा व्याकरण सार सुधार्णव"।
9. पं० काली प्रसाद त्रिपाठी—सन् 1880-81, "भाषा व्याकरण-दर्पण।"
10. ई० एच० पामर—सन् 1882, "सिम्लीफाइड ग्रामर ऑफ हिन्दुस्तानी, पर्सियन एण्ड अरेबिक।"
11. जार्ज ए० ग्रियर्सन—सन् 1883-1887 के बीच, "सेवुन ग्रामर ऑफ बिहारी लैंग्वेजेज।"
12. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र—सन् 1884, "प्रथम हिन्दी व्याकरण।"
13. शम्भूलाल कालूराम शुक्ल, सन् 1884, "भाषा चन्द्रिका अर्थात् हिन्दी-भाषा का बाल व्याकरण" सामान्य।
14. बाबू राम चरणसिंह—सन् 1885, "भाषा प्रभाकर।"
15. मोहनलाल शर्मा कटिहा—सन् 1886 ई०, "वैयाकरण रत्न", सामान्य छात्रोपयोगी।
16. दीनानाथ देव—सन् 1886, "हिन्दुस्तानी ग्रामर।"
17. विनायक राव, गणपति लाल चौबे—सन् 1887, "व्याख्या-विधि" (मोड ऑफ पार्जिंग)।
18. हीरानाथ—सन् 1887 ई०, "व्याकरण शब्द चन्द्रिका।"
19. पं० अम्बिका दत्त व्यास—सन् 1890, "विभक्ति विभाग।"
20. महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी—सन् 1890, "हिन्दी-भाषा का व्याकरण'।
21. कन्हैयालाल त्रिपाठी—सन् 1890, "बाल चन्द्रिका"।
22. एम० केम्पसन्—सन् 1890, "द सिण्टेक्स एण्ड इडियम्स ऑफ हिन्दुस्तानी।"
23. कैमिल्लो तेगलिआब्ने—सन् 1892, "ग्रामेतिका इन्दोस्ताना ओ उर्दू" (फ्रेंच में)
24. देवी दयाल—सन् 1892, "भाषा शब्द निरूपण"
25. गोकुल प्रसाद—सन् 1893, "भाषामार्तण्ड" अर्थात् "हिन्दी का एक उत्तम व्याकरण"
26. गौरी शंकर गंगोपाध्याय—सन् 1895 आदर्श हिन्दी व्याकरण कलकत्ते से प्रकाशित।
27. जार्ज एस. ए. रेकिंग—सन् 1895 ए गाइड टु हिन्दुस्तानी, कलकत्ता टेकर स्पिक एण्ड कम्पनी से प्रकाशित। सामान्य व्याकरण। विदेशियों को हिन्दी के हिन्दुस्तानी रूप का परिचय देने के लिए उपयोगी। इसका दूसरा संस्करण 1906 में छपा।
28. ग्रीन (आर्थर—औक्टोवियस) सन् 1895 ए प्रेक्टिकल गाइड टु हिन्दुस्तानी—आक्सफोर्ड से प्रकाशित।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

29. एल. मैकार्थी—सन् 1895 हिन्दुस्तानी ग्रामर कलकत्ता से ।
30. जी. स्माल—सन् 1895 हिन्दुस्तानी ग्रामर कलकत्ता से ।
31. ग्रीब्ज—सन् 1895-96 ए ग्रामर आफ मार्डन हिन्दी बनारस इ. जै. लाजारस एण्ड कम्पनी, अगले कई संस्करण भी निकले । 2. इसके अतिरिक्त नोट्स ऑन दी ग्रामर ऑफ दी रामायन ऑफ तुलसीदास ग्रन्थ भी छपा । 1895 में प्रकाशित ।
32. रामनारायण सिंह—सन् 1897 हिन्दी व्याकरण खड्ग विलास प्रेस बाँकीपुर पटना ।
33. नारायण शास्त्री पटवर्धन—सन् 1897 भाषा चन्द्रिका राजराजेश्वर प्रेस बनारस ।
34. मथुरानाथ—सन् 1898 व्याकरण प्रवेश ।
35. राजाराम—सन् 1897-98 भाषा प्रदीप—बिहार एंजिल प्रेस भागलपुर 1902 में छठा संस्करण ।
36. रुडोल्फ हार्डले, सन् 1899, हिन्दी धातुओं का संग्रह ।
37. पं० कामताप्रसाद गुरु सन् 1900 भाषा वाक्य पृथक्करण नामक ग्रन्थ से गुरु जी द्वारा व्याकरण लेखन का कार्य आरम्भ होता है । क्रम से अनेक व्याकरण ग्रन्थ प्रकाश में आते रहे ।
38. पी. एल. दरियाबसिंह सन् 1901 हिन्दी भाषा व्याकरण सार ।
39. पं० माधवप्रसाद पाठक सन् 1901, हिन्दी बाल बोध व्याकरण आदि अनेक ग्रन्थ 1907 तक प्रकाश में आते रहे ।
40. मोहनलाल—1901 भाषा प्रदीप तथा व्याकरण रत्न ।
41. रे. डब्लू. हूपर—1901 हैल्प टु दी अटेन्मेन्ट ऑफ हिन्दुस्तानी इण्डियन लंदन क्रिश्चियन सोसाइटी फार इण्डिया, 9—ड्यूक स्ट्रीक, अडैलफिक, (इस ग्रन्थ में व्याकरण तथा रचना सम्बन्धी सामग्री भी है) ।
42. राजाराम 1902 भाषा प्रदीप भागलपुरा 1897 में पहले संस्करण के छपने का उल्लेख है । यह काव्य में है ।
43. (अ) यशोदा नन्दन अखोरी 1902-3, वर्णमाला रहस्य (ब) यगल्लो हिन्दी व्याकरण, 1902 ।
44. पं० सूर्यप्रसाद मिश्र 1902 भाषा कुमुद बान्धव, प्रथम कला अर्थात् हिन्दी भाषा का मूल व्याकरण, भार्गव बुक डिपो चौक बनारस से प्रकाशित ।
45. काशीप्रसाद—1903, हिन्दी व्याकरण के कुछ अंशों पर विचार सम्बन्ध कारक तथा अन्य कारकों के चिह्न विवेचित, मिर्जापुर से प्रकाशित ।
46. केन्द्रीय सरकार के प्रयास—1903 (1) फोनेटिक्स तथा प्रारम्भिक प्रिक्विसी इन हिन्दी, (2) हिन्दी परसर्ग ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

47. केशवराम भट्ट 1903, हिन्दी व्याकरण, बिहार बन्धु प्रेस बाँकीपुर से प्रकाशित ।
48. (अ) पाल ह्वाले, 1904, हिन्दी एटिमोलोजीज़, लंदन के टेकर स्पिक एण्ड कं० ।
(ब) बिहारीलाल चौबे, 1904, 78 पृष्ठों का व्याकरण ग्रन्थ । (आ० पु० काशी)
49. दीनानाथ देव—1904 हिन्दुस्तानी एण्ड पर्सियन ग्रामर, कलकत्ता ।
50. आर० पी० डे, 1904 हिन्दुस्तानी एट ए ग्लांस, संक्षिप्त व्याकरण चर्चा, हिन्दी हिन्दुस्तानी का भेद स्पष्ट किया है । दूसरा संस्करण 1906 में छपा । ग्रन्थ चार भाग में विभक्त व्याकरण, वाक्य वार्तालाप तथा कोश ।
51. पन्नालाल बाकलीवाल—1904 लिंग बोध, बेंकटेश्वर प्रेस बम्बई ।
52. बाबू श्यामसुन्दरदास—1906 एन एलिमेन्टरी ग्रामर आफ हिन्दी एण्ड उर्दू, बनारस मेडिकल हाल से प्रकाशित ।
53. गंगाप्रसाद एम० ए० 1906-7 हिन्दी व्याकरण ।
54. मदनमोहन 1906—हिन्दी व्याकरण, आगरा ।
55. माणिकचन्द्र जैन—1907 हिन्दी व्याकरण, इण्डियन प्रेम इलाहाबाद । केवल 56 पृ० अंग्रेजी व्याकरण के ढंग पर छपी । 1925-28 में भी संस्करण निकले हैं ।
56. एच. आर. चैपमैन 1907 हाउ टुलर्न हिन्दुस्तानी, लंदन से छपी ।
57. हाल रोयड (डब्लू० आर० एम०) 1907 हिन्दुस्तानी फार एवरी डे—लाहौर और लंदन से एक साथ छपी ।
58. चार्ल्स स्टीवर्ट 1908, हिन्दी व्याकरण, पुडालौर ।
59. फिल्लोट—1908-9 हिन्दी व्याकरण, लंदन से प्रकाशित वाक्य रचना पर प्रमुखतः विचार ।
60. बद्रीनारायण सिंह, 1909 भाषा दिवाकर, मुंगेर से प्रकाशित ।
61. अगस्ट शरडेल 1910 थेयोरटिस प्रेक्टिशे ग्रामेटिक देरस्प्राखे, जर्मन लोगों के लिए ।
62. पं० रामवतार शर्मा 1910 हिन्दी व्याकरण सार ।
63. पं० कन्हैयालाल उपाध्याय—1910 से व्याकरण लेखन-कार्य आरम्भ, कई ग्रन्थ, (1) हिन्दी व्याकरण प्रवेशिका-निर्णय, सागर प्रेस बम्बई से (2) हिन्दी भाषा का सुलभ व्याकरण 1912 दूसरा भाग 1922 में निकला ।
64. रामकर्ण शर्मा 1910 हिन्दी भाषा का सुलभ व्याकरण, मारवाड़ स्टेट प्रेस जोधपुर से छपा ।
65. टिडसेल—1911 कन्वरसेशनल ग्रामर आफ हिन्दुस्तानी लैंग्वेज, हाइडल वर्ग ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

66. वलेअर—1911 हिन्दुस्तानी भाषा का बोलचाल का ग्रन्थ, लंदन और बोस्टन के साथ-साथ छपा।
67. गोविन्द नारायण मिश्र 1911 विभक्ति विचार, नाहरमल कलकत्ता।
68. पं० रामजीलाल शर्मा 1911—बाल हिन्दी व्याकरण, इण्डियन प्रेस प्रयाग।
69. चन्द्रमुखी ओझा, 1912 भाषा व्याकरण, इण्डियन प्रेस इलाहाबाद, दूसरा संस्करण 1914 तीसरा संस्करण 1927।
70. चन्द्रमौलि शुक्ल 1912 (1) भाषा का व्याकरण प्रथम संस्करण इलाहाबाद (2) हाई स्कूल व्याकरण और रचना, एजूकेशन पब्लिशिंग हाउस बनारस से छपा।
71. बी. एन. दीक्षित—1912 दी शार्ट्रेस्ट हेण्ड बुक आफ ग्रामर बुक।
72. पं० रामजीलाल शर्मा, 1911-12 बाल हिन्दी व्याकरण, प्रयाग से छपी।
73. द्वारिकाप्रसाद शर्मा चतुर्वेदी 1912—(1) हिन्दी व्याकरण शिक्षा नेशनल प्रेस प्रयाग (2) हिन्दी व्याकरण और रचना-भाग 1, 2, 3 भारतीय प्रेस-इलाहाबाद।
74. पं० गदाधर शर्मा वैद्य, 1912 व्याकरण दर्पण, बाबू केदारनाथ भार्गव के प्रबन्ध से ओरियन्टल प्रेस जानसन गंज इलाहाबाद से प्रकाशित।
75. पं० रामदत्त पाण्डेय—1912 भाषा पद्य व्याकरण।
76. बाबू भगवानप्रसाद—1913 हिन्दी व्याकरण (प्राइमरी कक्षाओं के लिए) बनारस कैंट शिवपुर से। (2) भाषा सुधार—1917 महामण्डल प्रेस बनारस सिटी।
77. पं० श्यामजी शर्मा 1913-16 हिन्दी व्याकरण, शिक्षक पटना।
78. अध्यापक रामरत्न—1914 वाक्य विश्लेषण और पद परिचय (2) चिह्न विचार आगरा।
79. पं० विश्वेश्वर दत्त 1914-15 हिन्दी प्रवेशिका, क्रिश्चियन मिशन प्रेस।
80. दिनेशचन्द्र 1914 हिन्दी सिम्पली फाइड इन पर्सियन करेक्टर, कलकत्ता।
81. लाला महादेव प्रसाद 1914-15 लघु सिद्धान्त व्याकरण, मउ, जिला बाँदा से छपा।
82. टेसीटरी 1914 राजस्थानी (डॉ० नामवर सिंह ने हिन्दी अनुवाद किया है)।
83. आचार्य रामलोचन शरण तथा गिरीन्द्र मोहन घोष—1915-18 (1) प्रवेशिका व्याकरण (बोध) (2) हिन्दी रचना चन्द्रोदय 1918, पुस्तक भण्डार पटना (3) रचना चन्द्रोदय। विद्यापति प्रेस लखनऊ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

84. ग्रियर्सन 1916 भारतीय भाषाओं का सर्वेक्षण भाग-8, इस ग्रन्थ में पश्चिमी हिन्दी में व्याकरण पर भी संक्षिप्त किन्तु मौलिक और महत्वपूर्ण चर्चा है।
85. मोहम्मद अकबर खाँ हैदरी 1917 स्टैण्डर्ड हिन्दुस्तानी ग्रामर—यह उर्दू भाषा में होते हुए भी हिन्दी से बहुत मेल रखती है। 1942 तक 14 संस्करण प्रकाशित।
86. पं० रामदहिन मिश्र 1918 प्रवेशिका हिन्दी व्याकरण ग्रन्थमाला कार्यालय बाँकीपुर।
87. जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी 1919 हिन्दी लिंग विचार, भोलानाथ शर्मा कलकत्ता।
88. पं० अम्बिका प्रसाद बाजपेयी 1919 हिन्दी कौमुदी, प्रतापनारायण बाजपेयी द्वारा तीस चासा धोबी पाड़ा स्ट्रीट कलकत्ता, अनेक संस्करण प्रकाशित हुए।
89. बाबू शिवनारायण लाल 1920 ए मैनुअल आफ हायर ग्रामर एण्ड कम्पोजिशन आफ हिन्दी—कार्नवालिस एस्क्वायर कलकत्ता। दूसरा संस्करण 1924 में।
90. पं० गोकुल प्रसाद 1920, हिन्दी डिक्टेशन।
91. प्रो० नारायण प्रसाद 1920 हिन्दी बाल व्याकरण एजुकेशनल बुक डिपो, जयपुर।
92. अमृतलालदास गुप्ता 1921 सरल हिन्दी और हिन्दुस्तानी शिक्षा, हिन्दी और हिन्दुस्तानी को अभिन्न मानकर उसके व्याकरण में से एक।
93. इ० ग्रीब्ज 1922, हिन्दी ग्रामर, विदेशियों द्वारा प्रणीत उत्तम व्याकरणों में से एक।
94. गुरुदयाल शर्मा 1923—(1) लौकिक स्वर सन्धि, (2) वर्णभानु—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ।
95. श्री नारायण चतुर्वेदी 1924, नवीन हिन्दी व्याकरण लखनऊ।
96. बद्रीनाथ भट्ट 1924, हिन्दी व्याकरण पर कुछ विचार।
97. बी० एल० जैन चैतन्य—(1) हिन्दी साहित्य अभियान, सतीशचन्द्र जैन, स्वल्पज्ञान, रत्नमाला, बाराबंकी, (2) संस्कृत हिन्दी व्याकरण अर्थात् शब्द रत्नाकर, बाराबंकी।
98. रामचन्द्र कुशल शास्त्री 1927 हिन्दी व्याकरण।
99. देवीप्रसाद वर्मा, 1927 हिन्दी कौमुदी।
100. शिवनारायण झा—1927 व्यावहारिक भाषा-परिचय दरभंगा से प्रकाशित।
101. बलदेव प्रसाद, भगवानदीन—1928 सरल हिन्दी व्याकरण, पंजाब प्रिंटिंग वर्क्स लाहौर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

102. सुरेश्वर पाठक विद्यालंकार 1929 व्याकरण मयंक, सरस्वती भण्डार पटना।

103. गंगाप्रसाद उपाध्याय—(1) हाईस्कूल हिन्दी व्याकरण, इण्डियन प्रेस इलाहाबाद, (2) नवीन हिन्दी व्याकरण।

104. एस० जी० मोहीउद्दीन कादरी 1930, हिन्दुस्तानी फोनेटिक्स (शोध प्रबन्ध) लन्दन।

105. पं० जंग बहादुर मिश्ररंजन 1930 वाक्य विश्लेषण—हितैषिणी पुस्तक माला-जापली गंज बलिया। दूसरा संस्करण 1933 में छपा।

106. पं० गिरजा शर्मा 1931 व्याकरण भूषण, भार्गव बुक डिपो—चौक बनारस।

107. ब्रजनन्दन मिश्र—1931 सुलभ हिन्दी व्याकरण, हितैषी पुस्तकालय सारन।

108. अज्ञात लेखक द्वारा 1931 मॉडर्न हिन्दी व्याकरण और रचना-तृतीय पुस्तक। नवीन शिक्षण शैली के आधार पर है। इसके संस्करण 1933,40,45 तथा 46 में भी छपे।

109. सत्यप्रकाश 1933 'हिन्दी व्याकरण' प्रयाग विश्वविद्यालय—इलाहाबाद से प्रकाशित।

110. पं० गिरिजा शुक्ल गिरीश तथा बैकेटेश्वर तिवारी 1943, विराम-चिह्न।

111. डा० धीरेन्द्र वर्मा और डा० बाबूराम सक्सैना 1933, नवीन हिन्दी व्याकरण, हिन्दी मन्दिर इलाहाबाद।

112. साहित्याचार्य धरणिधर शास्त्री 1930—(1) हिन्दी व्याकरण, (2) पद्य व्याकरणसार, राजस्थान साहित्य समिति अजमेर से 1942 में छपा।

113. भुवनेश्वर मिश्र 1934 हिन्दी व्याकरण बोध, हिन्दी पुस्तक ऐजेन्सी कलकत्ता।

114. पं० रमानाथ उपध्याय और पं० विष्णुदत्त उपाध्याय 1934 हिन्दी व्याकरण तत्त्व—प्रकाश, इण्डियन प्रेस इलाहाबाद।

115. पं० गणेश प्रसाद द्विवेदी 1934-35 आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना, इसका तीसरा संस्करण 1942 में साहित्य भवन लि० प्रयाग से छपा।

116. चन्द्रहास पाठक 1934 हिन्दी व्याकरण और रचना।

117. गोपाल चन्द्र देव 1934 व्याकरण रत्न।

118. गुलाबचन्द्र जैन 1934 हिन्दी व्याकरण वल्लरी।

119. डा० शिवकुमार सिंह 1935 हिन्दी व्याकरण प्रदीप, द्वितीय प्रकाश।

120. गोकुलचन्द्र पन्त 1935—(1) आदर्श हिन्दी व्याकरण और रचना, ओरियंटल बुक डिपो दिल्ली। (2) व्याकरण प्रदीप।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

121. जी० एल० शर्मा 1,2,3 पुस्तक—नवीन शिक्षण शैली के आधार पर, मॉडर्न हिन्दी व्याकरण और रचना, प्रथम संस्करण 1932 अगले सं० 33,36,40,45 तथा 46 में।
122. पं० रामदेव सुबोध हिन्दी व्याकरण—1936 से पूर्व, 1036 में तीसरा संस्करण संशोधित तथा परिवर्द्धित—हिन्दी भवन, लाहौर।
123. कृष्णचन्द्र विद्यालंकार—1936 हिन्दी व्याकरण, दिल्ली से प्रकाशित।
124. विष्णुपुरी 1936—नवीन मिडिल व्याकरण।
125. धीरेन्द्र वर्मा 1937—ब्रजभाषा, इसका मूल संस्करण अंग्रेजी में है, अगला संस्करण हिन्दी में अनुवादित 1954 ई० में प्रकाश में आया।
126. गोपालशास्त्री दर्शन केसरी 1937—हिन्दी दीपिका, दूसरा संस्करण 1939 में शारदा भवन काशी से प्रकाशित।
127. पं० चतुर्भजदास 1938—व्याकरण प्रवेश।
128. रघुनाथ दिनकर काणे 1938—(1) व्याकरण प्रवेशिका, जबलपुर से छपी। कार्णे एण्ड ब्रादर्स जबलपुर, (2) भाषा वाक्स पृथक्करण, 1939 में जबलपुर से छपा।
129. ललितचन्द्र राणा—1938 सन्धि समास विचार, कोटा से प्रकाशित। इसका दूसरा संस्करण 1941 में प्रकाश में आया।
130. पं० अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी 1938 आधुनिक हिन्दी व्याकरण अर्थात् अभिनव हिन्दी व्याकरण बाजपेयीजी की पूर्व पुस्तक हिन्दी कौमुदी समम-समय पर संशोधित होती रही।
131. पं० चेतराम शर्मा 1939 नूतन हिन्दी व्याकरण,' सैदा मिट्ठा बाजार, लाहौर।
132. पं० महादेवशास्त्री गोखले 1939 हिन्दी का व्याकरण, महाराष्ट्र के छात्रों के लिए।
133. एच० सी० शोलवर्ग—1940 कन्साइज ग्रामर ऑफ हिन्दू लैंग्वेज, ला प्रेस इलाहाबाद से मुद्रित और बम्बई आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस से प्रकाशित।
134. केदारनाथ शर्मा 1941 राष्ट्रभाषा का सरल हिन्दी व्याकरण, विद्या-विलास प्रेस, बनारस से प्रकाशित। दूसरा संस्करण 1953 तीसरा संस्करण 1959 में छपा।
135. ना० नागप्पा 1941 व्यावहारिक हिन्दी दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास से।
136. शिवनाथ 1941 में लिखी गयी हिन्दी कारकों का विकास 1948 में छपी।
137. आत्माराम 1941—विभक्ति संवाद, लुधियाना से प्रकाशित।
138. सत्यजीवन वर्मा 1943, हिन्दी में विराम-चिह्न, शारदा प्रेस प्रयाग से।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

139. आचार्य किशोरीदास बाजपेयी—1943 ब्रजभाषा का व्याकरण, हिमालय एजेन्सी कनखल ।
140. नगरी प्रचारिणी सभा काशी 1943 हिन्दी में कारक चिह्न ।
141. सद्गुरुशरण अवस्थी 1942—हिन्दी व्याकरण, रत्नाकर, साहित्य मन्दिर प्रयाग से ।
142. दयाराम शास्त्री 1944—हिन्दी रचना तथा छन्द प्रयाग से ।
143. बी० पी० जोसेफ—1944 हिन्दी उस्ताद, त्रिचूर से प्रकाशित ।
144. हार्ली—1944 कालोक्विअल हिन्दुस्तानी लंदन से प्रकाशित ।
145. रामचन्द्र वर्मा 1944—अच्छी हिन्दी काशी से ।
146. शिवप्रसाद भारद्वाज शास्त्री 1945 हिन्दी शब्दानुशासन, माधव पुस्तकालय दिल्ली ।
147. गणेशदत्त इन्द्र 1945 अक्षरशास्त्र, लखनऊ से ।
148. वासुदेव पिल्लई 1945 हिन्दी व्याकरण भाग—1,2,3, त्रिवेन्द्रम से प्रकाशित ।

2. स्वतन्त्रता-परवर्ती युग अथवा नवीन चेतना का युग
(सन् 1947 से वर्तमान समय तक)

उत्कर्ष युग (सन् 1876-1947 ई०) के वैयाकरणों ने स्वतन्त्रता-परवर्ती युग को नवीन चेतना का प्रकाश प्रदान किया। इस चेतना से आवृत्त होकर नये उत्साह, नयी स्फूर्ति के साथ हिन्दी के विद्वानों ने राष्ट्र-भाषा हिन्दी के लिए वैज्ञानिक ढंग से व्याकरण लिखे। राष्ट्रभाषा की समृद्धि और विकास के स्तुत्य प्रयासों में से व्याकरण-लेखन भी एक महत्त्वपूर्ण प्रयास है, जो इस युग के वैयाकरण करते दिखाई देते हैं। इस युग को भारतीय संघ की राज-भाषा के रूप में हिन्दी को संवैधानिक मान्यता की प्राप्ति से और भी बल मिला। इस मार्ग से लिए सम्भावित अवरोधों को दूर करने की दिशा में विद्वान् प्राणपण से जुट गये।

व्याकरण को 'उत्कर्ष' तक पहुँचाने में जिन विद्वानों का योगदान है उनमें आचार्य किशोरीदास बाजपेयी का भी नाम आदर के साथ लिया जाएगा। आचार्य बाजपेयी जी अपने 'ब्रजभाषा का व्याकरण' (सन् 1943) के पश्चात् स्वतन्त्रता परवर्ती-युग (नवीन चेतना-युग) का नेतृत्व सम्भालने के लिए कटिबद्ध हो गए।

स्वतन्त्रता-परवर्ती युग के प्रमुख वैयाकरण और उनके व्याकरण-ग्रन्थों की काल क्रमानुसार एक सामान्य तालिका इस प्रकार देखी जा सकती है—

1. "नरदेव विद्यालंकार 1947 राष्ट्र-भाषा का सरल व्याकरण, वर्धा से।
2. मोतीलाल मैनारिया 1947 राजस्थानी व्याकरण।
3. अज्ञात लेखक 1948 बुनियादी हिन्दी व्याकरण।
4. आचार्य किशोरीदास बाजपेयी 1948 अच्छी हिन्दी का नमूना, जनवाणी प्रकाशन, कलकत्ता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5. पं० चन्द्रमौलि शुक्ल 1948 हाईस्कूल हिन्दी व्याकरण और रचना।
6. मुरलीधर श्रीवास्तव 1948 शुद्ध अक्षरी कैसे सीखें, तद्भव शास्त्र आदि कई पुस्तकें।
7. शिवनाथ, हिन्दी का अर्थ तात्त्विक विकास, अर्थ तत्त्व की भूमिका।
8. कृष्णानन्द विद्यालंकार 1949 सक्षिप्त हिन्दी व्याकरण, दूसरा भाग।
9. श्री धरानन्द 1949 संक्षिप्त हिन्दी व्याकरण तथा रचना।
10. डबराल शास्त्री वा० ग० चाह्वाण 1949 राष्ट्रभाषा का व्याकरण दिल्ली से प्रकाशित।
11. पं० हरिहर नाथ 1949 हाईस्कूल व्याकरण चन्द्रोदय, आगरा।
12. शिवपूजन सहाय 1950 'हिन्दी व्याकरण दर्पण' अशोक प्रेस पटना।
13. दुनीचन्द्र 1950 हिन्दी व्याकरण, होशियारपुर, पंजाब से प्रकाशित दूसरा सस्करण 1966।
14. राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी तथा शिवप्रसाद अग्रवाल 1950 शुद्ध हिन्दी।
15. एस० एन० शर्मा 1950 हिन्दी ग्रामर तथा ट्रांसलेशन।
16. सूर्यकान्त 1950 (1) सूर्य हिन्दी व्याकरण, (2) टकसाली हिन्दी, दिल्ली में।
17. स्वामी निगमाचन्द परमहंस 1950 आदर्श हिन्दी, हिन्दी का मौलिक व्याकरण आदि ग्रन्थ। (पुनर्मुद्रण हाल ही में वि० भू० प्रकाशन साहिबाबाद से)
18. वासुदेव नन्दन प्रसाद (1) माध्यमिक हिन्दी रचना, (2) आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना 1959 में छपी। यह पूर्व पुस्तक का परिवर्धित एवं संशोधित रूप है। पटना से प्रकाशित।
19. अवध नन्दन 1950 रोजमर्रा हिन्दी।
20. सुनीतकुमार चटर्जी 1951 (1) भारत की भाषा और भाषा सम्बन्धी समस्यायें, इस पुस्तक में हिन्दी व्याकरण पर भी कुछ विचार हैं, इसका संस्करण 1957 में छपा। (2) हिन्दी व्याकरण प्रवेशिक्षा 1954 में रेवती रंजन सिन्हा तथा सुनीतकुमार चटर्जी का सम्मिलित प्रयास है। (3) ऋतम्भरा इस पुस्तक में हिन्दी व्याकरण की कुछ प्रासंगिक चर्चा है। (4) आर्य-भाषा और हिन्दी मूलतः 1952 में अंग्रेजी में इन्डो-आर्यन लैंग्वज नाम से छपी। अब हिन्दी अनुवाद के रूप में आर्य-भाषा और हिन्दी नाम से उपलब्ध है।
21. एस० आर० शास्त्री 1952 सरल हिन्दी व्याकरण, 5वाँ संस्करण 1954 में निकला।
22. लक्ष्मण स्वरूप पाठक 1952 अभिनव हिन्दी व्याकरण।
23. साधूराम महेन्द्र 1952 नवीन प्रणाली हिन्दी व्याकरण और रचना देहरादून।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

24. उदय नारायण तिवारी 1955 इनके कई ग्रन्थ हैं, जिनमें हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास ग्रन्थ भी एक है। इसमें हिन्दी व्याकरण पर विस्तृत विचार है।
25. के० ए० हमीद 1955 ह्वाट इज़ हिन्दी।
26. देव शर्मा श्यामसुन्दर 1955 नवीन राष्ट्र-भाषा का व्याकरण, इण्डियन पब्लिकेशन अम्बाला।
27. जीवनाथ 1955 सुगम हिन्दी व्याकरण, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।
28. एस० आर० चौधरी 1956 एशंसियल्स ऑफ हिन्दी ग्रामर एण्ड कम्पोजिशन।
29. जे० पी० अग्रवाल 1956 जूनियर हाई स्कूल व्याकरण, भारत भारती प्रकाशन, मुरादाबाद।
30. रघुवीर शरण अग्रवाल, सुबोध हिन्दी व्याकरण 1956, भारत भारती इलाहाबाद।
31. जे० टी० वर्टेन पेज 1956 हिन्दी की संयुक्त क्रियाएँ।
32. नारायण राव 1957 हिन्दी व्याकरण प्रकाश।
33. अमृतलाल दुबे 1957 व्याकरण प्रवेश और रचना, भाग–1 जबलपुर स्टुडेन्ट स्टोर।
34. श्रीधरनाथ मुखर्जी 1957 (1) संक्षिप्त हिन्दी व्याकरण तथा रचना, (2) राष्ट्र भाषा।
35. मिथिरिडेट्स 1957 हिन्दी व्याकरण।
36. आदित्येश्वर प्रसाद कौशिक तथा अन्य 1957 हिन्दी व्याकरण विनोद।
37. मधुकर 1957 माध्यमिक प्रमुख व्याकरण और लेखन, पाठक बुक डिपो, नासिक।
38. शास्त्री तथा आप्टे 1957 हिन्दी ग्रामर।
39. वेदप्रकाश 1957 मेरा हिन्दी व्याकरण।
40. नित्याई सिंह 1957 आर्य हिन्दी व्याकरण, इम्फाल बुक लैंड।
41. शिवराज 1957 मनोरम हिन्दी व्याकरण और रचना।
42. अज्ञात लेखक 1957 सुमेर हिन्दी व्याकरण तथा रचना, दिल्ली, सुमेर ब्रादर्स।
43. अज्ञात लेखक 1957 सुन्दर हिन्दी व्याकरण और रचना, गुरुदयाल एण्ड सन्स।
44. आचार्य किशोरीदास बाजपेयी, 1957 हिन्दी शब्दानुशासन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा से। इसी ग्रन्थ का संक्षिप्त संस्करण 'सरल शब्दानुशासन' के नाम से इसी वर्ष प्रकाशित।
45. आर्येन्द्र शर्मा 1958 हिन्दी का बेसिक (बुनियादी अर्थात् मौलिक अर्थात् आधार) व्याकरण।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

46. हेमलता देवी 1958 हिन्दी व्याकरण संग्राह्य ।
47. रामनाथ सिंह पीयूष तथा प्रो० रामखेलावन राय, 1958 व्याकरण रचना सुधांशु ।
48. श्याम बिहारी लाल, 1958 हिन्दी व्याकरण ।
49. विश्वनाथ राहु, 1958 अरुण हिन्दी व्याकरण तथा रचना ।
50. कैलाश चन्द्र भाटिया की अनेक पुस्तकें, इनमें हिन्दी व्याकरण पर विचार हैं । इनकी एक प्रमुख पुस्तक 'हिन्दी में आगत शब्दों का अध्ययन', 1958 में प्रकाशित ।
51. कुँवर कृष्ण सुखिया, 1959 हिन्दी भाषा की ध्वनियाँ और उनकी शिक्षा ।
52. जगदेव सिंह, 1959 बांगरू भाषा का रचनात्मक व्याकरण, पेंसिल-वेनिया यू० एस० ए० ।
53. भगीरथ प्रसाद दीक्षित, 1959 हिन्दी व्याकरण दीपिका ।
54. भोलानाथ तिवारी, 1958-59 हिन्दी भाषा का सरल व्याकरण दिल्ली से इनकी अनेक पुस्तकें भाषा का विज्ञान तथा हिन्दी भाषा के अध्ययन सम्बन्धी, जिनमें 'हिन्दी भाषा' पुस्तक में विशेष रूप से हिन्दी व्याकरण की विस्तारपूर्वक चर्चा है ।
55. शिवप्रसाद सिंह, 1968 आदर्श हिन्दी व्याकरण ।
56. अल्पनारायण शुक्ल, 1959 व्याकरण प्रवेश ।
57. हरदेव बाहरी, 1959 हिन्दी, सीमेन्टेक्स इलाहाबाद से ।
58. एम० सी० सहगल, 1958-59 मॉडर्न हिन्दी व्याकरण ।
59. एडविन उ० एस०, 1958-59 हिन्दी संरचना का विश्लेषण ।
60. नानकशरण निगम, 1959 हिन्दी भाषा का ध्वनि-मूलक अनुसंधान ।
61. ए० सवा 1960—हिन्दी व्याकरण ।
62. सावित्री शर्मा 1961—अरुण हिन्दी व्याकरण ।
63. मुरारीलाल उप्रैती 1961—हिन्दी प्रत्यय विश्लेषण एवं विचार ।
64. रघुवीर शरण 1962—हिन्दी का रूप वैज्ञानिक और वाक्य वैज्ञानिक अध्ययन ।
65. आत्माराम सखाराम 1962—हिन्दी भाषा प्रकाश, क्रान्ति बुक डिपो, कोल्हापुर ।
66. फूलचन्द नारंग 1962—सुबोध हिन्दी व्याकरण ।
57. मुंशी नवल किशोर 1962—हिन्दी व्याकरण ।
68. पं० नन्द किशोर प्रसाद 1962—हिन्दी व्याकरण और रचना (हिन्दी व्याकरण सार) ।
69. पं० सीताराम चतुर्वेदी तथा पं० शिवप्रसाद मिश्र रुद्र 1962 भाषा-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिक्षण पृ० 122 सं० 201 तक व्याकरण पढ़ाने की पद्धति बतलाई गई है।

70. ब्रजवासी लाल श्रीवास्तव 1963—विराम चिह्न और हिन्दी में उनका प्रयोग।
71. प्रमिला शर्मा 1963—सरल हिन्दी व्याकरण।
72. दक्षिण हिन्दी प्रचार सभा—मद्रास, 1963 हिन्दी और दक्षिणी भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण।
73. सिंगल 1963—कौरवीं का वर्णनात्मक व्याकरण।
74. करुणा त्रिपाठी 1963—(1) व्याकरण ज्योत्स्ना, (2) हिन्दी और क्रियापद, काशी।
75. रामस्वरूप शास्त्री तथा परममित्र शास्त्री 1964 शब्द दर्पण (हिन्दी तथा अंग्रेजी)।
76. कु० बीणा व्यास 1964—शब्द दर्पण अपभ्रंश तथा देशी।
77. डा० रमेशचन्द जैन 1964—हिन्दी समास रचना का अध्ययन।
78. डा० केशवराम "पाल" 1964—हिन्दी में प्रयुक्त संस्कृत शब्दों में अर्थ-परिवर्तन।
79. योगेन्द्र मोहन 1965—नवीन हिन्दी व्याकरण।
80. कृष्णकुमार मिश्र एम० ए० 1965—आदर्श व्याकरण और रचना, शुक्ला बुक डिपो, पटना।
81. देवेन्द्र नाथ शर्मा 1965 राष्ट्र-भाषा हिन्दी : समस्यायें और समाधान इन विद्वान लेखक के कई अन्य ग्रन्थ भी हैं। जिनमें हिन्दी व्याकरण सम्बन्धी कुछ विचार हैं।
82. अम्बाप्रसाद सुमन 1965—हिन्दी भाषा—(1) अतीत और वर्तमान, (2) हिन्दी और उसकी उपभाषायें आदि कई पुस्तकें हैं, जिनमें हिन्दी व्याकरण की प्रासंगिक चर्चा है।
83. गेन्दालाल शर्मा 1965—ब्रजभाषा तथा खड़ीबोली के व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन।
84. लोकनाथ द्विवेदी 1966—हिन्दी व्याकरण कौमुदी।
85. अम्मा एन० सरस्वती 1966—हिन्दी व्याकरण, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
86. डा० ज० म० दीमशित्स 1966—हिन्दी व्याकरण की रूपरेखा, राजकमल प्रेस, दिल्ली।
87. आचार्य किशोरीदास वाजपेयी 1966—हिन्दी शब्दानुशासन का दूसरा संस्करण संशोधित एवं परिवर्द्धित। नये तत्त्वों की उद्भावना भूमिका में दी गई है, शेष ग्रन्थ अपरिवर्तित।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

88. माइदयाल जैन 1966—हिन्दी शब्द रचना, भारतीय ज्ञान-पीठ काशी।
89. बद्रीनाथ कपूर 1966—आजकल की हिन्दी।
90. विश्वनाथ टण्डन 1966—अच्छी हिन्दी--रामा प्रकाशन लखनऊ।
91. यमुना कौचुरू—1967 हिन्दी वाक्य रचना की भूमिका।
92. निगमानन्द परमहंस 1967 राष्ट्र भाषा का शुद्ध रूप।
93. द्वारिकानाथ तिवारी—1966 हिन्दी में लिंग व्यवस्था।
94· सुधा गुप्ता 1967 हिन्दी वाक्य।
95. कैलकर—1967 ए स्टडी इन हिन्दी एण्ड उर्दू, दक्कन कालेज पूना।
96. कोमलसिंह कोलंकी—1967—व्याकरण बोध और हिन्दी रचना।
97. मोहनलाल सहगल 1967 हिन्दी व्याकरण।
98. योगेश सैलानी 1967 हिन्दी व्याकरण का सरलीकरण।
99. प्रो० कावफाक 1967-68 हिन्दी व्याकरण पर कुछ कार्य, हेग से प्रकाशित।
100. राजेन्द्रप्रसादसिंह 1968 शुद्ध हिन्दी कैसे लिखें।
101. विनयमोहन शर्मा 1968 हिन्दी का व्यावहारिक रूप।
102. आचार्य किशोरीदास बाजपेयी 1968 हिन्दी व्याकरण, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ। यह पुस्तक 1948 में प्रकाशित राष्ट्र भाषा के प्रथम व्याकरण का दूसरा संस्करण है।
103. शिवशंकरप्रसाद शर्मा 1969 हिन्दी भाषा की भूमिका, भारती भवन पटना।
104. बद्रीनाथ कपूर 1969 हिन्दी अक्षरी वाराणसी।
105. मुरलीधर श्रीवास्तव 1969 हिन्दी धातु शब्दकोष शब्द लोक प्रकाशन वाराणसी।
106. कृष्ण प्रियदर्शी 1969 नेपाली और हिन्दी का तुलनात्मक व्याकरण।
107. द्वारिकानाथ तिवारी—1969 हिन्दी का मानक रूप।
108. व्यथित हृदय—1970 माध्यमिक हिन्दी व्याकरण और रचना।
109. वचनदेवकुमार—1970 व्याकरण भास्कर।
110. मिल्टनर 1970 थ्योरी आफ हिन्दी सिन्टेक्स।
111. बालमुकुन्द—1970 हिन्दी क्रिया स्वरूप और विश्लेषण आनन्द पुस्तक भवन वाराणसी।
112. सुधा कालरा—1971 हिन्दी वाक्य विन्यास लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद।
113. नागप्पा—1971 अभिनव व्याकरण।
114. करुणापति त्रिपाठी 1971 हिन्दी धातु और क्रियापद ना. प्र. स. वाराणसी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

115. देवेन्द्रनाथ शर्मा तथा रामदेव त्रिपाठी—1971 हिन्दी भाषा का विकास रा० प्र० दिल्ली ।
116. डा० अवधेश्वर अरुण 1971 हिन्दी भाषा का स्वरूप विकास ।
117. रामपति शुक्ल 1971 हिन्दी व्याकरण और रचना ।
118. आर. एस. मकबरे बार—1972 मार्डन स्टेन्डर्ड हिन्दी खड़ी बोली आक्सफोर्ड ।
119. डा० अनन्तलाल चौधरी 1972 हिन्दी व्याकरण का इतिहास, बिहार हि० ग्र० अ० पटना ।
120. कैलाशनाथ शुक्ल 1973 पश्चिमी हिन्दी बोलियों की व्याकरणिक कोटियाँ, इलाहाबाद ।
121. जयकृष्ण 1973 हिन्दी में व्याकरणिक कोटियों का तुलनात्मक अध्ययन, आगरा ।
122. कृष्णगोपाल रस्तोगी—1973 हिन्दी क्रियाओं का अर्थ परक अध्ययन ।
123. डा० हरदेव बपहरी 1973—हिन्दी व्याकरण ।
124. डा० बदरीनाथ कपूर परिष्कृत हिन्दी व्याकरण, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ ।

इनके अतिरिक्त आज तक निरन्तर हिन्दी व्याकरण विषयक ग्रन्थ प्रकाशित हो रहे हैं । नयी शोधपरक सामग्री प्रकाश में आ रही है । शोध कार्य, तुलनात्मक शोधकार्य तथा व्याकरण के विभिन्न अंगों पर स्वतन्त्र रूप से भाषा वैज्ञानिक ढंग से विद्वानों द्वारा कार्य किया जा रहा है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh